स्वर्गीय बाबू बालमुकुन्द गुप्त।

The Indian Art School, Calcutta

॥ श्री: ॥

संक्षिप्त परिचय

मित्रवर पण्डित जगन्नाथ प्रसाद चतुर्वेदीजीने "देवनागर" पत्रमें बाबू बालमुकुन्द गुप्तजीका स्वर्गवास होने पर उनकी जो संक्षिप्त जीवनी प्रकाशितकी थी उससे उनके वंश, जन्म, शिक्षा आदिका परिचय मिल जाता है। इस परिचयमें सबसे पहले उसेही उद्धृत करता हूं ;—

"हिन्दीप्रेमियोंमें ऐसे बहुतही कम लोग होंगे जो स्वर्गीय बाबू बालमुकुन्द गुप्तको न जानते हों। आप हिन्दी भाषाके एक अप्रतिम सुलेखक और समालोचक थे। आप सरल, शुद्ध और चटकीली भाषा लिखनेमें अद्वितीय थे। आपकी कविता भी सुन्दर और मर्म-भेदी होती थी। हिन्दी भाषाके प्रसिद्ध साप्ताहिक समाचार पत्र "भारतमित्र" के आप सम्पादक थे। आप हिन्दीभाषाकी उन्नति के लिये सदा चेष्टा करते थे पर शोक है कि कुटिलकालसे हिन्दीकी उन्नति देखी नहीं गई। गत भाद्रपद शुक्लैकादशी (संवत् १९६४)को दिल्लीमें आपका स्वर्गवास होगया।

बाबू बालमुकुन्द गुप्त हरियाना प्रान्तके रोहतक जिलेके गुरियानी ग्रामके निवासी थे। वहीं गुप्तजीका जन्म मिती कार्तिक शुक्ला ४ संवत् १९२२ को हुआ था। आप अग्रवाल वैश्य थे। आपके पूर्वज दीवान स्थानसे आकर गुरियानीमें बसे थे इससे आप दीवानिया कहलाते थे। आपका वंश "लाला पोते" के नामसे भी प्रसिद्ध है।

गुरियानी पञ्जाबमें है। पञ्जाबमें उस समय उर्दू फारसीकी अधिक चर्चा थी और अब भी है अतएव गुप्तजीको प्रथम शिक्षा

उर्दू और फारसीमें ही दीगई। पीछे आप अङ्गरेजी पढ़नेके लिये दिल्ली आये पर कई कारणोंसे उसमें विघ्न पड़ गया। आप बाल्यावस्थासेही उर्दू समाचार पत्रोंमें लेखादि लिखा करतेथे। लखनऊके प्रसिद्ध "अवधपञ्च" में आपके लेख अधिक छपते थे। "अवधपञ्च" में लिखकर ही आपकी भाषा ऐसी सरस, सरल, गद और चटकीली हो गई थी।

गुप्तजी पहले पहल सन् १८८७ ईस्वीमें मिरजापुर जिलेके चुनारसे प्रकाशित होनेवाले उर्दू पत्र "अखबारे चुनार" के सम्पादक नियत हुए।

सन् १८८८—८९ में चुनारसे लाहौर गये और वहांके उर्दू अखबार "कोहेनूर" का सम्पादन करने लगे। मेरठमें श्रीयुक्त पण्डित दीनदयालु शर्मा तथा और कई महाशयोंके साथ आपने हिन्दी सीखनेकी प्रतिज्ञा की। वह प्रतिज्ञा बहुत शीघ्र पूरी हो गई। १८८९ के अन्तिम भागमें कालाकांकरके दैनिक हिन्दी पत्र "हिन्दोस्थान"से आपका संबन्ध हुआ। उस समय उसके सम्पादक मान्यवर पण्डित मदनमोहन मालवीयजी और प्रसिद्ध पण्डित प्रताप नारायणजी मिश्र थे। मिश्र जीसे हिन्दी सीखनेमें आपको बहुत कुछ सहायता मिली। कुछ दिन हिन्दोस्थानके सहकारी सम्पादक रहकर आप उससे पृथक होगये।

फिर पांच वर्ष पर्य्यन्त "हिन्दी बङ्गवासी" के सहकारी सम्पादक रहे। आपने वहां भी अपनी योग्यताका पूर्ण परिचय दिया। इन्होंने सन् १८९९ में "भारतमित्र" का सम्पादनभार ग्रहण किया और अन्त समय तक उसीसे सम्बन्ध रखा।

"भारत मित्र" में आकर ही गुप्तजी प्रगट हुए। गुप्तजीने "भारतमित्र" की बहुत कुछ उन्नति की। इस विषयमें स्वयं "भारतमित्र" लिखता है—जिस समय गुप्तजीने "भारतमित्र" को अपने हाथमें लिया उस समय इसकी अवस्था बहुत शोचनीय थी। गुप्तजीने अपने अदम्य उत्साह, अपरिमेय साहस, अकथनीय

उद्योग, अनमोल परिश्रम, अक्लान्त चेष्टा और अपूर्व तेजस्वितासे काम करके "भारत मित्र" की वह उन्नति की जो उनसे पहले उस को प्राप्त नहीं हुई थी। उन्होंने "भारत मित्र" का नाम किया और "भारत मित्र" ने उनका, इत्यादि।

गुप्तजीका स्वभाव बड़ा सरल था। वह आडम्बरशून्य और सत्यप्रिय थ। सनातन धर्मके पक्के अनुयायी और धर्मभीरु थे। पुरानी चाल बहुत पसन्द करते थे। प्राचीन लोगोंके बड़े भक्त थे। उनकी निन्दा आप सह नहीं सकते थे। जो अपनी प्रतिष्ठा बढ़ानेके लिये प्राचीन कवि और पण्डितोंके दोष निकालते थे उनसे गुप्तजी बहुत कुढ़ते थे। इसीसे उन लोगोंकी कभी कभी बहुत तीव्र आलोचना कर बैठते थे। जिसके पीछे गुप्तजी पड़ते उसकी धज्जियां उड़ा डालते थे। सच्ची बातें कहनेमें कभी नहीं चूकते थे। आपकी समालोचनासे बहुत लोग डरते थे। आपकी हिन्दी भाषामें बड़ी धाक थी। इतने पर भी वह किसीसे ईर्षाद्वेष नहीं रखते थे। आप निष्कपट और मिलनसार थे।

गुप्तजी बड़े हास्यप्रिय थे; हंसना हंसाना बहुत पसन्द करते थे। बात बातमें हंसी मजाक निकालना तो गुप्तजीके लिये साधारण बात थी। एक बार सरकस देखने मैं उनके साथ गया था। और भी कई लोग साथ थे, ठसाठस भीड़ थी, साथी लोग एक जगह बैठ नहीं सके। कुछ लोग ऊपर और कुछ नीचे गैलरीमें बैठे। गुप्तजी नीचे थे। ऊपर देख कर बोले—"प्रभु तरु तर कपि डार पर". इस पर बड़ी हंसी हुई।

व्यङ्गमयी तीव्र आलोचना, चुटीली, कविता हास्यपूर्ण अथच गम्भीर लेख लिखनेमें आप एकही थे। जो गुप्तजीके विरोधी थे वह भी उनकी लेखन प्रणालीकी प्रशंसा करते थे। गुप्तजीके बहुत मनोरथ थे वह "भारत मित्र" को अर्द्ध साप्ताहिक करके फिर दैनिक किया चाहते थे। एक अच्छा सचित्र राजनीतिक मासिक

लिखना चाहते थे उसका श्रीगणेश भी कर चुके थे, पर शोक
उसे पूरा न कर सके।

गुप्तजीका लिखा तथा अनुवाद की हुई पुस्तकें कई हैं जैसे
(१) मडेलभगिनी (२) हरिदास (३) रत्नावलीनाटिका (४) शिवशम्भु
का चिट्ठा (५) स्फुट कविता (६) खिलौना (७) खेल तमाशा
(८) सर्पाघात, चिकित्सा इत्यादि। शिवशम्भुके चिट्ठे और स्फुट
कवितामें गुप्तजीका देश दशा ज्ञान, स्वदेशानुराग तथा हास्य प्रियता
प्रगट होती है।

गुप्तजीके और भी कई अपूर्ण लेख हैं जो पुस्तकाकार छपनेके
योग्य हैं। गुप्तजी हिन्दी तो जानतेही थे पर उर्दू फारसीके पूरे
आलिम थे। बङ्ग भाषाका अच्छा ज्ञान था, अङ्गरेजीमें भी
अखबारोंके पढ़ने और समझनेका अच्छा अभ्यास हो गया था।
गुप्तजीकी मृत्युसे हिन्दी भाषाकी बड़ी हानि हुई है। देखें इसकी
पूर्ति कब होती है। गुप्तजीकी कुछ बातें आज सुनाई हैं, भगवानने
चाहा तो शीघ्रही एक बृहज्जीवनी भी पाठकोंके अर्पण करूंगा।"

यह स्वर्गीय बाबू बालमुकुन्दगुप्तकी संक्षिप्त जीवनी है। लेखकों
की सच्ची जीवनी वास्तवमें उनके लेखही हैं। उन्हींमें उनके मन
प्राण हृदय चरित्रकी सच्ची छवि प्रकटित रहती है। उन लेखोंके
पढ़नेवालोंको बतादेना नहीं पड़ता कि वह पुरुष किस प्रकारका
मनुष्य था। दूसरे मनुष्योंके कार्य्य जिस प्रकार उनके मन प्राण
आदिके द्योतक हैं उसी प्रकार लेखकोंके लेख उनके सम्पूर्ण जीवनके
उज्वल चित्र बन कर पाठकोंके समीप उपस्थित रहते हैं। लेखक
जीवन भरमें जो कार्य्य करते हैं वे केवल लेखोंके द्वारा प्रकटित उस
चित्रके विकाश हैं।

बाबू बालमुकुन्दके समयवाले "हिन्दी बङ्गवासीमें" उनके चरित्र
का चित्र सुनहरे अक्षरोंमें चित्रित है। उन ६ वर्षोंके समयमें
जितनी जितनी भावराशियां उनके उस समयके जीवनको सूचित
करती थीं वे सब "हिन्दी बङ्गवासी" की उन प्रतियोंमें मुद्रित हैं।
और आगे उनके चरित्रका जैसा जैसा विकाश होता गया वह

"भारत मित्र" के पद्रमें सुशोभित हुआ। उनके लेखोंके पढ़नेवालोंको उनके चरित्रका परिचय देनेका प्रयोजन न रहने पर भी मैं इस संक्षिप्त आलोचनामें उन लेखोंका यत्किञ्चित् विश्लेषण करनेका प्रयत्न करूंगा और मेरे जाननेमें उनके जो दो चार कार्य्य उन लेखोंमें प्रकटित उनके चरित्रके स्थूल विकाश हैं उनका भी उल्लेख मुझे यहां करना है।

बाबू बालमुकुन्दके समयके 'हिन्दी बङ्गवासी' और 'भारतमित्र' के पढ़नेवाले उनकी तेजस्विता, मित्रोंके साथ निष्कपट मित्रता शत्रु-शासनकी निर्भ्रम राजसिकता और सर्वसाधारण पर हार्दिक करुणा तथा सबसे बढ़ कर अटल धर्म्मप्राणताका सजीव चित्र उनकी लिखी हुई प्रत्येक पंक्तिमें अनुभव कर लेते हैं। येही गुणावली बाबू बालमुकुन्दगुप्तकी सच्ची जीवनी है। और उन लेखोंकी छवि जितने दिन लोगोंके हृदयमें खिंची रहेगी उतने दिन इन गुणोंके सबसे अधिक स्थूल विकाश रूपी शरीरका अन्तर्धान हो जाने पर भी बाबू बालमुकुन्द अपने सच्चे स्वरूपमें उन लेखोंके पढ़नेवालोंके मानस क्षेत्रमें जीवित रहेंगे।

बाबू बालमुकुन्दकी तेजस्वीप्रकृतिके अनेकानेक कार्य्य मेरे सामने आचरित होने पर भी मैं केवल इस संक्षिप्त आलोचनामें दो हीका उल्लेख करूंगा। उनमेंसे एक उनके "हिन्दी बङ्गवासी" के कार्य्य में नियुक्त होनेके समयका है और दूसरा उनके उस कार्य्यसे विदा लेनेके समयका। उन दिनों "हिन्दी बङ्गवासी" की प्रति संख्यामें एक चित्र प्रकाश हुआ करता था। बार बार चित्र बनवानेकी कठिनाईसे पार पानेके लिये बङ्गवासी आफिसके पहलेके बने हुए चित्र परिचयसूचक कुछ कुछ लेखके साथ समय समय पर प्रकाशित किये जाते थे। गडेस्मभगिनी नामक बड़ी बंगला पुस्तकमें जो १५—१६ चित्र हैं वे उन दिनों क्रमानुसार उस पत्रमें प्रकाशित होने लगे थे और उस हृहत् पुस्तककी बड़ी कहानी उन चित्रोंकी परिचय रूपी छोटी छोटी दस बीस रेखाओंमें बन्द डालनेका प्रयत्न

किया जाता था। उन दिनों मेरे सर्वथा अपरिचित बाबू बालमुकुन्द गुप्तकी एक चिट्ठी उन चित्रोंके सम्मिलित लेखोंकी आलोचनामें आई। उसमें गुप्तजीने उन लेखोंका ऐसा कठोर खण्डन किया था कि इतने दिन बीतने पर भी उनकी उस तेजस्विनी भाषाकी पंक्ति पंक्ति मुझे स्मरण है। उन्होंने लिखा था—"साहित्यकी मर्यादा बिगाड़नेवाला वह कौन मनुष्य है जो मडेलभगिनी उपन्यासकी मट्टी खराब कर रहा है?" तेजस्विताही सम्पादकोंकी विशेषता है। सो उस तेजस्वी पुरुषको "हिन्दी बङ्गवासी" में लाकर उसका गौरव बढ़ानेका प्रयत्न किया गया।

उनकी तेजस्विताके कार्य का दूसरा परिचय उनके "हिन्दी बङ्गवासी" से अलग होनेमें है। "हिन्दी बङ्गवासी" के स्वर्गीय मालिक महोदय सर्वसाधारणके हितार्थ "धर्मभवन" नामक धर्मशाला आदि बनवानेमें उद्यत हुए थे। उन दिनों सुप्रसिद्ध हिन्दी-रसशिरोमणि पण्डित दीनदयालुजीसे कुछ अनबन होजानेसे "हिन्दी बङ्गवासी" में उनकी निन्दा करना निश्चय हुआ था। उस समय बाबू बालमुकुन्दको हिन्दी बङ्गवासीसे जो मासिक तनखाह दी जाती थी वह हिन्दीकी इस पुष्ट दशामें भी अल्प ही हिन्दी लेखकोंको मिलती होगी। बाबू बालमुकुन्दके परिवार पालनके लिये उस धनकी बड़ी भारी आवश्यकता रहने पर भी उन्होंने उसकी कुछ भी परवा नहीं की। साफ बातोंमें कह दिया कि पण्डित जीसे मेरी मित्रता बड़ी घनी है; "हिन्दी बङ्गवासी" में उनकी निन्दा होनेसे मुझे उसकी सेवासे अलग होना पड़ेगा। तेजस्वी पुरुषने ऐसाही किया। हिन्दी बङ्गवासीमें पण्डितजीकी निन्दाका लेख लिखे जानेके दिनही बङ्गवासीके कार्य कर्त्ताओंसे इस तरह वे हिन्दी बङ्गवासीके कार्यसे अलग हुए। मित्रताकी र रखनेके लिये उन्होंने प्रति मासकी आवश्यकीय बड़ी आय पर पदाघात किया।

हिन्दुस्तान निकालनेके लिये आर्योंकी निमन्त्रणसे निष्कपट

मित्रताका लक्षण है। बाबू बालमुकुन्दके उस गुणकी उज्ज्वल छवि पण्डित दीनदयालु सम्बन्धी उक्त बर्तावमें प्रकटित होनेके उपरान्त मुझे भी उनकी उस मधुर प्रकृतिका निर्मल रस अनेक बार आस्वादन करनेका अवकाश मिला। जिस समय मैं उनके मित्रकी विरुद्धता करनेवाले "हिन्दी बङ्गवासी" के कार्यमें नियुक्त रह कर उनके निर्मम राजसिक आघातका निशाना बन रहा था उस समय मुझे एकाएक 'हिन्दी बङ्गवासी' से अलग हो कर परिवार पालनके लिये अन्धकार देखना पड़ा था। मेरे उस दुर्दिनमें स्वकीय उदार प्रेरणासे मेरी जीविकाका यथाशक्ति प्रबन्ध कर बाबू बालमुकुन्दने विपद्ग्रस्त मित्रको गले लगा लेनेकी अपनी निष्कपट मित्रतापूर्ण अनुपम प्रकृतिका परिचय दिया। और पारस्परिक कठोर आक्रमणसे जिन पण्डित माधव प्रसाद मिश्रसे बाबू बालमुकुन्दकी पूर्व मित्रता स्वाहा हो जानेका अनुभव "भारत मित्र" के पाठकोंको प्रायः प्रति संख्याहीमें हो रहा था उनका देहान्त होजातेही मित्रता मन्दाकिनीकी अमृत-धारा शत्रुताके विशाल हिमालयका पाषाणपट्ट भेदकर प्रवाहित हुई। बालमुकुन्द रोये, हृदय खोलकर रोये, अनुतापके अङ्गारसे जलकर हृदयके अन्तस्तलसे उठती हुई अपार अश्रुधारासे भीग गये।

उनकी उस करुणामयी प्रकृतिके अमृत फल रूपी स्वच्छ अश्रु जलका प्रत्यक्ष चिन्ह एक बार मेरे साथके बर्तावमें भी पतित हुआ था। कितनेही दिन बीत गये हैं; किन्तु अबतक भी उनकी वह अश्रुजलमयी करुणापूर्ण मूर्ति मेरे मन नयनमें लगी हुई है। मुझे एक बार एक सज्जनका जामिन बन कर उनका कर्ज अदा करनेमें असमर्थ होनेसे दीवानी जेल जाना पड़ा था। जिनके कर्जके लिये मुझ पर यह दुर्गति आपड़ी थी उनके समर्थ सहोदरोंको मैंने जो उदास अन्तिम चिट्ठी लिखी थी उसमें मार्मिक कवि कालिदासका निम्न लिखित श्लोक था—

दारिद्राय नमस्तुभ्यं सिद्धोऽहं यत् प्रसादतः।
जगत् पश्यामि येनाहं मां न पश्यन्ति केचन॥

किन्तु किसीका न देखना पीछे सत्य नहीं निकला। जिसने
वह वही मेरा चिरमित्र दरिद्र वैश्यकुमार था। हृदयकी मारी
लेकर वह बिलखता हुआ जेलखानेके दरवाजेपर पहुंचा और
के मर्मस्थलसे निकलते हुए अश्रु जलसे भीगता हुआ
बातोंमें कहने लगा—"आपकी यह दशा सही नहीं ज
बस गला रुक गया ; कहनेकी बात कण्ठहीमें रह गई। नि
आंसुओंसे मेरी उस दशा पर बाबू बालमुकुन्दने जिस करुण
प्रकृतिका सजीव स्वर्गीय उदाहरण दिखाया वह मुझे फिर
देखनेका सौभाग्य नहीं हुआ। केवल उस अश्रुजलसे ही
बालमुकुन्दका सुभ पर वह करुणावेग समाप्त नहीं हुआ।
प्रबन्धसे न उस कारागारमें मेरे भोजन शयनादिका कोई क्लेश
रहा और न मेरे परिवारके लोगोंको अन्न कष्टकी प्रचण्डता भ
पड़ी।

अवश्यही अनेक लोग बाबू बालमुकुन्दके तीव्र लेखोंका
कशाघात सह चुके हैं। किन्तु जिसके हृदयमें उतनी क्षमा व
विद्यमान हो उसको इस कठोरताकी आलोचना विशेष धीर
चित्तसे करनी होती है। बाबू बालमुकुन्द अपने कुलके सर्व
ब्राह्मणका सत्व गुणावलम्बी होना जैसा स्वाभाविक है, क्षत्रिय
वैश्यका रजोगुणावलम्बी होना वैसाही स्वाभाविक है। रजोगु
स्वभाव दण्ड उठाये हुए शत्रुको कभी क्षमा न करनेका है।
बालमुकुन्दकी शत्रुता उसी प्रकृतिकी थी। और उस शत्रु
निन्दनेवालेकी दुरवस्था देखनेसे उनका शत्रुताके समय वज्र
कठोर बना हुआ हृदय फूलसे भी कोमल बनकर उनके कुलध
परिचय देता था।

जिस चरित्रमें गुण धर्मोंका ऐसा अनुपम विकास हो उ

धर्म-प्रायणताके कुछ अधिक परिचयका प्रयोजन नहीं है। केवल इतनाही कहनेसे यथेष्ट होगा कि सनातन धर्मके जो पवित्र सिद्धान्त उनके हृदयमें बद्धमूल हो चुके थे सबल घातकके निष्ठुर कुठाराघातसे भी वे कभी कुछ भी टलते नहीं थे। कितनीही बार देखा है कि शास्त्रीय वचनोंके कदर्थ करनेवाले अपने कण्ठ किये हुए श्लोकोंको धोखारसे संस्कृतके अनभिज्ञ बाबू बालमुकुन्दको जब पछाड़ना चाहते थे तब विषम क्रोधसे उनकी भौंहें चढ़ जाती थीं शरीर थर थर कांपने लगता था। उनकी बातोंका खण्डन करनेमें असमर्थ होने पर भी बाबू बालमुकुन्द गुप्तके अपरिदर्शित सच्चे धर्मभावमें एक मुहूर्तके लिये भी कुछ भी चञ्चलता उपस्थित नहीं होती थी।

अब बाबू बालमुकुन्द गुप्तके हिन्दी साहित्यकी उन्नति विषयक प्रयत्नके सम्बन्धमें दो चार बातें कहकर इस संक्षिप्त लेखको समाप्त करूंगा। जिस समय उन्होंने "हिन्दी बङ्गवासी" में आकर हिन्दी लिखनेमें परिश्रम करना आरम्भ किया था उस समयकी हिन्दीसे वर्त्तमान हिन्दीकी तुलना करनेवाले निःसङ्कोच कह देंगे कि हिन्दी भाषाके लिये मानो युगान्तर उपस्थित हुआ है। अवश्यही उससे बहुत पहले आधुनिक हिन्दीके पिता स्वरूप स्वर्गीय बाबू हरिश्चन्द्र मार्जित हिन्दीका उत्तम आदर्श छोड़ गये थे; किन्तु उस समयके लेखक प्राय: किसी आदर्शके अवलम्बनसे भाषा लिखकर भाषाकी भविष्य श्रीवृद्धिके लिये प्रयत्न करनेका लक्षण नहीं दिखाते थे। सब अपनी अपनी डफली अलग बजाते हुए भाषामें एकता लानेके बदले अनैक्य बढ़ानेमेंही बहादुरी समझते थे। अबभी एकाध ऐसी विचित्र प्रकृतिके लेखक नहीं मिलते हैं, ऐसा नहीं; किन्तु इस समयकी लेख-शैलीमें बहुत कुछ एकता देखी जाती है। बङ्गालसे लेकर बिहार, संयुक्त प्रान्त, पंजाब, मध्यप्रदेश, राजस्थान—प्रत्येक हिन्दी भूमिकी हिन्दी अब बहुत कुछ एकही लेखककी लेखनीसे निकली हुई

भाव इस परिवर्त्तनका अनुभव करते होंगे। इस परिवर्त्तनमें बाबू बालमुकुन्दका परिश्रम साधारण नहीं है।

जिस समय बाबू बालमुकुन्द गुप्त हिन्दी बङ्गवासीमें आये उस समय स्वर्गीय पण्डित प्रभुदयाल पांड़े, स्वर्गीय गुप्तजी और मैं—इन तीन भिन्न भिन्न प्रान्तीय भाषा भाषियोंका विचित्र सम्मिलन हुआ। इनमें स्वर्गीय गुप्तजी दिल्लीप्रान्तके और स्वर्गीय पांड़ेजी व्रजमण्डलके —दोनोंही सुघड़ हिन्दी बोलनेवाले थे और मैं एक तो बङ्गाली हूं दूसरे जो कुछ हिन्दी बोल लेता था वह न बिहार न युक्तप्रान्त—दोनोंके मध्यस्थलकी एक प्रकारकी खिचड़ी हिन्दी होती थी। कदाचित् इन भिन्न भिन्न भाषा भाषियोंका एकत्र हिन्दी लिखनेमें आरूढ़ होना हिन्दी भाषाके लिये कुछ लाभकारी हुआ। तीनोंके नव यौवनका प्रायः सारा आवेग लिखित-हिन्दी भाषाको सुघड़ बनानेमेंही खर्च होता था। किसी किसी दिन एकही शब्दके पीछे दो दो तीन तीन बजे रात तक तीनोंमें कठिन लड़ाई होती थी। इस प्रकारसे हिन्दीभाषा सम्बन्धी कितनेही झगड़े उस समय तीनों आपसमें तय कर लेते थे और आज दिन उन तय किये हुए सिद्धान्तोंके अनुसार हिन्दीके प्रायः सभी वर्त्तमान लेखक अपनी भाषा निःसङ्कोच गठित करते हैं। इस विषयमें स्वर्गीय पांड़े जी और स्वर्गीय गुप्तजी जो परिश्रम कर गये हैं उसके साक्षी स्वरूप मैं बना हुआ हूं। दोनोंसे उम्रमें बड़ा होनेसे जहां मुझे पहले चल बसना था तहां वेही सिधार चुके हैं। हिन्दी भाषाके लिये शरीरान्तकारी परिश्रम करनेवाले वे दोनों धुरन्धर हिन्दी लेखक माताके चरणारविन्दमें नित्य नये नये फूलोंका उपहार चढ़ानेसे मुंह मोड़ कर स्वर्गीय कोविद समाजमें साहित्य स्रष्टाओंके सुरुचिर सिंहासनों पर आरूढ़ हो चुके हैं और उनके असामान्य परिश्रमकी गवाही देनेके लिये यह अकिञ्चित्कर बङ्गाली हिन्दी लेखक अब विद्यमान रह कर अपनी बेसुरी तान छेड़ रहा है।

स्वर्गीय बाबू बालमुकुन्द गुप्त बहुत हिन्दी लिख गये हैं।
हिन्दी बङ्गवासी" और "भारतमित्र" में उनके लिखे हुए लेखों
ो इकट्ठा करनेसे महाभारतसे कहीं बड़ा ग्रन्थ बन जासकता है।
दि और कुछ दिन जीवित रहकर वे अपने आरम्भ किये हुए इस
हन्दी साहित्य विषयक इतिहास ग्रन्थको समाप्त कर जाते तो यह
वश्यही उनकी इस विशाल लेखराशिसे कोई अधिक प्रशंसनीय
दार्थ नहीं होता। किन्तु तथापि यह पुस्तक एक समाप्त करनेही
ग्य वस्तु थी। जब उन्होंने इस पुस्तकका लिखना आरम्भ किया था
ब हम दोनों अलग अलग रहते थे; किन्तु एकबार एकत्र होनेपर
न्होंने इसे पढ़ कर सुनाया था और इसका लिखना आरम्भ करनेसे
हले तथा उस बार एकत्र होने पर उनसे इसके विषयमें जो बातें
ईं थीं उससे मुझे स्पष्ट हुआ था कि यह ग्रन्थ दूसरी सफाईकी
ांति बाबू बालमुकुन्द गुप्तके सम्पूर्ण लेखोंमें श्रेष्ठ होगा और
हन्दी साहित्यके सर्वाङ्गसुन्दर इतिहासकी जो कमी है वह
सके द्वारा हिन्दी रसिकोंका शुद्ध बढ़नेके साथ साथ पूरी हो
ायगी।

किन्तु सर्वग्रासी कालने उनकी यह इच्छा पूरी होने नहीं दी।
पनी कल्पित पुस्तककी भूमिका पूरी कर वह उसके कई पृष्ठ
ात लिख चुके थे, तबतक पुस्तकका नामकरण भी नहीं हुआ था
क इतनेमें उनका देहान्त होगया। अब यदि पिताकी
ारम्भ कीहुई कादम्बरी समाप्त करनेवाले पुत्रकी भांति स्वर्गीय
ाबू बालमुकुन्द गुप्तके किसी पुत्र द्वारा यह कार्य पूरा हो तो यह
ाम उनके कुलहीमें रहेगा। गुप्तजीके व्यवसायी पितृकुलसे उनको
विद्याभ्यासमें बाधा मिलती थी; किन्तु उन्होंने अपने ज्येष्ठ पुत्र चिरञ्जीव
नवलकिशोर गुप्तको विद्या पढ़ानेमें धनकी कभी कमी नहीं की।
ह बालक होने पर भी नवलकिशोरके द्वारा भारतमित्र कार्यालय
े प्रबन्धकर्त्ताके काम काज योग्यतासे सम्हाले जारहे हैं। जिसमें
ी अनुराग उदित होरहा है। सो यह आशा मानो स्वाभाविक

होने पर भी एकबार ही असम्भव नहीं है। हार्दिक आशीर्वाद है कि पाठक नवलकिशोरके द्वारा श्रेष्ठ हिन्दी लेखक स्वर्गीय बालमुकुन्द गुप्तकी यशोराशि वर्द्धित हो।

भारतमित्र कार्यालय, कलकत्ता।
चैत्र शुक्ला १० संवत् १९६५

अमृतलाल चक्रवर्ती

॥ ओ: ॥

भूमिका।

वर्तमान हिन्दी भाषाकी जन्मभूमि दिल्ली है। वहीं व्रज भाषा से यह उत्पन्न हुई और वहीं उसका नाम हिन्दी रखा गया।

आरम्भमें उसका नाम रेख़ता पड़ा था। बहुत दिनों यही नाम रहा। पीछे हिन्दी कहलाई। कुछ और पीछे इसका नाम उर्दू हुआ। अब फारसी वेषमें अपना उर्दू नाम ज्योंका त्यों बना हुआ रख कर देवनागरी वर्णोंमें हिन्दी भाषा कहलाती है।

हिन्दीके जन्म समय उसकी माता व्रजभाषा खाली भाषा कहलाती थी। क्योंकि वही उस समय उत्तर भारतकी देश भाषा थी। पर बेटीका प्रताप शीघ्रही इतना बढ़ा कि माताके नामके साथ व्रज शब्द जोड़नेकी आवश्यकता पड़ी। क्योंकि कुछ बड़ी होकर बेटी भारतवर्षकी प्रधान भाषा बन गई और माता केवल एक प्रान्तकी भाषा रह गई। अब माता व्रजभाषा और पुत्री हिन्दी भाषा कहलाती है।

यद्यपि हिन्दीकी नींव बहुत दिनोंसे पड़ गई थी, पर इसका जन्मस्थान शाहजहांके समयसे माना जाता है। मुगल सम्राट शाहजहांके बसाये शाहजहानाबादके बाजारमें इसका जन्म हुआ। कुछ दिनोंतक यह निरी बाजारी भाषा बनी रही। बाजारमें जन्म लेनेसे ही इसका नाम उर्दू हुआ। उर्दू तुर्की भाषाका शब्द है। तुर्कीमें उर्दू लश्कर या छावनीके बाजारको कहते हैं। शाहजहानी लश्करके बाजारमें उत्पन्न होनेके कारण

उसका नाम "हिन्दी" भी मुसलमानोंका रखा हुआ है। हिन्दी फ़ारसी भाषाका शब्द है। उसका अर्थ है हिन्दसे सम्बन्ध रखनेवाली अर्थात् हिन्दुस्तानकी भाषा। व्रजभाषामें फारसी अरबी तुर्की आदि भाषाओंके मिलनेसे हिन्दीकी सृष्टि हुई। उक्त तीनों भाषाएँ विजेता मुसलमान अपने देशोंसे अपने साथ भारतवर्षमें लाये। सैकड़ों साल तक मुसलमान इस देशमें फारसी बोलते रहे। फा़र्सी के विजेताओंहीका इस देशमें अधिक बल रहा है। अरबी तु बोलनेवाले बहुत कम थे। जब इन लोगोंकी कई पीढ़ियां इस देश में बसते होगईं तो इस देशकी भाषाका भी उन पर प्रभाव हुआ भारतकी भाषा उनकी भाषामें मिलने लगी और उनकी भा भारतकी भाषामें युक्त होने लगी। जिस समय यह मे होने लगा था उसे अब छः सौ बर्षसे अधिक होगये। आरम्भमें य मिलजोल सामान्य सा था। धीरेधीरे इतना बढ़ा कि फारसी औ व्रजभाषा दोनोंके संयोगसे एक तीसरी भाषा उत्पन्न होगई। उस नाम हिन्दी या उर्दू जो चाहिये सो समझ लीजिये। फार भाषाके कवियोंने इस नई भाषाको शाहजहानी बाजारमें घनाः बस्तोंमें इधर उधर फिरते देखा। उन्हें इसकी भोली भाली सूर बहुत पसन्द आई। वह उसे अपने घर लेजाकर पालने लगे। उ ने ही उसका नामकरण किया और उसे रेख़ता कह कर पुकार लगे। औरङ्गजेबके समयमें उक्त भाषामें कविता होने लगी मुहम्मद शाहके समयमें उन्नति हुई और शाह आलम सानीके सम में यहांतक उन्नति हुई कि बहुतसे अच्छे अच्छे कवियोंके सि स्वयं बादशाह उक्त भाषामें कविता करने लगे और एक नामी क कहलाये। कितनेही हिन्दू कवि भी इस भाषामें कविता करनेलगे साधु महात्माओंके कुटीर तक भी इसका प्रचार होने लगा वह अप भगवद्भक्तिके पद इस भाषामें रचने लगे।

मुसलमानी अमलदारीमें इस भाषामें केवल फारसी ... ...ो कविताही होती रही। गद्यकी उस समय तक कुछ ...

न पड़ी। जब अङ्गरेजोंके पांव इस देशमें जम गये और मुसलमानी राज्यका चिराग ठंडा होने लगा तब इस भाषामें गद्यकी नीव पड़ी। गद्यकी पहली पोथी सन् १७९८ ई०में लिखी गई। सन् १८०२ ई० में जब दिल्लीमें "वागोवहार" नामकी पोथी तय्यार हुई तो गद्यकी चर्चा कुछ बढ़ी। यहांतककि हिन्दुओंकाभी इधर ध्यान हुआ। कवि-वर लल्लूलालजी आगरा निवासीने अगलेही वर्ष सन् १८०३ ई० में प्रेमसागर लिखा। मुसलमान लोग अपनी पोथियां फारसी अक्षरोंमें लिखते थे लल्लूलालजीने देवनागरी अक्षरोंमें अपनी पोथी लिखी। पर दुःखकी बात है लल्लूजीके पीछे बहुत काल तक ऐसे लोग उत्पन्न न हुए जो उनके दिखाये मार्ग पर चलते और उनके किये हुए कामकी उन्नति करते। इसीसे उनका काम जहांका तहां रह गया। देवनागरी अक्षरोंमें प्रेमसागरके ढङ्गकी नई नई रचनाएं करनेवाले लोग साठ साल तक फिर दिखाई न दिये। उधर फारसी अक्षरों वाले उन्नति करते गये। गद्यमें उन्होंने और भी कितनीही पोथियां लिखीं। पीछे सन् १८३५ई०में उनके सौभाग्यसे सरकारी दफतरोंमें फारसी अक्षरोंके साथ हिन्दी जारी हुई। इससे नागरी अक्षरोंको बड़ा धक्का पहुंचा। उनका प्रचार बहुत कम हो चला। जो लोग नागरी अक्षर सीखते थे वह फारसी अक्षर सीखने पर विवश हुए। फल यह हुआ कि हिन्दी भाषा हिन्दी न रह कर उर्दू बन गई। हिन्दी उस भाषाका नाम रहा जो टूटी फूटी चाल पर देवनागरी अक्षरोंमें लिखी जाती थी। न वह नियमपूर्वक सीखी जाती थी और न उसके लिखनेका कोई अच्छा ढङ्ग था। कविता करनेवाले ब्रजभाषामें कविता करते हुए पुरानी चाल पर चले जाते थे जो अब भी एकदम बन्द नहीं हो गई है। गद्य था तो आपस की चिट्ठी पत्रियोंमें बड़े गंवारी ढंगसे जारी था या कोई एक आध गुमनाम वेढङ्गी पोथीमें दिखाई देता था।

पचास सालसे अधिक हिन्दीकी यही दशा रही। उसका नाम निशान मिटनेका समय आगया। इसके साथही साथ देव-

नागरी अक्षरोंका प्रचार एकदम उठचला था। देवना अक्षरोंमें एक छोटी मोटी चिट्ठी भी शुद्ध लिखना लोग भूल थे। उर्दूका जोर बहुत बढ़ गया था। अचानक समयने प खाया। कुछ फारसी अंगरेजी पढ़े हुए हिन्दू सज्जनोंके हृद यह विचार उत्पन्न हुआ कि फारसी अक्षरोंका चाहे कित प्रचार हो जाय और सरकारी आफिसोंमेंभी उनका कैसाही अ बढ़ जाय, सर्व्वसाधारणमें फैलनेके योग्य देवनागरी अक्षरही स्वर्गीय राजा शिवप्रसादकी चेष्टासे काशीसे बनारस अख निकला। उसकी भाषा उर्दू और अक्षर देवनागरी थे। र शिवप्रसादजी द्वारा देवनागरी अक्षरोंका और भी बहुत प्रचार हुआ। पीछे काशीवालोंने हिन्दीभाषाके सुधारकी भी ध्यान दिया और सुधाकर पत्र निकाला। पर वह चेष्टा विफल हुई। अन्तको आगरानिवासी स्वर्गीय राजा लक्ष सिंहजीने शकुन्तलाका हिन्दी अनुवाद किया और अच्छी हि लिखनेवालोंको फिरसे एक मार्ग दिखाया। यद्यपि उस शुद्ध अनुवाद २५ साल पीछे सन् १८८८ ई० में प्रकाशि हुआ जब कि हिन्दीकी चर्चा बहुत कुछ फैल चुकी थी तथा राजा शिवप्रसादके गुटकेमें मिल जानेसे उसके पहले अनुवाद बहुत प्रचार होचुका था। सन् १८७८ ई०में उक्त राजा साहब रघुवंशका गद्य हिन्दीमें अनुवाद किया। उसकी भूमिकामें लिखते हैं—

"हमारे मतमें हिन्दी और उर्दू दो बोली न्यारी न्यारी है हिन्दी इस देशके हिन्दू बोलते हैं और उर्दू यहांके मुसलमा और पारसी पढ़े हुए हिन्दुओंकी बोलचाल है। हिन्दी संस्कृतके पद बहुत आते हैं, उर्दूमें अरबी पारसीके। परन्तु कु अवश्य नहीं है कि अरबी पारसीके शब्दों बिना हिन्दी न बोल जाय और न हम उस भाषाको हिन्दी कहते हैं जिसमें अर पारसीके शब्द भरे हों। इस उल्थामें यह भी एक नियम रक्ख ... पद अरबी पारसी का न आवे।"

राजा साहब उर्दू फारसी भलीभांति जानते थे तिसपर भी हिन्दी और उर्दूको केवल इसलिये दो न्यारी न्यारी बोली बताते थे कि एकमें संस्कृतके शब्द अधिक होते हैं और दूसरीमें फारसी अरबीके शब्द। अस्तु, इस कथनसे यह स्पष्ट है कि हिन्दी और उर्दूमें केवल संस्कृत और फारसी आदिके शब्दोंके लिये भेद है और सब प्रकार दोनो एक हैं। साथही यह भी विदित होता है कि उर्दूसे उस समय कुछ शिक्षित हिन्दू घबराने लगे थे और समझने लगेथे कि फारसी अरबी शब्दोंके बहुत मिल जानेसे हिन्दी हिन्दी नहींरही कुछ औरही होगई। हिन्दुओंकेकाम यह नहींआसकती। ईश्वरकी इच्छा थी कि हिन्दीकी रक्षा हो इसीसे यह विचार कुछ शिक्षित हिन्दुओंके हृदयमें उसने अंकुरित किया। गिरती हुई हिन्दी को उठानेके लिये उसकी प्रेरणासे स्वर्गीय भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र का जन्म हुआ।

हरिश्चन्द्रने हिन्दी को फिरसे प्राण दान किया। उन्होंने हिन्दीमें अच्छे अच्छे समाचारपत्र मासिकपत्र आदि निकाले और उत्तम उत्तम लेखों नाटकों और पुस्तकोंसे उसका गौरव बढ़ाना आरंभ किया। यद्यपि उन्होंने बहुत थोड़ी आयु पाई और सतरह अठारह वर्षसे अधिक हिन्दीकी सेवा न कर सके— तथापि इस अल्पकालहीमें हिन्दी संसारमें युगान्तर उपस्थित कर दिया। उनके सामनेही कितनेही हिन्दीके अच्छे लेखक हो गये थे। कितनेही समाचारपत्र निकलने लगे थे। जिस हिन्दीकी ओर पहले लोग आंख उठाकर भी न देखते थे वह सबकी आंखों का तारा हो चली थी। हरिश्चन्द्रने हिन्दीके लिये क्या किया यह बात आगे कही जावेगी। यहां केवल इतनाही कहना है कि आज उन्हींकी चलाई हिन्दी सब जगह फैल रही है। उन्हींकी हिन्दीमें आजकलके सामयिकपत्र निकलते हैं और पुस्तकें बनती हैं। दिनपर दिन लोग यह हिन्दी लिखना और शुद्ध देवनागरीलिपिमें पत्रव्यवहार करना सीखते जाते हैं। यद्यपि बंगला मराठी आदि भारतवर्षकी

भन्य कई भाषाओंसे हिन्दी अभी पीछे है तथापि समस्त भारत
यह विचार फैलता जाता है कि इस देशकी प्रधान भाषा हि
है और वही यहांकी राष्ट्रभाषा होनेके योग्य है। साथ
लोग यह भी मानते जाते हैं कि सारे भारतवर्षमें देवनागरी अ
का प्रचार होना उचित है। हरिश्चन्द्रके प्रेमादरी यह सब
और आज हिन्दीको चर्चा करने का अवसर मिला।

इस समय हिन्दीके दो रूप हैं। एक उर्दू दूसरा हि
दोनोंमें केवल शब्दोंही का भेद नहीं लिपि भेद बड़ा भारी
हुआ है। यदि यह भेद न होता तो दोनो रूप मिलकर
हो जाता। यदि आदिसे फारसी लिपिके स्थानमें देवन
लिपि रहती तो यह भेदही न होता। अब भी लिपि एक ह
भेद मिट सकता है। पर जल्द ऐसा होनेकी आशा कम
अभी दोनों रूप कुछ काल तक अलग अलग अपनी अपनी च
दमक दिखानेकी चेष्टा करेंगे। आगे समय जो करावेगा
होगा। बड़ी कठिनाई यह है कि दोनो एक दूसरे को न
जानते हैं न पहचाननेकी चेष्टा करते हैं। इससे बड़ा
अन्तर होता जाता है। जो लोग उर्दूके अच्छे कवि और
हैं वह हिन्दीकी ओर ध्यान देना कुछ आवश्यक नहीं समझ
इसीसे देवनागरी अक्षर भी नहीं सीखते और भारतवर्षके साहि
निरे अनभिज्ञ हैं। अरब और फारिसके साहित्यकी ओर खि
हैं। साथ साथ भारतवर्षके साहित्यमें घृणा करते और जो कु
हैं। उधर हिन्दीके प्रेमी भी उर्दूकी ओर कम दृष्टि रखते
और उर्दूवालोंको अपनी ओरकी बातें ठीक ठीक समझाने
चेष्टा नहीं करते। यदि दोनो ओरसे चेष्टा हो तो इस भाष
बहुत कुछ उन्नति हो सकती है और दोनोंमें मेल भी बहुत
सकता है। मैं इस पुस्तक द्वारा दोनो ओरके लोगोंको
दूसरेकी बातें ठीक ठीक समझा देनेकी चेष्टा करूंगा। इ
अधिक श्रम हिन्दीवालोंके लिये होगा।

॥ श्रीः ॥

हिन्दीभाषा।

जान पड़ता है कि मुसलमानोंके इस देशमें पांव रखनेके समय यहां चारों ओर अन्धेरा छाया हुआ था विद्याका सूर्य अस्त हो चुका था। संस्कृतके विद्वानोंका तिरोभाव हो कर उसका प्रचार बन्द हो चुका था। देशमें कलह और अविद्या फैलती जाती थी। एक पतनोन्मुखी देशकी जैसी दशा होजाती है वैसीही दशा इस देशकी उस समय होरही थी। कदाचित यही कारण है कि हिन्दुओंने अपनी लेखनीसे उस समयका कुछ वृत्तान्त किसी पोथी या पत्रमें नहीं लिखा। उस समयकी बातें न संस्कृतमें लिखीहुई मिलती हैं न भाषामें। उस समयका वृत्तान्त जो कुछ जानागया है वह मुसलमानोंकी लिखी हुई पोथियोंहीसे जाना गया है। यदि हिन्दुओंमें उस समय कोई भी लेखनी धारण करनेवाला पुरुष होता तो अवश्य ही संस्कृतमें अथवा प्रचलित देश भाषामें कुछ न कुछ लिखता और उससे उस समयकी भाषाका कुछ नमूना मिलता। अनुमानसे यही विदित होता है कि उस समय वह भाषा प्रचलित थी जिसे हम इस समय ब्रजभाषाकी जड़ कह सकते हैं अर्थात् जिसके आधार पर ब्रजभाषा बनी। उसकी नींव दसवीं ईसवी शताब्दिमें पड़ी होगी।

अचानक मुसलमानोंके इस देशमें घुस आने और आक्रमण करनेसे इस देशकी स्थिति और यहांके धर्ममें एक बड़ा भारी परिवर्त्तन उपस्थित हुआ। आक्रमणकारी मुसलमानोंने यहांके मन्दिरों और

देवालयोंके साथ जैसी क्रूरताका बरताव किया उससे यहांकी बर्बादी विद्याका भी धूलमें मिलजाना एकसहज बात था। कारण था कि वही मन्दिर और देवालय विद्याके भी भाण्डार थे जो आक्रमणकारियोंने तोड़ फोड़कर धूलमें मिला दिये। बहुत काल तक सर्वसाधारणको अपने धन प्राणोंकी रक्षाकेलिये चिन्तित रहनापड़ा। विद्याकी चर्चा कौन करता ? जो कुछ हो देशके इस परिवर्त्तनके साथ साथ देश भाषाका परिवर्त्तन भी विलक्षण रूपसे होनेलगा। अरबी और तुर्की शब्दोंसे भरी हुई फारसी भाषाको लेकर मुसलमान इस देशमें आये थे। उनकी वह भाषा इस देशकी भाषामें मिलने लगी। यदि संस्कृत उस समय देश भाषा या राज दरबारकी भाषा होती तो मुसलमानी भाषा उसीमें मिलती। पर वह तब केवल धर्म्म संबंधी भाषा थी इससे म्लेच्छ भाषाका एक शब्द भी उसमें न घुस सका। हिन्दूधर्म्म कुछ ऐसा विचित्र है कि उसकी पोथियां लिखनेको आज भी भिन्न भाषाके शब्द लेनेकी आवश्यकता नहीं होती फिर उस समय तो क्या होती। इसीसे संस्कृत वैसीकी वैसी पवित्र बनी हुई है।

पर उस समयकी देशभाषाने जिसका नाम अबसे व्रजभाषा कहकर पुकारा जावेगा इस बिना बुलाये अतिथिका सत्कार किया। यद्यपि उस समयके हिन्दुओंको मुसलमानोंका बरताव देखकर उनसे बड़ी घृणा हुई थी तथापि मुसलमानी भाषाके शब्दोंको वह अपनी भाषामें मिलने देनेसे न रोक सके। कैसे रोक सकते ? आठ पहर चौसठ घड़ीका उनका मुसलमानोंसे साथ होगया था। बहुत सी नई चीजें जो मुसलमानोंके साथ इस देशमें आई थीं उनके नाम भी नये थे। वह नाम यहांके लोगोंको सीखने पड़े जो पीछे यहांकी भाषामें मिल गये। और भी कई कारण हैं। भिन्न भाषाओंके बहुत शब्द ऐसे होते हैं कि यदि उनका अपनी भाषामें अनुवाद किया जावे तो मतलब एक वाक्यमें पूरा हो और फिर भी ठीक ..... प्राप्त न हो। ऐसी दशामें वह शब्द ज्योंका त्यों बोलना

पड़ता है। फिर दो भिन्न भिन्न भाषा बोलनेवालोंको कभी कभी जल्दी बोलनेके लिये या सरलतासे बात समझा देनेके लिये एक दूसरेके शब्द बोल जाने पर लाचार होना पड़ता है। और जब आपसमें भलीभांति मेल जोल होजाता है तब तो एक दूसरेके शब्द खूबही उनके मुंहसे निकलने लगते हैं। कभी प्रेमसे कभी दिल्लगीके लिये एक दूसरेके शब्दोंकी अदल बदल होती है। सबसे बड़ा कारण एक और यह है कि विजेता लोगोंकी बोल चाल रङ्ग ढङ्ग और दूसरी दूसरी बातें विजित लोगोंको बहुत भली मालूम होती हैं। उनका न वह केवल अनुकरण ही करते हैं वरंच वैसा करनेमें लाभ दिखाते हैं और उनकी चालपर चलकर प्रसन्न होतेहैं। यहां तक कि कभी कभी ऐसा करनेमें अपनी बड़ाई समझते हैं। आज कल अङ्गरेजोंकी प्रत्येक बात हमारे देशके शिक्षित और अशिक्षित लोगोंको जैसी भली जान पड़ती है और उनकी नकल करके जैसे वह कृतार्थ होते हैं यही दशा मुसलमानी समयमें भी हो चुकी है। मुसलमानी चाल पर उस समय बहुत लोग लट्टू थे जिसके चिन्ह अब तक नहीं मिटे हैं। इन्हीं कारणोंसे फारसी हिन्दीमें मिलने लगी।

किन्तु दुःखकी बात यह है कि उस कालकी बनी पुस्तकें या लेख ऐसे नहीं मिलते जिनसे तबकी भाषाका रंग ढंग मालूम हो सके और इस बातका पता लग सके कि किस आक्रमणकारीके समयमें इस देशकी भाषामें क्या परिवर्त्तन हुआ तथा किस सीमा तक मुसलमानी भाषा हिन्दुस्तानी भाषामें मिलती गई। सुबुक्तगीन या महमूदके समयकी कुछ लिखावटें अब तक नहीं मिलीं। बहुत खोज करने पर भी हिन्दीमें चन्द कविके "पृथीराजरासा" से पुरानी कोई पोथी नहीं मिली है।* पृथीराज दिल्लीका अन्तिम

* इतना लिखनेके बाद चन्दसे पुरानी कविता कुछ मिली है—
रावल देव भाटी जैसलमेरके [illegible]

गालिमानी महाराज था। उसके पीछे दिल्लीमें हिन्दुओंके राज का दीपनिर्वाण हुआ। सन् ११९१ में उसने शहाबुद्दीनगोरीको हराया था और पीछे ११९३ में उससे हार खाई थी। पृथ्वीराज रासामें पृथ्वीराजकी वीरताका कीर्तन है। उसके पढ़नेसे विदित होता है कि उस समयकी हिन्दी भाषा बड़ी विचित्र थी। आज कल उसके आधे शब्दों का अर्थ भी लोग ठीक ठीक नहीं समझ सकते। इतने पर यह आश्चर्यकी बात है कि फारसी अरबीके शब्द उसमें बड़ी बहुतायतसे घुसे हुए हैं। यहांतक कि थोड़ीसी खोजसे प्रत्येक पृष्ठमें कई कई मिल जाते हैं। उदाहरणकी भांति चन्दकी कवितामेंसे कुछ टुकड़े उद्धृत किये जाते हैं;—

सात कोसको दुर्ग है, तापर जरत 'मशाल'।
सो देखो मीरां तहां, तनमें ऊठी झाल।
पिये दूध मण पंच, सेर पैंतीस जु 'शक्कर'।
अन नवता कड़ि खाय वली एक मोटो बक्कर।
काल छूट त्रय सेर, सवा मण घृत सुपीयन।
कस्तूरी एक सेर, सेर दो केसर चीयन।

हुआ। उसके बनाये दोहे जैसलमेरके ख्यातमें लिखे हैं—

मरी जे भाभी दण दाखे। चोर निदाणेके नासे॥
राव खुड़ा सुण वेनती बोलन पादो लेह।
आ भुइ आ भाटिये कोट अडावण देह।
पड़िन कीजे अत्त देवराज रवा कहे।
धुम्म रहासी बत्त गत अनीत ना कीजिये।
खिर बिरजेवा राइ मौत भलोना भाटिया।
जे गुण किया रवाह तेहो कलार हारिया॥

यह ऊपरका सोरठा रत्नाका है। रावलका कवि था उ ख्यातमें है।

दिरावर थापी दुरंग लुद्रवो आप घर लयो।
सम वाहण वियसंध जनोपाइ करलमयो।

मण च्यार दधी मह्यिो तरन, भोगराज मटकी भरे।
सवा पहर दिन चढ़तह्यो, मीरा मथि चामुंड करै।

'सुज' 'शेख' जात 'उजबक्क' नाम, मीरां प्रधान पुनि सुबधाम।
चालीस दून जिन पीठ ढाल, चालीस दून उर कंठ माल।
पचास दून पहरे कवच, पच्चीस दून सिर टोप रच।
चकमार पंच मणको उदार, 'हज्जार 'तीर' जिहिं भाथ मार !
'कब्बान' पंकर 'उजबक्क' 'पीर', दो एकीस पैन चूंकत्त तीर।

परे रहे रन खेत धरि, करि दिल्लिय मुख 'रक्ख'।
जीत चल्यो प्रथीराज रन, सकल सूर भय सुक्ख।

वर गोरी पद्मावती, गह्नि 'गोरी सुलतान'।
निकट नगर दिल्ली गयी, चव भुजा चहुआन।

आबू फेरी आण भड़जा लोरङ्ग' भंजे।
पूगलगढ़ लीनी प्रगट कतल विहंडे कीजिये।
देवराज चढ़ते दिवस रतन आप्र धर लीजिये।

बीसलदे रासो। सं० १२७२

हंसवाहनी मृगलोचनी नारि, सीस समारइ दिन गिणइ।
कीण सिरजइ उलिगाणा घरि नारि जाइ दीहाड़ उभीरिता ॥१॥

गवरीका नन्दन त्रिभुवन सार
नाद वेदां धारइ उदिर भण्डार।

कार जोरे नरपति कहइ, मूसा बाह तिलक सन्दूर।
एक दन्त उमुख झलमलइ, लणिक रोकली उत पै सूर ॥१॥

नाल्ह रसायण रसभरी गाई।
तुठी सारदा त्रिभुवन माई।

उलीगणां गुण वरणतां कूकट कुमाणसां झिणकइज रास।
भणो चरित गत को लहइ, ये कई भाषीरसे सबद विणास ॥२॥

मत्तर मत्त तिय धम्म, वीर गजराज सुथप्पिय।
जे लीन्हें 'सुरतान', 'माहि' छोरी गोरी किय।
पंच सत्त पचास, एक सो तुंग तुरंगम।
सौदासी चतुरंग, मत्त टोलिय बहु चंगम।
चतुरंग लच्छि चिचंग दे, बर सोमेसर थप्पिये।
बोलाइ सजन रावर समर, पंच कोस मिलि जंपिये।

कुमादे 'कुमादे' कहे 'खानजादे', भग्यो हत्थगोरी भये साहिबादे
ग्यो चित्रकोटी 'सुरत्तान' माह्यो, बजे वे निसानं सुजित्तो सराइ
गयो भग्गि कूरंभ मरहट्ट वालो, गयो सत्य मुक्कीनृपंवे पंचाली।
गयो मम्मतीएलचो भारखंडो, जिनें भुज्ज गोरी ग्रहलाल मंडी
ग्यो खान 'याकूब' संसार साखी, जिनें दीन 'बन्देन'की लाज राखे

चीतोर राइ काइम्म कीन, खुम्मान पाट पग अचल दीन।

तैं जित्तो गजनेसतूं जमड्डो हम्मीरां।
तैं जित्तो चालुक्क पहरि सन्नाह सरीरां।
तैं दल पंग नरिंद इन्दु ग्रहियो जिमराहां।
तैं गोरी दल दह्यो बार पट्टह वन दाहां।
तुम 'तेग तेज' तुम उद मन तंतो पासन सिद्धिये।
चामंड राय दाहर तनय ती भुज उप्पर रिद्धिये।

सगाल शेख सुलतान याकूब आदि अरबीके शब्द हैं शह
मान रुस्तम शाह खानजादे कुमादा तेग तेज आदि फारसीके थो
तबक तुर्कीका शब्द है। इनमेंसे कई एक नाम हैं जिनका अनु
द कुछ होही नहीं सकता। कई शब्द ऐसे हैं कि उनका अनुवाद
कया जाये तो कई कई पंक्तियां लग जावें तो भी अर्थ स्पष्ट न हो
... यदि चन्द कवि राजा महाराजा या देशपति लिखता
। अर्थ कभी सिद्ध न होता जो सुलतान या सुरतान लिखनेसे

ाता है। क्योंकि सुलतान शब्दमें उसकी सुलतानीका ठाठ भी
ी मौजूद है। सुलतान कहनेहीसे उसके स्वभाव प्रकृति न्याय
न्याय शक्ति धर्म आदिकी बातोंका भी साथ साथ ध्यान आ जाता
। अंगरेजीके बहुतसे शब्द ऐसे हैं कि जो हिन्दीमें कुछ बिगड़
कर मिल गये हैं। उनके बोलनेसे उनका अर्थ भलीभांति समझमें
ाजाता है। पर यदि उनका अनुवाद किया जाये तो समझना
कठिन होजाये। रेल स्टेशन लाट कमिटी आदि पचासों शब्द
ऐसे हैं जिनका अनुवाद करना व्यर्थ सिर पचाना है। फारसी
अरबीके कितनेही शब्द हिन्दीमें ऐसे मिले हैं कि लोग उनको
हिन्दीके शब्दोंसे भी प्यारा समझते हैं। साहब शब्दको तुलसीदास
जी अपनी कवितामें बड़ेही प्रेमसे लाते हैं।

इन शब्दोंके सिवा दीवान, खसक फरमान हजरत सलाम आदि
शब्द चन्दकी कवितामें बहुत हैं। इतने फारसी अरबी आदिके
शब्द उसमें घुस जाने पर भी चन्दकी भाषा स्वच्छ और सरल नहीं
है। वह इतनी उखड़ी हुई और तकड़तोड़ है कि मानो चन्द
उसे उसी समय कहींसे तोड़ ताड़ कर बनाता था और कविताके
काममें लगाता था। यही कारण है कि आज कल उसके समझने
में बड़ी कठिनाई पड़ती है। उसकी भाषामें तीन प्रकारके नमूने
मिलते हैं। एक संस्कृतके ढङ्गकी भाषा है जो पढ़नेमें संस्कृतहीसी
मालूम पड़ती है पर अशुद्ध है और उसमें हिन्दी मिली हुई है।
यथा—

स्वस्ति श्री राजंग राजन वरं धर्माधि धर्म गुरं।
इन्द्रप्रस्थ सुइन्द्र इंद समयं राजं गुरं बर्तते।
अरदासं ततार खान लिखियं सुलतान सौचं वारं।
तुम यउ बड्डाइ राजन वरं राजाधिपोराजनं।

यह एक अर्जी है जो तातारखांने शहाबुद्दीनको मुक्त करानेके
लिये पृथिवीराजको लिखी थी। निरी दिल्लगी जान पड़ती है।
हंसानेके लिये स्वर्गीय पण्डित प्रतापनारायण मिश्रने एक कविता

"महा संस्कृतकी कविता"के नामसे लिखी थी। वह इसमें १
मिलती है। नमूना लीजिये —

कूदंतं भुंड भुंडं घरघर घुसतं पथ्थर फोड़यन्तम्
जुम्भया समितं दंत नख कटतं कूकरां उप्पयंतम्

अर्जदासको अरदास बना कर संस्कृत करनेके लिये घर
कर लिया है। लिखियं और भी बढ़ कर है और उसमें तो "श
बड्डाह" लिख कर रही सही कसर मिटादी है। पर इसमें
होगा वह नकली नहीं असली भाषा थी। मिवाड़ और मारवाड़
कवि अब तक भी इस ढङ्गकी भाषामें कविता करते हैं। प
इस भाषासे भी यह पता लगता है कि संस्कृत किस प्रकार टूट
कर हिन्दी बनती जाती थी।

दूसरी प्राकृतके ढङ्गकी भाषा है। उसमें धम्म कम्म आदि शब्द
दूसरी भाषाओंके शब्द भी इसी सांचेमें ढाल कर उक्त भाषामें लि
लिये गये हैं। उजबकको उजब्बक, कमानको कव्वान, सुलतान
सुरत्तान, कवचको कव्वच बना डाला है। इसी प्रकार जहां जिस
को ऐसा करनेकी आवश्यकता पड़ी है वहां उसीको कर डाला
ऊपर जो कविता चंदकी उद्धृत हुई है उसमें इसके नमूने मौजूद
कहीं कहीं उक्त दोनों नमूनोंकी भाषाको गड्ड मड्ड करके कवि
की है। तीसरा नमूना सरल भाषाका है। वह ब्रजभाषासे व
मिलती जुलती है। वही स्वच्छ और सरल होकर यह ब्रजभा
बनी होगी। नमूना देखिये—

एकादस सै पंचदह विक्रम साक अनन्द।
तिहिं रिपु जयपुर हरनको भय पृथिराज नरिन्द॥

बहुत जगह चन्दने तीनों भाषाओंको मिलाकर तिगड्डा बनाया
है। कहीं कहीं एकके शब्द दूसरीमें लगा दिये हैं। राजस्थान
आदि अबतक इन तीनों नमूनोंकी भाषामें कविता करते हैं
ब्रजभाषाका प्रभाव उन पर बहुतही अल्प हुआ।

कवि चन्दके पीछे सौ साल तक बड़ी भारी तबाही और अशांति

का समय बीता। इससे फिर वैसे कवि और लेखक उत्पन्न न हुए। न पृथिवीराजके पीछे कोई स्वाधीन हिन्दू राजा रहा न कवियोंका सम्मान करनेवाला। इससे पता नहीं लगता कि आगे भाषाकी क्या गति हुई। अलाउद्दीन खिलजीके राजत्वकालके आरम्भमें दिल्लीमें अमीर खुसरू फारसी भाषाका एक प्रसिद्ध कवि हुआ है। वह सन् १३२५ ई० में मरा। उसने हिन्दीमें कुछ नई कारीगरी करके दिखाई। फारसीमें वह बहुत तेज था। नई बातें उत्पन्न करने और नये नये बेलबूटे बनानेकी उसे जन्महीसे शक्ति मिली थी। इससे हिन्दीमें भी उसने बहुत कुछ नयापन कर दिखाया। फारसी और हिन्दीको मिलाकर उसने कई एक ऐसी कविताएं लिखीं जिनकी आजतक चर्चा होती है। उनकी नीचे लिखी गजल बहुतही प्रसिद्ध है—

जे हाले मिसकीं मकुन तगाफुल, दुराय नैना बनाय बतियां।
किताबे हिजरां नदारम ऐ जां, न लेहु काहे लगाय छतियां।
शबाने हिजरां दराज चूं जुल्फो, रोजे वसलत चुउम्र कोताह।
सखी पियाको जो मैं न देखूं तो कैसे काटूं अंधेरी रतियां।
यकायक अजदिल दो चश्मे जादू, बसद फरेबम बुबुर्द तिसकीं।
किसे पड़ी है जो जा सुनावे पियारे पीको हमारी बतियां।
चू शमा सोजां चुजर्रह हैरां जे मेहरे आं मह बेगश्तम आखिर।
न नींद नैना न अङ्ग चैना न आप आवे न भेजे पतियां।
बहक्क रोजे विसाले महबर किदाद मारा फरेब खुसरू।
सुभाय राखूं तू सुन ऐ साजन जो कहने पाऊं दो बोल बतियां॥

इस गजलके पहले दो चरणोंमेंसे प्रत्येक आधा आधा फारसी है और आधा आधा हिन्दी। आगेके दो दो चरणोंमें पहला फारसी और दूसरा हिन्दी है। छः सौ वर्ष होगये अब भी इस गजलका आदर होता है। इससे पता लगता है कि हिन्दी उस समय कैसी थी। अथवा मुसलमानोंके मुंह पर जो हिन्दी जारी थी वह कैसी थी। यह बात भी लक्ष करनेके योग्य है कि इस गजलमें जो

अपने पियाके वियोगका वर्णन करती है। संस्कृत और भ
कवियोंकी यही चाल है। वह स्त्रीकी ओरसे अपने पतिके वि
की कविता करते हैं। फारसीके कवियोंकी चाल इससे भिन
वह पुरुषका विरह वर्णन करते हैं और वह पु
भी स्त्रीके विरहमें पागल नहीं होता वरञ्च बहुधा कि
सुन्दर बालकके विरहमें प्रलाप करता है। आरम्भमें मुसल
कवि भी हिन्दुस्तानी चाल पर चले थे। पर पीछे उनकी कवि
फारसीके रंगमें बराबोर होगई। इससे उर्दूमें भी पुरुषका वि
पुरुषसे चलता है। उसी चाल पर इस समय तकके उर्दू क
चले जाते हैं। खुसरूने हिन्दीमें फारसी छन्द चलाया। या
यही पहली गजल है जिसमें हिन्दी सम्मिलित हुई। इसमें भा
और फारसीको ऐसे ढङ्गसे मिलाया है कि छः सौ साल पीछे
गजलका मजा वैसेका वैसा बना हुआ है।

खालिकबारी एक छोटी सी पोथी जो अब भी पुराने ढर्रेके
तबोंमें पढ़ाई जाती है, यह भी अमीर खुसरूनेही बनाई
बहुत बड़ी थी उसके कई भाग थे। अब जो पढ़ाई जाती है
उसमेंसे थोड़ीसी चुनकर निकाली हुई है। इसमें ब्रजभाषा
फारसीको खूब मिलाया गया है। उसमेंसे कुछ नीचे लिखते हैं

बिया बरादर, आवरे भाई। बिनशीं मादर, बैठरी माई।
तुरा बुगुफ़तम, मैं तुझ कहिया। कुजाबि मान्दी, तू जित रहिया
दोग, कामूह रात को गई। दमगाव माज रात को मई।

इनमें हरेक चरणका पहला अंग फारसी है दूसरा अंग उसका
हिन्दी अर्थ है।

मई ममग जन है हमारी—कहत मसाम यश है मरी।
हम अपाइ मुराका नांव—गर्मी धूप आया है छांव।

इन फारसी शब्दोंका हिन्दी अर्थ बाद गजलमें आता है। —
कहीं ऐसे हिन्दी शब्द हैं जो अब नहीं बोले जाते हैं। जैसे—
रापून बदमार शाम मीट। यार दोस्त बोलीसा ठेट।

सून अरबी पयम्बर फारसी है। हिन्दीमें इनका अर्थ है पर खुसरूके समयमें दूतको बसीठ कहते थे। इसी प्रकार दोस्तका अर्थ उस समय ईठ था। आज कल यार दोस्त सब ते हैं ईठको कोई नहीं समझता।

हिन्दी फारसी और अरबी शब्दोंके गड्डमड्ड कोषमें तीनों षोंका जबरदस्ती तिगड्डम किया गया है। इसीसे क्रिया फारसी है कहीं हिन्दी और कहीं दोनो।

अर्द धरती फारसी बाशद जमीन।
कोह दर हिन्दी पहाड़ आमद यकीन।
काह हेजम घास काठी जानिये।
ईंट माटी खिश्तो गिल पहचानिये।
देग हांडी कफचा डोई वेखता।
तावा कज़गानस्त कढ़ाई तवा।
तप लर्जा दर हिन्दी आमद जूड़ी ताप।
दर्द सर आमद सिरकी पीड़ा तग है धाप।
गन्दुम गेहूं नखुद चना शाली है धान।
जुरत जूनरी अदस मसूर वर्ग है पान॥

इन पंक्तियोंमें सब प्रकारके नमूने मौजूद हैं।

यह तो उर्दू फारसी और ब्रजभाषाके मेलकी कविताकी बात। उनकी केवल ब्रजभाषाकी चीजोंका नमूना लीजिये। दुखती आंखोंके इलाजके लिये वह एक पोटली बताते हैं—

लोध फिटकरी मुर्दासंग। हल्दी जीरा एक एक टंग।
अफयूं चना भर मिरचें चार। उरद बराबर थोथा डार।
पोस्तके पानी पोटली करे। तुरत पीर नैनोंकी हरे॥

[सरूकी बनाई पहेलियां सुनिये—

तरवरसे एक तिरया उतरी उसने खूब रिझाया।
बापके उसके नाम जो पूछा आधा नाम बताया।

भाधा नाम पिता पर याको बूझ पहेली मोरी।
अमीर खुसरू यों कहें अपने नाम निबोरी॥

यह निबोलीकी पहेली है। निबोली दिल्लीमें नीमके फल को कहते हैं। ब्रजमें उसे निबोरी कहते हैं। नीम फारसीमें आधे को कहते हैं। इसीसे खुसरू पहेलीमें कहता है कि पेड़ पर एक ने उतरकर बहुत रिझाया। उसके बापका नाम पूछा तो उसने आधा नाम बताया अर्थात् नीम। उसके नाममें आधा पिता का नाम है। उसका नाम पूछा तो निबोरी अर्थात् नबोली अर्थात् चुप रह गई। और बता भी दिया अर्थात् निबोली। ब्रजभाषामें ल की जगह र अधिक आता है। इससे न बोलीकी जगह पहले नबोरी कहते थे। अब ब्रजके नगरोंमें तो ल की जगह र बहुत नहीं बोलते पर उसके पासही मेवातके गांवोंमें जल्दीको जरदी कहते हैं। इस पहेलीसे यह भी देखना चाहिये कि फारसी उस समय कितनी मिल गई थी कि हिन्दी पहेलीमें फारसी अर्थ तलाश किया जाता था। किसी औरने नीमको यों कही है।

एक तरवर आधा नाम। अर्थ करो नहीं छोड़ो गाम।

आगेकी पहेलियोंमें हिन्दी संस्कृतका मेल देखिये—

फारसी बोली आईना। तुर्की सोची पाईना।
हिन्दी कहते आरसी आये। मुंह देखो जो उसे बताये

इसका अर्थ है आईना। किस चोचलेसे कहता है कि फारसी बोली आईना। एक तो यह कि फारसी बोली मालूम नहीं, साफ साफ अर्थही होगया फारसीमें उसे आईना कहते हैं। फिर कहता है हिन्दी बोलते आरसी आये। एक तो यह अर्थ हुआ कि हिन्दी बोलनेको जी नहीं होता दूसरा आईनेको हिन्दी आरसी कहते हैं। इसी प्रकार चौथे चरणमें भी दो तरहका अर्थ है। एक तो तुम अर्थ बताओ तुम्हारा क्या मुंह है। दूसरे आईनेमें मुंह देखना साफ इशारा है। एक और पहेलीमें फारसी और भाषाका मि

बहुत पहेलियां सीधी हिन्दी पद्यकी भी हैं। जैसे—

चार महीने बहुत चले और महीने थोरी।
अमीर खुसरू यों कहे तू बता पहेली मोरी।

यह मोरीहीकी पहेली है। बरसातमें चार महीने मोरी अधिक चलती है। बाकी आठ महीने कम।

दिल्ली प्रान्तमें आषाढ़से वर्षा ऋतुका आरम्भ होता है। श्रावन में चारों ओर हरयाली फैल जाती है। तब वर्षाका यौवन होता है। इसीसे श्रावण सुदी ३ को उधर हरयाली तीजका बड़ा भारी मेला होता है। श्रावणमें झूले पड़ते हैं। खम्ब गड़ते हैं या पेड़ों में और मकानोंकी छतोंमें झूले डाले जाते हैं। इनमें झूलते तो पुरुष भी हैं पर बहुत कम। स्त्रियोंका त्यौहार है सब स्त्रियां मिलकर झूलती हैं। कभी कभी पूरे एक महीने झूलनेकी ध रहती है। बहुधा हरयाली तीजके पीछे झूलना बन्द होजाता झूलते समय स्त्रियां बहुतसे गीत गाती हैं। उनमें अमीर ख के बनाये भी गीत हैं। छः सौ सालसे अधिक बीत गये अ हर बरसातमें गाये जाते हैं। एक गीत है—

जो पिया आवन कह गये अजहुं न आये स्वामी हो
ए हो जो पिया आवन कह गये।
सावन आवन कह गये आये न बारहमास,
ए हो जो पिया आवन कह गये।

यह तो बड़ी बड़ी स्त्रियोंके गानेका गीत हुआ। छोटी ब लड़कियोंको पिया और स्वामीके गीत शोभा नहीं देते। पर म की उमंगमें कुछ गाना तो उनको भी चाहिये। इसीसे उ योग्य गीत बनाये। एक लड़की सासरे ससुरालमें है। वर्षा है। वह झूलती हुई मातापिताको याद करती है—

अम्मा मेरे बाबाको भेजोरी, कि सावन आया।
बेटी तेरा बाबा तो बुढ़ारी, कि सावन आया।
अम्मा मेरे भाईको भेजोरी, कि सावन आया।

बेटी तेरा भाई तो बालारी, कि सावन आया।
अम्मा मेरे मामूको भेजोरी, कि सावन आया।
बेटी तेरा मामू तो बांकारी, कि सावन आया।

इस गीतमें बेटी मातासे कहती है कि मा! सावन आगया पिता भेजो मुझे आकर लेजाय। माने उत्तर दिया कि वह बूढ़ा। तब कहा भाईको भेजो तो उत्तर दिया कि वह बालक है। लड़की कहती है मामाको भेजो वह तो न बूढ़ा है न बालक। माता कहती है कि वह मेरी सुमता हो नहीं। कैसी सुन्दर तिसे भारतवर्षकी छोटी छोटी लड़कियोंके हृदयके विचार इस तमें दिखाये हैं।

मुकरी या मुकरनीका अमीर खुसरू मानो आविष्कर्त्ता था।

सगरी रैन मोह संग जागा। भोर भई तो बिछरन लागा।
वाके बिछरे फाटत हीया। ए सखी! साजन? ना सखी दीया।
सर्व सलूना सब गुन नीका। वा बिन सब जग लागे फीका।
वाके सिर पर होवे कोन। ए सखी साजन? ना सखी लोन।
वह आवे तब शादी होय। उस बिन दूजा और न कोय।
मीठे लागें वाके बोल। क्यों सखी साजन? ना सखी ढोल।

अब मुकरनियोंका रिवाज दिल्लीमें भी कम होगया है तथापि इन दिनों इतना प्रिय था कि बाबू हरिश्चन्द्रजीने भी कई एक मुकरनियां लिखी हैं।

एक अनमिल बनाया था। उसका नमूना लीजिये।

एक कुएपर चार पनहारियां पानी भर रही थीं। अमीर खुसरू उधरसे जाता था। प्यास लगी कुए पर आया। पानी मांगा उनमें एक उसे पहचानती थी। उसने कहा देखो यह खुसरू है। उन्होंने पूछा क्या तू खुसरू है? जिसके बनाये गीत सब गाते हैं पहेलियां ...लियां तूही बनाता है? उसने कहा हां। तब एकने कहा मुझे ... कहदे। दूसरीने कहा चरखेकी। तीसरी बोली ढोल ...लगी कुत्तेकी। खुसरोने कहा हां प्यास है यहने

पानी तो पिला दो। यह बोलीं पहले हमारी बात न कह दोगे तो पानी न पिलाएंगी। खुसरूने झट कहा—

> खीर पकाई जतनसे चरखा दिया जला।
> आया कुत्ता खा गया, तू बैठी ढोल बजा।

ला पानी पिला। इस प्रकार पानी पिया।

कभी कभी ढकोसला कहता था। कहते हैं कि यह भी उसीने चलाया था। ढकोसला सुनिये—

> भादोंकी पकी पीपली चू चू पड़े कपास।
> बी मेहतरानी दाल पकावोगी या नङ्गाही सोरहूं।

यह ऐसा पसन्द हुआ था कि सैकड़ों ऐसेही और ढकोसले बनगये। कुछ दिन पहले तक पुराने आदमियोंमें इनकी चर्चा थी पर अब बन्द है। एक और सुननेके लायक है—

> भैंस चढ़ी बबूल पर गप गप गूलर खाय।
> दुम उठाके देखा तो ईदके तीन दिन।

एक दो सुखना चलाया था। वह लोगोंको बहुत भाया। न ज खुसरूने चलाया था या यहींसे लिया था। पर इतना अवश्य कि उसको कुछ उन्नत किया। फारसी हिन्दी दोनोंको मिलाव भी दो सुखने बनाये। सुनिये—

> मुसाफिर प्यासा क्यों? गधा उदासा क्यों? लोटा न था।
> जूता क्यों न पहना? संबोसा क्यों न खाया? तला न था।
> पान सड़ा क्यों? घोड़ा अड़ा क्यों? फेरा न था।

मुसाफिर इसलिये प्यासा रहा कि उसके पास पानी पीनेको लो न था। गधा उदास इस लिये कि वह लोटा न था। लोटनेसे गध प्रसन्न होता है। जूतेके तला न हो तो पहना कैसे जाय इसी प्रका संबोसा जब तक कड़ाईमें तला न जाय कैसे खाया जावे पानको यदि फेरते न रहें तो सड़ जाता है। घोड़ न फेरनेसे अड़ जाता है। इस ढङ्गमें खालिस हिन्दीके दो सुखं नहीं से सुखने तक हैं। इनको भी एक प्रकारकी पहेली कहन

निकलता या और किसी कारण उधरसे आना होता तो बिं भी उसे सलाम करती और कभी कभी हुक्का भर कर सामने खड़ी होती। खुसरू भी उसका मन रखनेको दो एक घूंट पी लेता था। एक दिन उसने कहा—खलाजूं, हजारों गजलें गीत राग भी बनाते हो किताबें लिखते हो कोई चीज सौंडीके नाम पर भी बनादो। खुसरूने कहा बी चिम्मो अच्छा। एक दिन उसने फिर कहा कि भटियारीके लड़केके लिये खालिकबारी लिख दी। जरा सौंडीके नाम पर भी कुछ लिख दोगे तो क्या होगा? आपके सदकेसे हमारा भी नाम रह जायगा। उसके बार बार कहनेसे एक दिन ध्यान आगया तो कहा कि बो बीबी चिम्मो सुनो—

> चौरींकी चौपहरी बाजे चिम्मोकी अठपहरी।
> बाहरका कोई आवे नाहीं आवें सारे शहरी।
> साफ सूफ कर आगे राखे जिसमें नाहीं तूसल।
> चौरीके जहां सींक समावे चिम्मोके वहां मूसल।

उस जमानेमें बादशाहके चौपहरी नौबत बजा करती थी। खु कहता है कि चिम्मोके अठपहरी बजती है अर्थात् यह बादशा से बड़ी है। इसकी दुकान आठो पहर चलती है उस जंगली गंवार नहीं सब शहरी आते हैं। भंगका प्याला साफ क के सामने रखती है जिसमें कोई तिनका तक नहीं दिखाई देत भंगड़ लोग गाढ़ी भांगकी तारीफमें कहा करते हैं कि ऐसी लि सींक खड़ी रहे। खुसरू प्रतुति करके कहता है कि चौरीके तो सींककी पड़ी रहती है चिम्मोकीमें मूसल खड़ा रहता है। इ प्रकार खुसरूकी दिल्लगीमें भी चिम्मोका भी नाम चला जाता है।

---

१५ वीं ईस्वी शताब्दिके अन्तमें सिकन्दर लोधीका राजत्व का था। इस समय कायस्थ फारसी पढ़ पढ़कर बादशाही दफ्तर लिये हुए। इसमें फारसी शब्दोंका हिन्दुओंके [illegible]

द्वार धनीके परि रहै धकाधनीके खाय।
पावह धनी 'निवाज' ही जो दर छाडि न जाय।
'साहब'के 'दरबार'में कमी काहुकी नाहिं।
'बन्दा' 'मौज' न पावहीं चूक चाकरी माहिं।
मेरा मुझको कुछ नहीं जो कुछ है सो तोर।
तेरा तुझको सौंपते क्या लागे है मोर।
जो तोको काँटा बुवे ताहि बोइ तू फूल।
तोको फूलके फूलहै ताको है तिरसूल।
दुरबलको न सताइये जाकी मोटी हाय।
मुई खालके सांससों सार भसम होइ जाय।
या 'दुनिया' में आइके छाड़ि देइ तू ऐंठ।
लेना है सो लेइले उठी जात है पैंठ।
सब आये इस एकमें डार पात फल फूल।
कबिरा पीछे क्या रहा गहि पकरा जिन मूल।
चाह घटी चिन्ता गई मनवा 'बे परवाह'।
जिनको कछू न चाहिये सो 'साहन' पति 'साह'
जहां दया तहां धर्म है लोभ जहां है पाप।
जहां क्रोध तहां काल है जहां छमा तहां आप।
'साहब' सों सब होत है 'बन्दे' सों कछु नाहिं।
राई सों परबत करै परबत राई माहिं।
बुरा जो देखन मैं चला बुरा न दीखे कोय।
जो 'दिल' खोजा आपना तो मुझसे बुरा न कोय।
काल करै सो आज कर आज करै सो अब।
पलमें परलै होयगी बहुरि करेगो कब।
पाव पलकी सुधि नहीं करै कालकी 'साज'।
काल अचानक मारि है ज्यूं तीतरको बाज।
माली आवत देखके कलियां करी पुकार।
फूले फूले चुनि लिये कालि हमारी बार।

कांची काया मन अथिर थिर थिर काम करन्त !
ज्यों ज्यों नर निधरक फिरे त्यों त्यों कालि हसंत ।

बहुतसे भजन भी उनके नामके बहुत साफ मिलते हैं पर वह उनके हैं कि नहीं इसमें सन्देह है। क्योंकि जो पुस्तकें उनके नामसे छपी हैं उनमें वह नहीं आये हैं। इकतारे पर गाने वालों या संग्रहकी पोथियोंमें मिलते हैं। जो पद उनकी पोथियोंमें भी हैं उनमें कोई कोई साफ हैं। कुछका नमूना देते हैं—

तन धर सुखिया कोई न देखा, सब जग दुखिया देखारे।
ऊपर चढ़ चढ़ देखा साधो घर घर एकहि लेखारे।
जोगी दुखिया जंगम दुखिया तापसको दुख दूनारे।
कहै कबीर सुनो भाई साधो कोई महल नहीं सूनारे।

पंडित बाद बदे सो झूठा।
रामके कहे जगत गति पावे, खांड़ कहे मुख मीठा।

साधो पंडित निपुन कसाई।
बकरी मार भैंसको धावे दिलमें दरद न आई।

ना हम काहूके कोउ न हमारा।
बालूकी भीत पवन असवारा। उड़ चला पंछी बोलन हारा।

गुरु नानक।

पंजाबमें गुरु नानक बड़े प्रतापी हुए। कबीरको आप बहुत मानते थे। उनके वाक्योंको अपने वाक्योंके साथ बहुत लाते थे। सिखोंके दस गुरुओंमेंसे आदि गुरु थे। अभीतक उनके शिष्योंका पन्थ सजीव है। वह भी कबीरके ढङ्गके साधु थे परिब्राजक थे। उनके बनाये छन्द पद दोहे, स्तुतियां बहुत मिलती हैं। गुरुमुखीमें तो इनका पन्थही मौजूद है। देवनागरी अक्षरोंमें भी उनकी रचनाके कई अंश छप गये हैं। उनमें फारसी अरबीके शब्द बड़ी बहुतायतसे

मिलते हैं। उनकी कवितामें चार सौ वर्षसे कुछ पहलेकी ढंग भाषाका खूब पता लगता है। अर्थात् उस समय वह हिन्दीसे मिलती जुलती थी। जपुजीमें कहते हैं—

'कुदरती' कवण कहा विचार। वारिया न जावा एक वार।
जो तुध भावे साई भलीकार। तू 'सदा सलामति' निरंका

एह तन माया पहिया प्यारे लीतड़ालबी रंगाय।
मेरे कन्त न भावे चोलड़ा प्यारे क्यों धनसेजे जाय।
हौ 'कुरबाने' जाओ 'मेहरवाना' हौ कुरवाने जाओ।
हौ कुरवाने जाओ तिनाके लैन जो तेरा नाउ।
लैन जो तेरा नाव, तिनाके हौ 'सद कुरवाने' जाओ।

तू 'सुलतान' कहा हौ 'मीआ' तेरी कवन वड़ाई।
जो तू देहिसो कहा स्वामी:मैं मूरख कहण न जाई।
तेरे गुण गावा देहि बुझाई। जैसे सच महि रहौ रजाई।
जो किछु होआ सभ किछु तुझते तेरी सभ असनाई।
तेरा अन्त न जाणा मेरे साहिबमैं अन्धुले क्या चतुराई।
क्या हौ आखी कथे कथ देखा मैं अकथ न कथना जाई।
जो तुध भावे सोई आखा तिल तेरी वड़ियाई।
एते कूकर हौ 'बेगाना' भौका इस तन ताई।
भगति होय नानक जो होयगा ता 'खसमै'नाम न जाई।

पर आश्चर्य है कि बहुतसे पद गुरु नानकके नामके ऐसे हैं की भाषा बहुत साफ हिन्दी है। या तो इन पदोंमेंसे कुछ पंज शब्द निकल कर उनकी जगह हिन्दी मिल गये अथवा वह वैं साफ बने। एक लिख देते हैं—

काहेरे बन खोजन जाई?
सर्व निवासी सदा अलेपा तोही संग समाई।
पुष्प मध्य ज्यों बास बसत है मुकर माहिं ज्यों छाई।
तैसेही हरि बसै निरंतर घटही खोजो भाई।

बाहर भीतर एकौ जानै यह गुरु ज्ञान बताई।

जन नानक बिन आपा चीनै मिटै न भ्रमकी काई।

इस पदकी भाषा साफ होनेपर भी जोड़ तोड़ और ढङ्ग मजाकी है।

मलिक मुहम्मद जायसी।

सोलहवीं ईसी सदीमें मलिक मुहम्मद जायसी हिन्दीका एक बहुत योग्य कवि हुआ है। उसकी बनाई पदमावत उस समयकी हिन्दी का अच्छा नमूना है। जायस अवध प्रान्तमें एक स्थान है। मलिक मुहम्मदकी हिन्दी भी उसी प्रान्तकी है। व्रजमें या दिल्लीकी तरफ पदमावतकी भाषा नहीं समझी जासकती। पर अवध और बैसवाड़े में कितनेही अच्छे हिन्दुओंके घरोंमें अभी वह बोली बोलीजाती है।

उक्त कवि शेरशाह सूरीके समयमें था। जान पड़ता है कि हुमायूं बादशाह उस समय भारतसे भागकर ईरान जा चुका था। क्योंकि मलिक मुहम्मद अपनी पोथीमें शेरशाहका ही डङ्का बजाता है। कहता है—

सेरसाह दिल्ली सुलतानू—चारौ खण्ड तपौ जस भानू।

ओही छाज छाजिओ पाटा—सब राजै भुंइधरा लिलाटा।

जात सूर औ खांडे सूरा—औ बुधवन्त सबै गुन पूरा।

तहं लग राज खरग कर लीन्हा—सिकन्दर 'जुलकार'नयन जो कीन्हा।

हाथ 'सुलैमां' केर अंगूठी—जग कहै दान दीन्ह भरि मूठी।

औ अति गरू भूमि पत भारी—टेक भूमि सब सृष्टि संभारी।

देहि असीस मुहम्मद, करहु जुगन जुगराज।

बादशाह तुम जगतके, जग तुम्हार 'मुहताज'।

शेरशाहके सैन्यबल, न्याय और प्रतापका वर्णन कवि इस प्रकार करता है—

बरनउं सूर भूमि पत राजा—भूमि न भार सहै जो साजा।

हय गय सैन चलै जगपूरी—परबत टूटि उड़हिं होय धूरी।

परी रेनु होय रबिहि ग्रासा—मानुष पेख लेहि फिर बासा।

भुंइ उड़ अन्तरिच्छ मृत मण्डा—ऊपर होय छावा महि मण्डा।

छोमे गगन इन्द्र डर कांपा—बासुकी जाय पतारहि चांपा।
मेरु धसमसि म समुद्र सुखाई—वनखंड टूटि खेह मिल जाई।
जो गढ़ नयी न काहु चलत होय सब चूर।
जो वह चढ़े भूमि पत गिरमाइ जग सूर।
'पदल' कहीं प्रथमें दस होय—घांटा चलत न दुखवे कोय।
'गौसिरवां' जो 'चादिल' कहा—'साह' चदल सर सौहि न रा
चदल जो कौन्ह 'उम'की नाई—भई यहां सगरी दुनियाई
गऊ सिंह रेंगहि एक बाटा—दोनो पानि पियें एक घाटा।
नीर छीर छाने दरबारा—दूध पानि सब करे निरारा।
धर्म नियाव चले सत भाखा—दूबर बरी एक सम राखा।
सबै पिरथवी असीसै जोरि जोरिकै हाथ।
गंग जमन जौलहि जल तौलहि अमार नाथ।

मलिक मुहम्मदने पद्मावत आरम्भ करनेका समय स्वयं लिखा कि सन् ९२७ हिजरीमें उसकी नीव पड़ी—

सन नवसै सत्ताइस अहै—कथा अरंभ बैन कवि कहै।
सिंहलदीप पदमिनी रानी—रतन सेन चितौर गढ़ आनी।
अलादीन दिल्ली सुलतानू—राघो चेत न कीन्ह बखानू।
सुना साह गढ़ छेंका आई—हिन्दू तुर्कहि भई लराई।
आदि अंतकी जस कथा अहै—लिखि भाषा चौपाई कहै।

मलिक मुहम्मदकी पदमावत पढ़नेसे कितनीही बातोंका पत लगता है। एक तो यह कि हिन्दुओंकी भाषामें जिस प्रकार मुसल मानी शब्द मिलने लगे थे उसी प्रकार मुसलमानी भाषामें भी हिन्द का खूब दखल होनेलगा था। केवल इतनाही नहीं वरञ्च मुसलमान लोग बहुत अच्छी हिन्दी बोलने लगे थे और उस भाषापर उनक प्रेम हो गया था। दूसरे हिन्दू कवियोंकी भाषामें जिस प्रका मुसलमानी शब्द बेपरवाईसे मिलते जाते थे मुसलमान कवि उस प्रकार चेष्टा करते थे कि उनकी हिन्दीमें फारसी अरबीके शब्द कु न आवें। मलिक मुहम्मदकी पदमावत आरम्भसे अन्ततक पढ़ जाइ

कहीं अरबी फारसी शब्दोंका पता न मिलेगा। मुसलमान लोग पहले खुदाकी पीछे मुहम्मदकी और पीछे अपने पीर और समयके बादशाहकी तारीफ कर लेते हैं तब पोथी आरम्भ करते हैं। मलिक मुहम्मदने भी खुदाकी तारीफ की है। पर उसमें उसे खुदा या अल्लह नहीं कहा करतार कहा है। उसकी पोथीका आरम्भ यों है—

सुमिरउं आदि एक करतारू। जे जिव दीन्ह कीन्ह संसारू।

यह स्तुति दूरतक चली गई है कहीं एक शब्द मुसलमानी नहीं है। मुहम्मदकी प्रशंसामें वह लाचार था मुहम्मदका नाम लाना पड़ा। खुदा तो करतार हो सकता है मुहम्मदका तो कुछ अनुवाद हो नहीं सकता। इसीसे कहता है—

कीन्हेसि पुरुष एक निरमरा। नाम मुहम्मद पूनो करा॥

प्रथम ज्योति बिधि ताकी साजी। औ तेहि प्रीति सृष्ट उपराजी।

इसका अर्थ है कि करतारने एक निर्मल पुरुष उत्पन्न किया उसका नाम मुहम्मद है वह पूर्णिमाका चन्द्र है। विधिने पहले उस की ज्योति बनाई और उसीकी प्रीतिसे यह संसार उत्पन्न किया। मुसलमान लोग कहते हैं कि सृष्टिकी उत्पत्तिमें खुदाने एक नूर उत्पन्न किया। वह मुहम्मदका नूर था। उसीकी प्रीतिसे खुदाने दुनिया बनाई। यद्यपि मुहम्मद बहुत पीछे उत्पन्न हुए और मुसलमान उन को अन्तिम पैगम्बर या ईश्वर दूत मानते हैं तथापि यह भी मानते हैं कि मुहम्मदका नूर सबसे पहले उत्पन्न हुआ। उस नूर शब्दको भी मलिक मुहम्मदने ज्योति लिखा है नूर नहीं। इसीप्रकार उसकी पूरी पोथी फारसी अरबी शब्दोंसे एक दम खाली है सिवा मुहताज आदिल अदल सुलतान और शाह आदि कई एक शब्दोंके जो गैर शाहकी तारीफमें उसे लाने पड़े हैं या सिदक सदीक दीन आदि और कई एक शब्द जो मुहम्मदके चार यारों और ग्रन्थकारके पीर की प्रशंसामें आये हैं।

तीसरे जिस प्रकार फारसी अरबी शब्द उक्त पोथीमें नहीं हैं उसी प्रकार संस्कृत शब्द भी उसमें एक दम नहीं आये हैं। आये हैं

केवल वही शब्द जो टूटफूटकर हिन्दीमें मिल चुके हैं। मलिकमु
म्मदकी पोथोको खालिस पूर्वी हिन्दीकी पोथी कहनाचाहिये। उस
प्रान्तके सर्वसाधारणलोगोंकेघरोंमें जो भाषाप्रचलितथी वहीउसग्रंथ
में लिखीगई है। ऊपर जो चौपाइयां उद्धृत कीगई हैं उनसे यह बात
भलीभांति जानी जासकती है। चौथी बात यह है कि अवध प्रान्त
हिन्दुओंमें उस समय जो कुछ रीति चाल थी और जिन शास्त्रों
पुराणोंकी चर्चाथी उसे भी मलिक मुहम्मद जानता था। शायद दूसरे
मुसलमान भी मलिक मुहम्मदकी भांति इन सब बातोंको जानते थे।
पर आज कलके मुसलमान हिन्दुओंकी रीति भांतिको बहुत
जानते हैं। पद्मावतमें मलिक मुहम्मदने हिन्दुओंका चाल ढाल
भावोंको बहुत उत्तम रीतिसे दिखाया है। नागमतीका बा
मासा उसने बड़ाही सुन्दर लिखा है उसके कई एक स्थान ध्या
पढ़नेके योग्य हैं। विवाह कीसे समयकी चीजोंका वर्णन करता

माड़ो सोन कि गगन संवारा। बन्दन वार लाग सब द्वारा।
सजा पाट छतरकै छाहीं। रतन चौक पूरे तेहि माहीं।
कंचन कलस नीर भरि धरा। इन्द्र पास आनी अपछरा।
गांठ दुलह दुलहनिकी जोरी। दुहुं जगत जो जाय न छोरी
वेद पढ़े पंडित तेहि ठाऊं। कन्यांतुला रासले नाऊं।

एक जगह षट ऋतुका वर्णन किया है। उसमें वर्षाका वर्ण
करता है—

ऋत पावस बरसे पिउ पावा। सावन भादों अधिक सुहावा।
पदमावत चाहत ऋत पाई। गगन सुहावन भूमि सुहाई।
कोकिल बैन पांत बग छूटी। धन निसरीं जनु बीर बहूटी
चमक बीज बरसे जल सोना। दादुर मोर सबद सुठलोना
रंग राति पिय संग निस जागी। गरजे गगन चौंक कंठ ला
सीतल बूंद ऊंच चौबारा। हरियर सब दीखे संसारा।
मलय समीर बास सुख बासी। बेल फूल सेजरि सुख दासी।
हरियर भूमि कसूंभी चोला। औ धन पिय संग रचो हिंडोला।

गमतीके बारहमासेमें आषाढ़का वर्णन सुनिये गज़ब किया है—

चढ़ा असाढ़ गगन घन गाजा। साजा बिरह दुन्द दल बाजा।
धूम स्याम धौरी घन धाये। सेत ध्वजा बक पांति देखाये।
खड्ग बीज चमकै चहुं ओरा। बुंद बान बरसहिं घन घोरा।
उनई घटा आयि चहुं फेरी। कंत उबार मदनहौं घेरी।
दादुर मोर कोकिला पीऊ। गिरहिं बीज घट रहहि न जीऊ।
पुक्ख नखत सिर ऊपर आवा। हौं बिन नाह मंदिरको छावा।
आद्रा लाग बीज भुंइ लेई। मो पिय बिन को आदर देई।
जे घर कंता ते सुखी तेहि गारू तेहि गर्ब।
कंत पियारे बाहरे हम सुख भूला सब।

आषाढ़की शोभाके सिवा हिन्दू स्त्रियोंके मनके भावोंकी इसमें कैसी
सुन्दर झलक है। साथ साथ सामयिक ज्योतिष भी बताता जात
है कि आद्रा नक्षत्र आरम्भ हो गया। बिजली भूमिसे लग लग जाती
है इत्यादि इसी बारहमासेके श्रावणका वर्णन और भी सुन्दर है—

सावन बरस मेह अत बानी। भरन परौं हौं बिरह झुरानी।
लाग पुनरबसु पी उन देखा। भइ बावर कंह कंत सरेखा।
रकतकी आंसु परहि भुंइ टूटी। रेंग चलै जनु बीर बहूटी।

इनमेंसे अन्तिम दो पंक्तियोंमें कविने कविताका शेष कर दिया है
सावनमें बीरबहूटी उत्पन्न होती हैं। वह ठीक लहूकी बूंदकी सदृश
होती हैं। नागमती अपने पति राजाके वियोगमें है। वह रक्तके
आंसुओंसे रोती है। वही आंसू बीर बहूटीकी भांति रेंगके चल
हैं। बीरबहूटियां सावनकी शोभा हैं। पर नागमती वियोगमें
रोती है इससे यहां उसके रक्तमय आंसूही बीरबहूटी हैं। इसी
प्रकार जहां क्षत्रियोंकी वीरता सेनाओंकी सजावटका वर्णन है उसमें
ग्रन्थकर्त्ताकी योग्यता प्रगट होती है। क्षत्रियोंके सती होनेका वर्णन
और भी सुन्दर है। सारांश यह कि मुहम्मद कवि और उसकी
पोथी दोनोंही अपने अपने ढङ्गमें बेजोड़ हैं।

हिन्दी भाषामें फारसी शब्दोंके मिलते जानेके विषयमें मुहम्मद हुसैन साहब आज़ादने अपनी किताब ... ... फरमाते लिखी है।

हुमायूं बादशाहने गुजरात पर चढ़ाई की तो उस समय सु-लतान बहादुर वहांका बादशाह था। वह चांपानेरके किलेमें था। जब किला घेरा गया तो सुलतान बहादुरका बहुत विश्वासी मुसाहिब रूमीखां मौक़ पाकर हुमायूंसे मिल गया। इससे किलेके सारे खज़ाने और उत्तम चीजों सहित हुमायूंके हाथ आया। सुलतान बहादुरका एक प्यारा और खूब बोलनेवाला तोता भी था, जो सदा सोनेके पिंजरेमें रखा जाता था लूटमें हुमायूंके हाथ लगा। जब वह तोता दरबारमें लाया गया तो उसने सामने रूमीखांको देखा। पहचानतेही तोता बोला—"फिट पापी रूमीखां नमक-हराम।" सबको सुनकर आश्चर्य हुआ। हुमायूंने फारसीमें कहा —"रूमीखां, क्या करूं यह जानवर है नहीं तो इसकी जिह्वा कटवा लेता।" रूमीखांने लजाकर सिर नीचा कर लिया। इस नकलसे यह स्पष्ट होता है कि फारसी शब्द हिन्दीमें इतने मिल जाते थे कि जानवर भी उनको सीख लेते थे। तोतेके मुंहसे नमक-हराम शब्द निकलनेसे स्पष्ट है कि उस समय यह शब्द हिन्दीमें मिल गया था।

(अपूर्ण।)

हिन्दी भाषामें फारसी शब्दोंके
मुहम्मद हुसैन साहब आज़ादने अपनी
शहानी लिखी है।

हुमायूं बादशाहने गुजरात पर चढ़
तान बहादुर वहांका बादशाह था। वह
था। जब क़िला घेरा गया तो सुलतान
मुसाहिब रूमीखां मीर आतश हुमायूंसे मिल
सारे खज़ाने और उत्तम चीजों सहित हु
सुलतान बहादुरका एक प्यारा और खूब बोल
सदा सोनेके पिंजरेमें रखा जाता था लूटमें हु
जब वह तोता दरबारमें लाया गया तो उसने
देखा। पहचानतेही तोता बोला—"फिट पापी
हराम।" सबको सुनकर आश्चर्य हुआ। हुमायूं
—"रूमीखां, क्या करूं यह जानवर है नहीं तो इस
लेता।" रूमीखांने लजाकर सिर नीचा कर
नकलसे यह स्पष्ट होता है कि फारसी शब्द हिन्दीमें
जाते थे कि जानवर भी उनको सीख लेते थे। तोतेके
हराम शब्द निकलनेसे स्पष्ट है कि उस समय वह श
मिल गया था।

रासपंचाध्यायी और भंवरगीत।

भारतमित्र।

भारतमित्र हिन्दीभाषाका एक बहुत पुराना बड़ा और स
साप्ताहिक पत्र है। २१ सालसे कलकत्तेसे निकलता है। स
समय पर इसमें अच्छे अच्छे चित्र छपते हैं। राजनीति सम्
लेखोंकी इसमें प्रधानता रहती है पर मौके मौके पर धर्म, स
और साहित्य सम्बन्धी लेख भी इसमें खूब निकलते हैं। जो
अंगरेजी नहीं जानते या कम जानते हैं वह यदि इस प
बराबर पढ़े जायं तो किसी आवश्यक सामयिक घटनाके जा
लिये उनको और कोई अखबार पढ़नेकी जरूरत न रहेगी।
अंगरेजी पढ़े हैं वह स्वयं जान सकते हैं कि क्योंकर सब अंग
अखबारोंको मथकर उनका निचोड़ इस पत्रमें भर दिया जाता
इतने पर मूल्य केवल २) वार्षिक डाकमहसूल सहित है। न
मंगाकर देखनेसे ऊपर लिखी बातोंकी जांच हो सकती है।

मनेजर भारतमित्र
८७ मुक्तारामबाबुस्ट्रीट कलकत्ता।

रासपंचाध्यायी और भंवरगीत ।

भूमिका

अबके भारतमित्रके उपहारके साथ व्रजभाषाकी दो अति सुन्दर कविताएं एकसाथ छापकर दीजाती हैं। इनमेंसे पहलीका नाम रासपञ्चाध्यायी है और दूसरीका भंवरगीत। यह दोनों कविताएं कविवर नन्ददासजीकी बनाई हुई हैं जिनका समय शिवसिंहसरोजमें संवत् १५८५ विक्रमाब्द लिखा है। इसमें कुछ अन्तर भी होसकता है पर विशेष नहीं। नन्ददासजीकी गणना अष्टछापमें कीजाती है। अर्थात् व्रजभूमिके आठ प्रधान कवियोंमें से एक नन्ददासजी भी थे। उन आठ कवियोंके नाम इस प्रकार हैं—सूरदास, कृष्णदास, परमानन्द, कुम्भनदास, चतुर्भुज, छीतस्वामी, नन्ददास और गोविन्ददास।

नन्ददासजीकी कविता इतनी सुन्दर और स्वच्छ है कि उनके लिये एक कहावत चली आती है—'सब गढ़िया नन्ददास जड़िया'। अर्थात् और सब कवि घड़नेवाले और नन्ददास जड़नेवाले। सब जानते हैं कि घड़नेवालोंसे जड़नेवालोंका काम बहुत सफाईका और बारीक होता है। यह भक्त कवि थे। कहा जाता है कि उन्होंने श्रीमद्भागवतको व्रजभाषामें लिखा था। उसे जब अपने गुरुके पास लेगये तो उन्होंने देखकर आज्ञाकी कि यदि तुम्हारी यह भागवत रहेगी तो फिर संस्कृतकी भागवतको कोई नहीं पढ़ेगा। यह सुनकर नन्ददासजीने अपनी भाषा-भागवत श्रीयमुना में डुबोदी। यह भी उनकी ऊंचे दरजेकी कविताके लिये प्रशंसा-पत्र है।

नन्ददासजीकी बनाई हुई पोथियोंमेंसे पञ्चाध्यायी, भंवरगीत, दानलीला, मानलीला आदि कईएक रसियोंमें मिली फिरती हैं। कम पढ़े आदमियोंके हाथमें पड़नेसे यह इतनी अशुद्ध होगई हैं कि

ं देता था। आशा कीजाती है कि आगे यह दशा न रहेगी।
पदोंमें नन्ददासजीकी कविता और भी सरल है। एक पद है—

रामकृष्ण कहिये निसि भोर।
अवध ईस वे धनुष धरेवे
यह व्रजजीवन माखन चोर।
उनके छत्र चंवर सिंहासन,
भरत शत्रुहन लछमन जोर।
इनके लकुट मुकुट पीताम्बर
गायनके संग नन्दकिसोर।
उन सागरमें सिला तराई
इन राख्यो गिरि नखकी कोर।
नन्ददास प्रभु सब तजि भजिये
जैसे निरखत चन्द्र चकोर।

इस पदके अन्तिम चरणमें भी लिपिदोषसे मतलब कुछ उलट
लट होगया है इसीसे उसका अर्थ साफ नहीं निकलता।

उनकी बनाई नाममाला पहले बूढ़े स्त्री पुरुष प्रातःकाल
ाठ किया करते थे। लड़कपनमें कई बार सुनी थी छपी नहीं
थी। वह इतनी सुन्दर और सरल थी कि आजतक उसका
ानन्द नहीं भूलता। बहुतसी कविताएं इसी प्रकार बूढ़े बड़ोंके
ुखस्थ थीं उनमेंसे जो लिखी गईं वह बच गईं जो नहीं लिखी गईं
ह लुप्त होगईं। बहुतसी ऐसी कविताएं अब भी हैं जो लुप्त
ोनेको हैं पर यदि चेष्टा हो तो उनकी रक्षा होसकती है। अब
िन्दुओंका वह समय भी नहीं है कि उनके बूढ़े बड़े सबेरे उठकर
भगवानका नाम लिया करते थे और भगवद्गुणानुवाद
सम्बन्धी कविताएं पढ़ा करते थे। इसमें आज कलके समयमें जो
कुछ लिखा जाय और छप जाय उसीके रक्षित होनेकी आशा करना
चाहिये।

इसका अर्थ जगहमें मनपड कुछ समझमें नहीं आता। इस
यह तमें अरिवद भुँगी नवलकिशोरप्रेसके छपे हुए सूरसाग
है उसकी भी यह दोनियोंकीभांति दशा है। उसका ब
एक टगमम्कन्स भी सुना जाता है पर देखनेमें नहीं आया
पद्याध्यायी मैंने पहलेपहल "हरिश्चन्द्र चन्द्रिका" में दे
आधी देखी, उसका पूर्वार्द्ध चन्द्रिकाके किसी और अ
होगा वह देखनेमें नहीं आया। बहुत तलाशसे एक
छपी हुई लीथोकी कापी मैंने दिल्लीसे प्राप्त की। वह संव
की छपी हुई है। उसे पढ़ा तो बहुत अशुद्ध पाया। इस
लिये खोज आरम्भ की। बड़ी कठिनाईसे कलकत्तेमें एक
यहांसे संवत् १९८४ की छपी हुई एक लिपि प्राप्त की
उसको मिलाया तो बहुत अन्तर निकला। पर अशुद्ध व
लिपि भी है। जैसे बना उसे शुद्ध किया गया पर दूसरेकी
में अपनी ओरसे कुछ बनानेका अधिकार नहीं है। इस
बिल्कुलही कुछ समझमें नहीं आया वहां अब भी कुछ कुछ
रह गई है। और शुद्ध लिपि कहींसे मिली तो दूसरी बार
सहायता लेनेकी चेष्टा की जायगी।

दूसरी कविता "भंवरगीत" पहले पहल नवलकिशोरप्रेसके
हुए सूरसागरमें देखी थी। उसकी भी संवत् १९८४ की छपी
लिपि प्राप्त हुई। उसी लिपिकी लिपि छापी गई है। इसमें अशु
कुछ कम मिलती है, कारण यह कि अभीतक यह कविता बाज
पोथियोंमें नहीं जाने पाई। यह दोनों कविताएं ब्रजभा
ऊंचे दरजेकी कविताके नमूने हैं। अष्टछापके कवि बहुत
... थे और उन्हींके समयमें ब्रजभाषाकी सबसे
... और ... मंजी और स्वच्छ हुई थी
... मोल है यह इतनी अच
... कोई इसकी ओर ध्यान न

रासपंचाध्यायी ।

पहला अध्याय ।

वन्दन करौं कृपानिधान श्रीशुक शुभकारी ।
शुद्ध ज्योतिमय रूप सदा सुन्दर अविकारी ॥
हरि लीला रस मत्त मुदित नित विचरत जगमें ।
अद्भुत गति कहुं नहीं अटक ह्वै निकसे मगमें ॥ २
नीलोत्पल-दल-श्याम अंग नव-जोबन भ्राजै ।
कुटिल-अलक मुख-कमल मनौं अलि अवलि विराजै ॥ ३
सुंदर भाल विसाल दिपति मनौं निकर निसाकर ।
कृष्ण-भक्ति प्रतिबिम्ब तिमिरको कोटि दिवाकर ॥ ४
कृपा रंग रस ऐन नैन राजत रतनारे ।
कृष्ण-रसामृत-पान-अलस कछु घूम घुमारे ॥ ५
श्रवण कृष्ण रस भरन गंड मंडल भल दरसे ।
प्रेमानन्द मिलि तासु मन्द मुसिकान मधु बरसे ॥ ६
उन्नत नासा अधर बिंब सुकको छबि छीनी ।
तिन बिच अद्भुत भांति लसत कछु इक मसभीनी ॥ ७
कम्बु-कण्ठकी रेख देखि हरि धर्म प्रकासे ।
काम क्रोध मद लोभ मोह जिहिं निरखत नासे ॥ ८
उरवर पर अति छबिकी भीरा बरनि न जाई ।
जिंह भीतर जगमगति निरन्तर कुंवर कन्हाई ॥ ९
सुन्दर उदर उदार रोमावलि राजत भारी ।
हिय-सरवर रस भरी चली मानौं उमगि पनारी ॥ १०

रासपंचाध्यायी।

पहला अध्याय।

वन्दन करौं कृपानिधान श्रीसुक सुभकारी।
सुद्ध ज्योतिमय रूप सदा सुन्दर अविकारी॥
हरि लीला रस मत्त मुदित नित बिचरत जगमें।
अद्भुत गति कहुं नहीं अटक ह्वै निकसै मगमें॥ २
नीलोत्पल-दल-स्याम अंग नव-जोबन भ्राजैं।
कुटिल-अलक मुख-कमल मनौं अलि अवलि बिराजैं॥ ३
सुंदर भाल बिसाल दिपति मनौं निकर निसाकर।
कृष्ण-भक्ति प्रतिबिम्ब तिमिरकौं कोटि दिवाकर॥ ४
कृपा रंग रस ऐन नैन राजत रतनारे।
कृष्ण-रसामृत-पान-अलस कछु घूम घुमारे॥ ५
स्रवण कृष्ण रस भरन गंड मंडल भल दरसै।
प्रेमानन्द मिलि मासु मन्द मुसिक्यान मधु बरसै॥ ६
उन्नत नासा अधर बिंब सुकको छबि छीनी।
तिन बिच अद्भुत भांति लसत कछु इक मसभीनी॥ ७
कम्बु-कण्ठकी रेख देखि हरि धर्म्म प्रकासैं।
काम क्रोध मद लोभ मोह जिहिं निरखत नासैं॥ ८
उरवर पर अति छबिकी भीरा बरनि न जाई।
जिंह भीतर जगमगति निरन्तर कुंअर कन्हाई॥ ९
सुन्दर उदर उदार रोमावलि राजत भारी।
हिय-सरवर रस भरी चली मानौं उमंगि पनारी॥ १०

रासपंचाध्यायी।

पहला अध्याय।

बन्दन करौं कृपानिधान श्रीसुक सुभकारी।
सुद्ध ज्योतिमय रूप सदा सुन्दर अविकारी॥
हरि लीला रस मत्त मुदित नित बिचरत जगमें।
अद्भुत गति कहुँ नहीं अटक ह्वै निकसे मगमें॥ २
नीलोत्पल-दल-स्याम अंग नव-जोबन भ्राजै।
कुटिल-अलक मुख-कमल मनौं अलि अवलि बिराजै॥ ३
सुंदर भाल बिसाल दिपति मनौं निकर निसाकर।
कृष्ण-भक्ति प्रतिबिम्ब तिमिरकौं कोटि दिवाकर॥ ४
कृपा रंग रस ऐन नैन राजत रतनारे।
कृष्ण-रसामृत-पान-अलस कछु घूम घुमारे॥ ५
स्रवन कृष्ण रस भरन गंड मंडल भल दरसै।
प्रेमानन्द मिलि तासु मन्द मुसिक्यान मधु बरसै॥ ६
उन्नत नासा अधर बिंब सुककी छबि छीनी।
तिन बिच अद्भुत भाँति लसत कछु इक मसभीनी॥ ७
कम्बु-कण्ठकी रेख देखि हरि धर्म प्रकासै।
काम क्रोध मद लोभ मोह जिहिं निरखत नासै॥ ८
उरवर पर अति छबिकी भीरा बरनि न जाई।
जिहिं भीतर जगमगति निरन्तर कुँवर कन्हाई॥ ९
सुन्दर उदर उदार रोमावलि राजत भारी।
हिय-सरवर रस भरी चली मानौं उमँगि पनारी॥ १०

एक वार सवके सम्मुख फिरसे नई कर देने तथा कुछ
कालके लिये रक्षित कर देनेके उद्देश्यसे यह दोनों कवितायें
गई हैं।

मयुराकी छपी हुई रासपञ्चाध्यायीमें कहीं कहीं दो एक
भी शीर्षककी भांति मिलते हैं वह मैंने रहने दिये हैं पर दू
लिपियोंमें नहीं हैं।

कोमल किरन अरुन मानो बन व्याप रही यों ।
मनमथ खेल्यो फागु घुमड़ घुरि रह्यो गुलाल ज्यों ॥ ५२
फटिक छटासी किरन कुञ्ज रंध्रन जब आई ।
मानहु वितन बितान सुदेस तनाव तनाई ॥ ५३
मन्द मन्द चल चारु चन्द्रमा अति छवि पाई ।
झलकत है जनों रमारमण पिय कौतुक आई ॥ ५४
तब लीनी करकमल जोगमायासी मुरली ।
अघटत घटना चतुर बहुरि अधरन सुर जुरली ॥ ५५
जाकी धुनि तें निगम अगम प्रगटित बड़ नागर ।
नादब्रह्मकी जननि मोहनी सब सुखसागर ॥ ५६
पुनि मोहन सों मिली कछू कलगान कियो अस ।
बाम विलोचन बालनियन मनहरन होय जस ॥ ५७
मोहन मुरली नाद स्रवन कीनों सब किनहूं ।
यथा यथा विधि रूप तथा विधि परस्यो तिनहूं ॥ ५८
तरनि किरन ज्यों मणि पषान सबहिनकों परसै ।
सूरजकांति मणि बिना नहीं कहुं पावक दरसै ॥ ५९
सुनि सब चलीं ब्रजबधू गीत धुनिको मारग गहि ।
भवन भीत द्रुम कुञ्ज पुञ्ज कितहूं अटकी नहि ॥ ६०
नाद अमृतको पन्थ रंगीलो सूच्छम भारी ।
तेहि मग ब्रज तिय चलीं आन कोउ नहिं अधिकारी ॥ ६१
सुद्ध प्रेम मय रूप पञ्च भूतन तें न्यारी ।
तिन्हें कहा कोउ गहै ज्योति सी जगत उज्यारी ॥ ६२
जे रुकि गईं घर अति अधीर गुनमय सरीर बस ।
पुन्य पाप प्रारब्ध रच्यो तन नाहिं पच्यो रस ॥ ६३
परम दुसह श्रीकृष्ण बिरह दुःख व्याप्यो जिनमें ।
कोटि बरस लगि नर्क भोग अघ भुगते छिनमें ॥ ६४
पुनि रंचक धरि ध्यान पिया परिरंभ दियो जब ।
कोटि स्वर्ग सुख भोग छिनहिं मङ्गल कीनो सब ॥ ६५

योगमुगधर्जी प्रेमभरी नित बहत सुन्दरी।
मनि मन्दिर दोउ तीर उठत छवि अद्भुत लहरी॥ ३८
तहां इक मनिमय सिंहपीठ सोभित सुन्दर अति।
तापर षोड़श दल सरोज अद्भुत चक्राकृति॥ ३९
मधु कर्नीय कर्णिका मय सुख कन्दर सुन्दर।
तहं राजत ब्रजराज कुंवरवर रसिक पुरन्दर॥ ४०
निकर विभाकर दुति मेटत सुभ कौस्तुभमनि अस।
हरिके उर पर रुचिर निविड़ उर लागत पति जस
मोहन अद्भुत रूप, कहि न आवे, छवि ताकी।
अखिल अण्ड व्यापी जु ब्रह्म आभा है जाकी॥ ४२
परमातम परब्रह्म सबनके अन्तरजामी।
नारायन भगवान धर्मकर सबके स्वामी॥ ४३
बाल कुमार पौगंड धर्मरुचि लिये ललित तन।
धर्मी नित्य किसोर कान्ह मोहत सबको मन॥ ४४
गल मोतिनकी माल ललित बनमाल धरे पिय।
मन्द मधुर हरि पीत बसन फरकत करखत हिय॥ ४५
अस अद्भुत गोपाललाल सब काल बसत जहं।
याही तें बैकुण्ठ विभव कुण्ठित लागे तहं॥ ४६
जदपि सहज माधुरी विपिन सब दिन सुखदाई।
तदपि रंगीली सरद समै मिल अति छवि छाई॥ ४७
ज्यों अमोल नग जगमगाय सुन्दर जड़ाय सङ्ग।
रूपवन्त गुणवन्त बहुरि भूषन भूषित अङ्ग॥ ४८
रजनी सुख सुख देखि ललित प्रफुलित जो मालती।
ज्यों नवजोबन पाय लसत गुनवती बाल ती॥ ४९
छवि सों फूले फूल अवर अस लगी सुगाई।
मनहु सरदकी छिपा छबीली बहसन आई॥ ५०
ताही छिन उडराज उदित रसरास सहायक।
कुमकुम मंडित प्रिया बदन जनों नागर नायक॥ ५१

याही रस भोपीं, गोपीं सब तियन सुं न्यारी।
कमलनयन गोविन्दचन्दको प्रान सुं प्यारी ॥ ८०
जिनके नूपुर नाद सुनत जब परम सुहाये।
तब हरिके मन नयन सिमिटि सब स्रवनन आये ॥ ८१
रुनक भुनक पुनि भली भांति सों प्रगट भई जब।
पियके अंग अंग सिमट मिले हैं रसिक नयन तब ॥ ८२
सबके मुख अवलोकत पियके नैन बने यों।
स्वच्छ सुंदर ससि मांझ अरबरे है चकोर ज्यों ॥ ८३
अति आदर करि लई भरे चहुंदिसि ठाढ़ी अनु।
छटा छबीली छेंकि रही मृदुघन मूरति जनु ॥ ८४
नागर नगधर मन्द मन्द हंसि मन्द मन्द तब।
बोले बांके बैन प्रेमके परम ऐन सब ॥ ८५
उज्जल रसकी यह सुभाव बांकी छबि, पावै।
बहु चहन अरु कहन बहु अति रसहि बढ़ावै ॥ ८६
ये सब नवलकिसोर गोरि भरि प्रेम महारस।
तातें समुझ परी कीन्हीं पिय परम प्रेम बस ॥ ८७
जैसे नायक गुन स्वरूप अति रसिक महा है।
सब गुन मिथ्या होय नेक जो बहु न चाहैं ॥ ८८
कैउक बचन कहे नरम कहे कैऊं रस बर कर।
कैउक कहैं तियधर्म भर्म भेदक सुन्दर बर ॥ ८९
मान रमालके बहु बचन सुनि चकृत भई यों।
बान-मृगनकी मान सघन बन भूलि परी त्यों ॥ ९०
मन्द परस्पर हंसीं लसीं तिरछी अंखियन अस।
रूप उदधि इतरात रङ्गीली मीनपांति जस ॥ ९१

दोहा—

सो हंसि हंसि ऐसे कह्यौ सुन्दर सबको राउ।
हमरो दरस तुमैं भयो अपने घरको जाउ ॥ ९२

धातु पाथ पाषान परसि कञ्चन ह्वै सोहै।
नन्द सुवन सों परम प्रेम यह अचरज को है॥ ६६
तें पुनि तिहिं मग चली रङ्गीली तजि गृह सङ्गम।
जनु पिंजरन तें छुटे छुटे नव-प्रेम-विहङ्गम॥ ६७
कोउ मदनो गुनमय सरीर रति सहित चलीं दुकि।
मात पिता पति बन्धु भवन भुकि नाहिं रहीं रुकि॥ ६८
सावन सरिता रुकें रहत करो कोटि जतन अति।
कृष्ण हरे जिनके मन ते क्यों रुकें अगम गति॥ ६९
चलत अधिक छवि फवित स्रवण मनि कुंडल झलकें।
मद्दित लोचन चपल ललित श्रुत विलुलित अलकें॥ ७०
जदपि कहूं के कहूं बधुन आभरन बनाये।
हरि पियको अनुसरत जहांके तहं चलि आये॥ ७१
कहूं दिखियत कहूं नाहिं सखी बन बीच बनी यों।
बिजुरिन कीसी छटा सघन बन मांझ चली ज्यों॥ ७२
आय उमगि सों मिलीं रङ्गीली गोपबधू अस।
नन्दसुवन-सागर-सुन्दर सों प्रेम नदी जस॥ ७३
परम भागवत रत्न रसिक जु परीक्षित राजा।
प्रश्न कियो रस पुष्टि करन निज सुखके काजा॥ ७४
श्रीभगवत को पाव जानि जग के हितकारी।
उदर दरीमें करी कान्ह जाकी रखवारी॥ ७५
जाको सुन्दर स्याम कथा छिन छिन प्रिय लागे।
ज्यों लम्पट पर जुवति बात सुनि सुनि अनुरागे॥ ७६
हो मुनि क्यों गुनमय सरीर परहरि पाये हरि।
जो न भजे कमनीय कान्ह नहिं ब्रह्मभाव करि॥ ७७
तब कहि श्रीसुकदेव देव यह अचरज नाहीं।
सर्वभाव भगवान कान्ह जिनके हिय माहीं॥ ७८
परम-दुष्ट सिसुपाल बालपन तें निन्दक अति।
जोगिन को जो दुर्लभ सुरलभ सो पाई गति॥ ७९

जब पिय कह्यौ घर जाउ अधिक चिन्ता चित बाढ़ी।
पुतरिनकीसी पांति रहिं गईं इक टक ठाढ़ी ॥ ८३
दुखसे दबि छबि सीव ग्रीव लैचली नालसी।
अलक अलिनके भार भ्रमित जनौं कमल मालसी ॥ ८
हिय भरि बिरह हुतास उसांसन संग आवत भर।
चले कछुक मुरझाय मधुभरे अधर बिंबवर ॥ ८५
तब बोली ब्रजबाल लाल मोहन अनुरागी।
सुन्दर गदगद गिरा गिरधरहिं मधुरी लागी ॥ ८६
अहो मोहन अहो प्राणनाथ सुन्दर सुखदायक।
क्रूर बचन जिन कहौ नाहिं ये तुमरे लायक ॥ ८७
जब कोऊ बूझै धर्म तबौ तासौं कहिये पिय।
बिन पूछेही धर्म कतक कहिये दहिये हिय ॥ ८८
नेम धर्म जप तप ये तब कोऊ फलहिं बतावें।
यह कहुं नाहिन सुनी जु फल फिर धर्म सिखावें ॥ ८
अरु तुम्हरी यह रूप धर्मके धर्महिं मोहै।
घरमें को तिय धर्म धर्म या आगे कोहै ॥ १००
तैसिय पियकी मुरली मुरली अधर सुधारस।
सुनि निज धर्म न तजें तरुनि त्रिभुवनमें को अस ॥ १०
अग जग और जगतको कैसो धर्म रह्यो है।
जानि कै रही पिया पद न कछु जात कह्यो है ॥ १०२
अब तुमरे कर कमल महा दूतौ यह मुरली।
नारि सबनके धर्म नेम धरमन हर मुरली ॥ १०३
सुन्दर पियको बदन निरखिके को नहिं भूलै।
रूप सरोवर माझ मरम अम्बुज जनौं फूलै ॥ १०४
कुटिल-अलक मुख कमल मनौं मधुकर मतवारे।
तिनमें मिलि गये नयन मदन पिय मीन हमारे ॥ १०५
तिरछनि भौंहकमान भौंह जनौं मदन धासौं।
निदर हंसनी चन्दि मन्द मुसकनि मृदु बांसी ॥ १०६

इत तुलसी छवि हुलसी झांइत परिमल पूटे ।
उत कमोद आमोद गोद भरि भरि मुख लूटे ॥ १२१
फूलन माल बनाय लाल पहरत पहरावत ।
सुमनसरोज सुधाधर चोज मनोज बढ़ावत ॥ १२२
उज्ज्वल मृदुल बालुका कोमल सुभग सुहाई ।
श्रीजमुनाजी निज तरङ्ग करि यह सुवनाई ॥ १२३
बैठे तह सुन्दर सुजान सुखके निधान हरि ।
बिलसित विविध बिलास हासरस हिय हुलास भरि ॥ १[illegible]
परिरम्भन चुम्बन कर नख नीबी कुच परसत ।
सरसत प्रेम अनङ्ग रङ्गनव घन ज्यों बरसत ॥ १२५
तब आयो वह काम पञ्चसर कर हैं जाके ।
ब्रह्मादिक कों जीत बढ़ि रह्यो अति मद ताके ॥ १२६
निरखत ब्रजबधू सङ्ग रङ्ग भीने किसोर तन ।
हरि मन्मथ को मथ्यो उलटि वा मन्मथ को मन ॥ १२७
मुरछि पर्यो तहं नेक कहूं धनु कहुं निषंग सर ।
रति देखत पति दसा भोत भइ मारत उर कर ॥ १२८
पुनि पुनि पियहि आलिङ्गत रोवत अति अनुरागी ।
मदन हि बइनामृत छुवाय भुज भरि लै भागी ॥ १२९
अस अद्भुत मोहन पिय सौं मिलि गोप दुलारी ।
आनन्द नाहिन गरब होय गिरधरकी प्यारी ॥ १३०
रूपभरी गुनभरी भरी पुनि परम प्रेमरस ।
क्यों न करे अभिमान कान्ह भगवान भयो बस ॥ १३१
नदी नीर गम्भीर तहां अति भंवरी परहीं ।
छिलछिल सलिल न परे परे तो छवि नहीं धरहीं ॥ १३२
प्रेमपुञ्ज बरधन कारन ब्रजराज कुंवर पिय ।
मंजु कुञ्ज में तनक दुरे अति प्रेम भरे हिय ॥ १३३

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे रामक्रीड़ा वर्णन
रसिक जीवन प्राणनाम प्रथमोध्यायः ।

हे सखि हे मृगवधू इनेंकिन पूछहु अनुसरि।
डहडहे इनके नैन अबहिं कहुं देखे हैं हरि॥ १३
अहो सुभग बन सुगंधि पवन संग थिर जु रही चलि।
सुखके भवन दुखदमन रमन इतते चितये बलि॥ १४
अहो चम्पक अहो कुसुम तुम्हें छबि सबसौं न्यारी।
नेक बताय जु देउ जहां हरि कुञ्जबिहारी॥ १५
अहो कदम्ब अहो निंब अम्ब क्यों रहे मौन गहि।
अहो बट उतंग सुरङ्ग बीर कहु तुम इत उत लहि॥ १६
अहो असोक हरिसोक लोकमनि पियहि बतावहु।
अहो पनस सुभ सरस मरत तिय अमिय पियावहु॥ १७
जमुन निकटके बिटप पूछि भई निपट उदासी।
क्यों कहिहैं सखि अतिकठोर ये तीरथवासी॥ १८
हे जमुना सब जानि बूझि तुम हठहिं गहत हो।
जो जल जग उद्धार ताहि तुम प्रगट बहत हो॥ १९
अहो कमल मुख बदन कहो तुम कहुं हरि निरखे।
कमलमाल बनमाल कमलकर अतिहीं हरखे॥ २०
हे अवनी नवनीत चोर चितचोर हमारे।
राखे कितहुं दुराय बता देउ प्रानपियारे॥ २१
हे तुलसी कल्यानि सदा गोविन्द पद प्यारी।
क्यों न कहो तुम नन्द सुवन सों बिथा हमारी॥ २२
जहं आवत तम-कुञ्ज-पुञ्ज गहवर तरुछाई।
अपने मुख चांदने चलत सुन्दर बन माई॥ २३
इहि बिधि बन घन ढूंढि बूझि उनमतकी नाई।
करन लगी मनहरन लाल लीला मन भाई॥ २४
मोहन लाल रसालकी लीला इनहीं सोहै।
केवल तनमय भई कछु न जाने हम को है॥ २५
हरिकी सी मृदु मुलन बिलोकन हरिकी हेरन।
हरिकी सी गायन घेरन टेरन पट फेरन॥ २६

अन्य कहत भईं नाहिं नाहिं कछु मनमें कोपीं।
निरमत्सर संतन की है चूड़ामणि गोपीं ॥ ४१
उन नीके आराधे हरि ईश्वर वर जोई।
ताते निधरक अधरसुधारस पीवत सोई ॥ ४२
सोऊ पुनि अभिमान भरी जब कहन लगी तिय।
मोपे चल्यो न जाय जहां तुम चलन चहत पिय ॥ ४३

दोहा।

पिया संग एकान्तरस विलसत राधानारि।
कन्ध चढ़न हरि सों कह्यो याते तज्यो मुरारि ॥

पुनि आगे चलि नेक दूरि देखी सोईं ठाढ़ी।
लखी-सुन्दर नन्दसुवन पिय अति रति बाढ़ी ॥ ४५
गोरे तनकी जोति छूटि छवि छाय रही धर।
मानों ठाढ़ी सुभग कुंवरि कंचन अवनी पर ॥ ४६
जनो घन तें बिछुरी बिजुरी मानिनि तनु काछें।
किधौं चन्दसों रूसि चन्द्रिका रहि गई पाछें ॥ ४७
नैनन ते जल धार हार धोवत धर धावत।
भंवर उड़ाय न सकत बास बस मुख ढिंग आवत ॥

तेहिलै तहंते चोरि वहुर जमुना तट आई।
नन्द नन्दन जगवंदन पिय जहं लाड़ि लड़ाई॥ ५४

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे दशमस्कंधे रासक्रीड़ायां नन्ददास कृतौ गोपी विरह वर्णनोनाम द्वितीयोऽध्यायः॥

तीसरा अध्याय।

कहन लगीं यह कुंवर कान्ह ब्रज प्रगटे जबतें।
अवध भूति इन्दिरा अलंकृत होरहीं तबतें॥ १
सबको सब सुख बरसत ससि ज्यौं बढ़त बिहारी।
तिनमें पुनि ये गोपबधू प्रिय निपट तिहारी॥ २
नैन मूंदिबो महाअस्त्र लै हांसी हांसी।
मारत हो कित सुरतनाथ बिन मोलकी दासी। ३
बिषतें जलतें ब्याल अनलतें दामिनि झरतें।
क्यौं राखी नहिं मरन दई नागर नगधर तें॥ ४
जसुदा सुत जनु तुम न भये पिय अति इतराने।
बिस्व कुसल कारन बिधना बिनती करि आने॥ ५
अहो मित्र अहो प्राननाथ यह अचरज भारी।
अपने जनकों मारि करिहौ काको रखवारी॥ ६
जब पसु चारन चलत चरन कोमल धरि बनमें।
सिल तृण कण्टक अटकत कसकत हमरे मनमें॥ ७
प्रनत मनोरथ करन चरन सरसीरुह पियके।
कब घटि ऐहै नाथ हरत दुख हमरे हियके॥ ८
कहं यह हमरी प्रीति कहां तुमरो निठुराई।
मनि पखानतें खचै, दईतें, कछु न बसाई॥ ९

फनी फनन पर धरयो डरयो नाहिं नेकु तब।
क्षतियन पर पग धरत डरत हौं कान्हकुँवर अब ॥ २४
जानत हैं हम तुम जु डरत ब्रजराज दुलारे।
कोमल चरन सरोज सरोज कठोर हमारे ॥ २५
सनैं सनैं पिय धरौ हमहुँ तौ निपट पियारे।
जित घटवीमें घटत गड़त तृन कूप अन्यारे ॥ २६

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे दशमस्कन्धे रासक्रीडायां नन्ददास कृती गोपिका गतिउपालंभो भवरसानं नाम तृतीयोऽध्यायः।

चौथा अध्याय।

इहि विधि प्रेम सुधानिधि बढ़ि गई अधिक कलोलें।
विह्वल होगईं बाल लाल सौं अनबन बोलें ॥ १
तब तिनहीमें प्रगट भये नँद नन्दन पिय यों।
दृष्टि बन्द करि दुरै बहुरि प्रगटै नटवर ज्यों ॥ २
पीतवसन बनमाल धरे मंजुल मुरली कर।
मन्द मधुर मुसिक्यान निपट मन्मथके मनमथ ॥ ३
पियहिं निरखि तियवृन्द उठीं सब एकवार यौं।
फिरि घट पाये प्रान बहुरि उभरत इन्द्री ज्यौं ॥ ४
महा क्षुधितको भोजन सौं ज्यों प्रीति-सुखी है।
ताहू तें सतगुनी सहस पुनि कोटि गुनी है ॥ ५
कोउ चटपट सौं भपटि कोउ पुनि उरबर लपटी।
कोउ गर लपटी कहत भले जू कान्दर कपटी ॥ ६
कोउ सादर सतबरकी गहि रहि दोउ कर पटुका।
मनौ नवघनतें सरकी दामिनि दामन पटुको ॥ ७

टौरिनिपटि गई मन्दिर आन सुख कहत न आवै।
मीन उछरिकै पुलिन परै पुनि पानी पावै ॥ ८
कोउ पिय भुजनी लटकि मटकि रहि नारि नवेली।
मनो सुन्दर सिङ्गार बिटप लपटी छबि बेली ॥ ८
कोउ कोमल पद कमल कुचन बिच राखि रही यौं।
परम निधन धन पाय हियें सौं लाय रहत ज्यौं ॥ १०
कोऊ पियकी रूप नैन भरि, उर धरि ध्यावत।
मधुमाखी ज्यौं देखि दसौंदिस प्रति छबि पावत ॥ ११
कोउ दसनन दियें अधर बिंब गोविन्दहिं ताड़त।
कोउ एक नैन चकोर चाह मुख चन्द निहारत ॥ १२
कहुं काजल कहुं कुमकुम कहुं एक पीक लगी बर।
तहं राजत ब्रजराज कुंवर कन्दर्प दर्प हर ॥ १३
बैठे पुनि तिहिं पुलिनहि परमानन्द भर्यौ है।
कबिलिन अपनी कादन छवि सुबिछाय दर्यौ है ॥ १४
एक एक हरिदेव सबहिं आसन पर बैसे।
किये मनोरथ पूरन जाके है मन जैसे ॥ १५
जो अनेक जोगेश्वर हियमें ध्यान धरत हैं।
एकहिं बेर रूप इक सबको सुख बितरत हैं ॥ १६
जोगीजन बन जाय जतन करि कोटि जनम पचि।
अति निर्मल करि राखत हियेमें आसन रचि रचि ॥ १७
ताकु छिन तहं नहिं जात नवलनागर सुंदर हरि।
ब्रज जुवतिनके अम्बर पर बैठे अतिरुचिकरि ॥ १८
कोटिकोटि ब्रह्मांड जदपि एकहिं ठकुराई।
ब्रजदेविनकी सभा सांवरे प्रति छबि पाई ॥ १८
ज्यौं नवदल मण्डल मैं अमल कर्णिका भ्राजै।
त्यौं सब सुन्दरि सम्मुख सुन्दर स्याम बिराजै ॥२०
सुभग स्यामी नवल बाल नन्दलाल पियहिं सब।
प्रीति रीतिकी बात सबहिं मुसकात जात सब ॥ २१

इक भजतें कौ भजें एक बिन भजतेहिं भजहीं।
कहौ काम्ह ते कवन,याहि,जे दोउन तजहीं ॥ २२
जदपि जगत-गुरु नागर-नग-धर नन्द दुलारे।
तदपि गोपियन प्रेम विवस अपने मुख हारे ॥ २३
जे भजते कौं भजैं,आपने स्वारथके हित।
जैसे पसु परस्पर चाटत सुख मानत चित ॥ २४
जे अन भजते भजैं वहे धर्मी सुख कारी।
जैसे मात पिता जु करैं सुतकी रखवारी ॥ २५
जे दोउन कौ तजैं तिनहिं आनी ज्ञानी तिय।
आप काम अथवा गुरु द्रोही,अकृतज्ञ हिय ॥ २६
तब बोले ब्रजराज कुँवर हौं ऋणी तुम्हारे।
अपने मनतें दूरि,करौ किनि दोष हमारे ॥ २७
कोटि कल्प लगि तुमप्रति प्रति-उपकार करूँ जौ।
हे मनहरनी तरुनी उरिनी नाहिं होउ तौ ॥ २८
सकल विश्व अपवस करि सो माया मोहत है।
प्रेम मई तुमरी माया सो मो मोहत है ॥ २९
तुम जु करी सो कोउ न करै सुनि नवलकिसोरी।
लोक वेदकी सुदृढ़ शृङ्खला तृन सम तोरी ॥ ३०

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे दशमस्कन्धे रासक्रीडायां नन्द
नन्दनस्य गोपीविरहतापोपशमनं नाम चतुर्थोऽध्यायः।

पाँचवाँ अध्याय।

सुनि पियके रस बचन क्रोध सब छाँड़ियो है।
विहँसत अपने वदन लाल मगाय भयो है ॥ १

एक एक हिरदय माधुरि मूरति रसभीनी ।
मनकामना यज्ञ युवति मनोरथ पूरन कीनी ॥ २
कल्प वृक्ष शाइ श्रुनिय सघन विलास फलदायक ।
हे ब्रजराज कुमार, सबहिं सुखदायक नायक ॥ ३
कोटि कल्प तरु प्रगत नमत पद पङ्कज छाहीं ।
काम धेनु पुनि कोटि कोटि लुनुठित रज माहीं ॥ ४
सो पिय भये अनकूल तूल कोउ नाहिं भयो अब ।
नरवधि सुखको मूल मूल उनमूल किये सब ॥ ५
तब या रातहिं तेहि सुरतरु तर सुन्दर गिरधर ।
आरंभित अद्भुत सुरास वहि कमलचक्र पर ॥ ६
एक काल ब्रजबाल लाल तहं चढ़े जोरि कर ।
तिमस्न इत उत होत सबै निर्तत विचित्रवर ॥ ७
मनि दर्पन सम अवनि रमनि तापर छवि देहीं ।
विलुलित कुंडल अलक तिलक झुकि झांइं लेहीं ॥ ८
कमल कर्णिका मध्य जु स्यामास्याम बनी छवि ।
है है गोपिन बीच जु मोहन लाल रहे फवि ॥ ९
सूरत एक अनेक देखि अद्भुत सोभा अस ।
मंजुमुकुर मंडल मधि बहु प्रतिबिम्ब बधू जस ॥ १०
सकल तियनके मध्य सांवरो पिय सोभित अस ।
रत्नावलि मधि नीलमणी अद्भुत झलकै जस ॥ ११
नव-मरकत-मनि स्याम कनक-मणिगण ब्रजबाला ।
वृन्दावनको रीझि मनों पहिराई माला ॥ १२
नूपुर कङ्कन किंकिन करतल मञ्जुल मुरली ।
ताल मृदंग उपङ्ग चंग ऐकै सुर जुरली ॥ १३
मृदुल मधुर टंकार ताल झंकार मिली धुनि ।
मधुर जन्त्रको तार भंवर गुंजार रली पुनि ॥ १४
तैसिय मृदुपद पटकनि चटकनि कटतारन की ।
लटकनि मटकनि झलकनि कल कुंडल हारन की ॥ १५

सांवरे पियके संग नृतनयीं ब्रजकी बाला ।
जनु घनमंडल-मञ्जुल खेलति दामिनि माला ॥ १६
छबिलि तियनके पाछें पाछें बिलुलित बेनी ।
चञ्चल रूप लसत संग डोलत जनु चलसैनी ॥ १७
मोहन पियकी मुसकनि ढनकनि मोर मुकटकी ।
सदा बसौ मन मेरे फरकनि पियरे पटकी ॥ १८
बदन कमल पर अलक छुटी कछु श्रम की झलकनि ।
सदा रहौ मन मेरे मोरमुकुट की ढलकनि ॥ १९
कोउ सखी कर पकरत निरतत यौं छबिली तिय ।
मानौ करतल फिरत देखि नट लट्टू होत पिय ॥ २०
कोउ नायकके भेद भाव लावण्य रूप रस ।
अभिनय कर दिखरावत यह गावत पियके जस ॥ २१
नव नागर नन्दलाल चाह चित चकित भयेयौं ।
निज प्रतिबिम्ब बिलास निरखि सिसु भूल रहत ज्यौं ॥ २२
रीझि परस्पर बारत अम्बर आभरन अङ्गके ।
अम्बर तिहि छिन ममत तहां अद्भुत रङ्ग रङ्गके ॥ २३
कोउ मुरली रसभरी रसीली रसहिं बढ़ावत ।
कोउ मुरलीकों रोकि छबीली अद्भुत गावत ॥ २४
ताहि सांवरे कुंवर रीझि हंसि लेत भुजन भरि ।
चुंबन कर मुख सदन बदन तें देत सोम ढरि ॥ २५
जगमें जो सङ्गीत रीत सुर नर रीझत जिहिं ।
सो ब्रज तिय के सहज गमन आगम गावत तिहिं ॥ २६
जो ब्रजदेवी निरतत मंडल रास महा छबि ।
सो रस कैसे बरनि सकें ऐसो है को कवि ॥ २७
राग रागिनी समय बिनकों कोनिसो सुहायो ।
सो कैसे कवि चाहे जो ब्रजदेविन गायो ॥ २८
पीत पौन भुव मिलि केलि कलनाद मठो अति ।
सटकि लटकि मुरि निरतन सोहै बहि आवत गति ॥ २९

छबिसों निरतन लटकेन भटकनि मंडल डोलनि।
कोटि अमृत सम मुसकनि,मंजुल ताथेई बोलनि ॥ ३१
कोउ उतते अति गावत सुरलय लेततान,नइ।
नव संगीत जु छेके, सुन्दरि गान करत भइ ॥ ३२
अपनी निज गति भेद,सबै निरतन लागी तब।
गंधव मोहे ताकिन सुन्दर गान करत जब ॥ ३३
भुज दंडन सों मिलत ललित मंडल निर्तत छबि।
कुंडल,कच सों उरझि सुरझि,जहां बड़े कबि ॥ ३४
पियके मुकट,की लटकनि मटकनि,मुरली रव भरे।
कुहकि कुहकि मनों नाचत मंजुल-मोर,भरे रस ॥ ३५
सिरतें सुमन सुदेसजु बरसत,अति,आनन्द भरि।
मनो पदगति पर रीझि अलक्ष पूजत फूलनि झरि ॥ ३६
श्रमजल सुन्दर बिन्दु रंगभरि अति छबि बरसत।
प्रेम भक्ति बिरवा जिनके तिनके हिय सरसत ॥ ३७
वृन्दावनको त्रिबिधि पवन बिजना सुबिलोलें।
जहं जहं श्रमित बिलोकत तहं तहं रस भरि डोलें ॥ ३८
बड़े भवन पटवासन मण्डल मंडित ऐसे।
मनहुं सघन अनुराग घटाघन घुमड़न जैसे ॥ ३९
ताको धूंधर मध्य मत्त अलि भरमत ऐसें।
प्रेम आनन्द गोलक मधु छबि उपजत जैसे ॥ ३९
कुसुम धूर धूसरी कुञ्ज मधुकरनि पुञ्ज जहं।
प्रेम रस आवेस कटाक्ष कीन्हों प्रवेस तहं ॥ ४०
नन्दनन्दनको मिलें अति सुख देनी सरसें।
सुन्दर सुमन सेज बिरचत अति आनन्द हिय बरसें ॥ ४१
प्रथम कह्यो अति रस्यो रच्यो वह मंडल भारी।
ताहि रास रस कह्यो भयो अति प्रीति हमारी ॥ ४२
बिहरनि रति परिहास जु ह स्याम रसमातर।
कुञ्जन प्रेम सुहावत सागर भव दुख भागर ॥ ४३

हार हारमें उरझि उरझि बहियां में बहियां ।
नीलपीत पट उरझि उरझि बेसर नथ सइयां ॥ ४४
श्रमभरे सुन्दर अङ्ग सरस अति मिलत ललित गति ।
अंसन पर भुजदिये लटक सोभा सोभित अति ॥ ४५
टूटी मुक्तन माल छूटि रही सांवरे उरपर ।
गिरतें जिमि सुरसरी गिरी द्वैधार धारिधर ॥ ४६
अद्भुत रस रह्यौ रासगीत धुनि सुनि मोहे मुनि ।
सिला सलिल ह्वै चलीं सलिल ह्वै रह्यौ सिला पुनि ॥ ४७
रीझि सरदकी राति न जानें किती इक बाढ़ी ।
बिलसत सजनी स्याम यथा रुचि अति रतिगाढ़ी ॥ ४८
इहिं बिधि बिबिध बिलास हास सुखकुंज सदनके ।
चले जमुनजल क्रीडन बीडन कोटि मदनके ॥ ४९
उरसि मरगजी माल चाल मद गजगति झलकत ।
राजत रस भरे नैन गंडयल श्रमकन झलकत ॥ ५०
धाय जमुन जल धसे लसी छबि परत न बरनी ।
बिहरत मनु गजराज संग लिये तरुनी करनी ॥ ५१
तियगन तन झलमलत बदन तहं अति छबिछाये ।
फूलि रहे जनु जमन कनकके कमल सुहाये ॥ ५२
मुख अरविन्दन आगे जल अरबिन्द लगे अस ।
भोर भये भवननके दीपक मन्द परत जस ॥ ५३
मंजुल अंजुल भरि भरि पियकों तियजल मेलत ।
जनों अलिसों अरविन्दबृन्द मकरन्दनि खेलत ॥ ५४
छिरकत ह्वैं छल छैलि कमलजल अंजलि भरि भरि ।
अरुन कमल मंडली फाग खेलत रसरंग करि ॥ ५५
चलत दृगञ्चल चञ्चल अञ्चलमें झलकत अस ।
सरस कनकके कञ्जन खञ्जन जाल परत जस ॥
जमुनाजलमें दुरि मुरि कामिनि
मानों नवघन

कमलन तजि तजि अलिगन मुख कमलन आवत जब।
रुचिसों छबिसों बाल उपल जलमें दरसत तब ॥ ५८
कञ्चुक मिलि सब बाल लाल छिरकत है छबि अस।
मनसिज पायो राज आज अभिषेक होत जस ॥ ५९
तिनकी सुन्दर कांति भांति मनमोहन भावै।
बाल बैसकी छबि कविपै कछु कहत न आवै ॥ ६०
भीजि बसन तन लिपिटि निपट छबि अद्भुत है अस।
नैननिके नहिं बैन बैन के नैन नहीं जस ॥ ६१
नीर निचोरत जुवतिन देखि अधीर भये मनु।
तन चिकुरनकी पीर चीर रोवत असुवन जनु ॥ ६२
निरखि परस्पर छबिसों बिहरति प्रेम मदन भरि।
प्रकटति बासकी छाति अजहूं धरकति जिनके उर ॥ ६३
तब इक द्रुम तन चितय कुंवर बर आज्ञा दीनो।
निर्मल अम्बर भूषन तिन तहं बरसा कीनो ॥ ६४
अपनी अपनी रुचिके पहिरि बसन बनी सब।
जगत मोहिनी जे तिनको ब्रजतिय मोहनि सब ॥ ६५

दोहा।

यह जु सरद की जोति इक परम मनोहर रात
खेलत रास जु रसिक पिय प्रतिछिन नई नई भांत ॥

ब्रज मण्डल तें कुंवर कान्ह बर घर आये जब।
गोपन अपनी गोपी अपने ढिग जानी तब ॥ ६७
नित्य रासरस मत्त नित्य गोपीजन वल्लभ।
नित्य निगम जो कहत नित्य नवतन अति दुर्लभ ॥ ६८
यह अद्भुत रसरास महाछबि कहत न आवै।
शेष सहस मुख गावत तौहू अन्त न पावै ॥ ६९
शिव मनहीं मन ध्यावै काहू नाहिं जनावै।
सनक सनन्दन नारद सारद अति रस आवै ॥ ७०

हरि कीसी बनतें आवनि गायन रसरंगी।
हरि सम कन्दुक रचन नचन गित ललित त्रिभंगी॥ २७
कोउ श्रीदाम सुभाम, चढ़त कान्हरके कान्धे।
कोउ जसुमत है दाम कान्हे ऊखल सों बान्धे॥ २८
कोउ जमलार्जुन भंजत गंजत कालो वलको।
कोउ कहै मूंदो नैन सोच नहिं दावानलको॥ २९
कोउ गिरवर अंबरको कर धरि बोलत हैं तब।
निधरक रहितर होहु गोप गोपी गोधन सब॥ ३०
भृङ्गी भयते भृङ्ग होय वह कीट महाजड़।
कृष्णप्रेम ते कृष्ण होय कछु नहि अचरज बड़॥ ३१
तब पायो पियपद सरोजको खोज रुचिर तहँ।
धरिदर अंकुश कमल वालस अति जगमगात जहँ॥ ३२
जो रज अज शिव खोजत जोजत जोगीजन हिय।
सोरज वंदन करन लगीं सिर धरन लगीं तिय॥ ३३
तहं निरखे ढिंग जगमगात प्यारी पियके पग।
चितै परस्पर चकित भईं सुर चलीं तिही मग॥ ३४
चकित भईं सब कहैं कौन यह बड़ भागन अस।
परमकांत एकांत पाइ पीवत जु अधारस॥ ३५
आगे चलि अवलोकि एक नवपल्लव सैनो।
जहं पिय निज कर कुसुम सुसुम लै गूँथी वेनी॥ ३६
तह पायो एक मंजु मुकर मणि जटित बिलोले।
तिहिं पूंछत ब्रजबाल विरह भयो मौउन बोले॥ ३७
तरक करत आपुसमें कहो यह कहाँ कर लीनो।
तिनमें कोउ तिनके हितको नहिं उत्तर दीनो॥ ३८
वेनी गूंदन समय छैल पाछैं बैठे जब।
सुन्दर वदन बिलोकत सुखको अंत भयो तब॥ ३९
तातें मंजुल मुकर सुकर लै बाल दिखायो।

धन्य कहत भई साहि माहिं कछु मनमें कांपी।
गिर मतमर मंतन को है चूड़ामनि गोपी ॥ ४१
उन नीके आराधे हरि ईश्वर यर जोई।
तातें मिथरक अधरमुधारस पीवत सोई॥ ४२
कोउ पुनि अभिमान भरी जब कहन लगी तिय।
मोपै चल्यो न जाय जहां तुम चलन चहत पिय॥

दोहा।

पिया संग एकांतरस बिलसत राधानारि।
कन्ध चढ़न हरि सों कह्यो यातें तजी मुरारि

पुनि आगे चलि नेक दूरि देखी सोई ठाढ़ी।
जासों सुन्दर नन्दसुवन पिय अति रति बाढ़ी॥ ४५
गोरे तनकी जोति छूटि छवि छाय रही धर।
मानों ठाढ़ी सुभग कुंवरि कञ्चन अवनी पर॥ ४६
जनो घन तें बिछुरी बिजुरी माननि तनु काछैं।
किधौं चन्दसों रूमि चन्द्रिका रहि गई पाछैं॥ ४७
नैनन ते जल धार हार धोवत धर धावत।
भंवर उड़ाय न सकत बास बस मुख ढिग आवत॥
हासि हासि पिय महाबाहु यों बदति अकेली।
महा बिरहकी धुनि सुनि रोवत खग मृग बेली॥ ४
ता सुंदरिकी दसा देखी कछु कहत न आवै।
बिरह भरी पुतरी होय जों अति छवि पावै॥ ५०
धाय भुजन भर लई सबन लै लै उरलाई।
मनों महानिधि खोय मध्य आधी निधि पाई॥ ५१
कोउ चुम्बत मुख-कमल कोऊ सुसुधारत अलकें।
जामें पिय मृगमदकी सुन्दर श्रमकन झलकें॥ ५२
अपने अञ्चल रुचिर दृगञ्चल पोंछत तियके।
पीक भरे सुकपोल सोहा रद घात जहं पियके॥ ५३

तहिंलै तहंते चौरि बहुर जमुना तट चाईं।
नन्द नन्दन जगबंदन पिय जहं लाड़ि लड़ाईं ॥ ५४

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे दशमस्कंधे रासक्रीड़ायां नन्ददास कृतौ गोपी विरह वर्णनोनाम द्वितीयोऽध्यायः ॥

तीसरा अध्याय।

कहन लगीं यह कुँवर कान्ह ब्रज प्रगटे जबतें।
अवध भूति इन्दिरा अलंकृते होरहीं तबतें ॥ १
सबको सब सुख बरसत ससि जौं बदत बिहारी।
तिनमें पुनि ये गोपबधू प्रिय निपट तिहारी ॥ २
नैन मूंदिबो महाग्रस्त लै हांसी हांसी।
मारत हो कित सुरतनाथ बिन मोलकी दासी। ३
बिषतें जलतें ब्याल अनलतें दामिनि भरतें।
क्यों राखीं नहिं मरन दई नागर नगधर तें ॥ ४
जसुदा सुत जनु तुम न भये पिय अति इतराने।
बिश्व कुसल कारन बिधना बिनती करि आने॥ ५
अहो मित्र अहो प्राननाथ यह अचरज भारो।
अपने जनकों मारि करिहौ काको रखवारो ॥ ६
जब पसु चारन चलत चरन कोमल धरि बनमें।
सिल त्रण कण्टक अटकत खसकत हमरे मनमें ॥ ७
प्रनत मनोरथ करत चरण सरसीरुह पियके।
कहं घटि जैहै नाथ हरत दुख हमरे हियके ॥ ८
कहं यह हमरी प्रीति कहां तुमरी निठुराई।
मनि पषानतें खचे, दई, कछु न बसाई ॥ ९

जब तुम कानन जात सहस जुगसम बीतत छिन।
दिन बीतत जिहि भांति हमहिं जाने पिय तुम बिन
जब काननतें आवत सुंदर आनन देखें।
तब यह बिधना क्रूर करि धरी नैन निमेखें ॥ ११
बुधजन मनहरनी बानी बिन जरत सबै तिय।
अधर-सुधासव महति तनक प्यावहु ज्यावहु पिय ॥
यह पर तुमरी कथा अमृत सब ताप मिरावे।
अमरामरको तुच्छ करे ब्रह्मादिक गावे ॥ १२
जिहि यह प्रेमसुधाधर मोहन मुख देख्यो पिय।
तिनको जरन न मिटै रसिक संविद कोबिद हिय ॥
जदपि परम सुखधाम श्यामपियको लीलारस।
तदपि तिनहिं अवलोकन बिन अकुलाय गई बस ॥
ज्यों चन्दन चन्द्रमा तपन सब सीतल करहीं।
पिय बिरही जे लोग तिनहिं लगि आगि बिरतहीं ॥
छिन बैठत छिन उठत लोटने तिहि रज माहीं।
थोरे जल ज्यों मीन दीन आतुर अकुलाहीं ॥ १७
सकात भयतें अभय करन करकमल तिहारे।
कब धरि लैहैं नाथ तनक सिर छुवत हमारे ॥ १८
स्रवनमात्र मङ्गलदायक अम और न होई।
मोहन मुख निरखे बिन और सहाय न कोई ॥ १८
ललित मधुर मृदु हास तुम्हारो प्रेमसदन पिय।
मारन मनसिज बानसि चमकत प्रेमिनके हिय ॥ २०
चरणकमलतें तुम तु कठिन सुनहो मोहन पिय।
बेनु बजाय चुराय गऊ सों मोहि करी तिय ॥ २१
सात दिना दसि बगु सबै मजि तुम ढिग आईं।
जानि बूझि मदपान मगन बन मई फिरि आईं ॥ २२
अबहुं निठुर मधु किनधौं अधर तुमपै पायो।
मुरलीको जूठो अधरामृत पाय दियायो ॥ २३

फनी फननि पर धरत डरत नाहिं नेक तबै ।
कतियन पर पग धरत डरत क्यौं कान्हकुंवर अबै ॥ २४
जानत हैं हम तुम जु डरत ब्रजराज दुलारे ।
कोमल चरन सरोज उरोज कठोर हमारे ॥ २५
मनै मनै पिय धरौ हमहुं तौ निपट पियारे ।
कित अटवीमें अटत गडत तन कूर्प अन्यारे ॥ २६

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे दशमस्कन्धे रासक्रीडायां नन्ददास कृतौ गोपिका गतिउपालंभो भवरणनं नाम तृतीयोऽध्यायः ।

चौथा अध्याय

इहि विधि प्रेम सुधानिधि बढ़ि गई अधिक कलोलें ।
विकल होगई बाल लाल सौं अलबल बोलें ॥ १
तब तिनहीमें प्रगट भये नँद नन्दन पिय यौं ।
दृष्टि बन्द करि दूरे बहुरि प्रगटे नटवर ज्यौं ॥ २
पीतवसन बनमाल धरें मञ्जुल मुरली हय ।
मन्द मधुर मुसिक्यान निपट मन्मथके मन्मथ ॥ ३
पियहिं निरखि तियवृन्द उठीं सब एकबार यौं ।
फिरि घट आये प्रान बहुरि उभकत इन्द्री ज्यौं ॥ ४
महा क्षुधितको भोजन सौं ज्यों प्रीति सुनी है ।
ताउ तें सतगुनी सहस पुनि कोटि गुनी है ॥ ५
कोउ चटपट सौं झपटि कोउ पुनि उरवर लपटी ।
कोउ गरें लपटी कहत भले जु कान्हर कपटी ॥ ६
कोउ नागर नगधरकी गहि रहि दोउ कर पटकी ।
मनौ नवघनतें सटकी दामिनि दामन अटकी ॥ ७

टौंगिनिपटि महं मजिन मान मुख कहन न पावै।
मीन चहलिके पुलिन परे पुनि पानी पावै ॥ ८
कोउ पिय भुजमें सटकि सटकि रहि नारि नवेली।
मनो सुन्दर सिङ्गार बिटप लपटी छवि बेली ॥ ९
कोउ कोमल पद कमल कुचन बिच राखि रही यों।
परम निधन धन पाय हिये सों लाय रहत ज्यों ॥ १०
कोऊ पियको रूप नैन भरि, उर धरि धावत।
मधुमाखी ज्यों देखि टरीटिमि अति छवि पावत ॥ ११
कोउ दसनन दिये अधर बिंब गोविन्दहिं ताड़त।
कोउ एक नैन चकोर चारु मुख चन्द निहारत ॥ १२
कहुं काजल कहुं कुमकुम कहुं एक पीक लगी बर।
तहं राजत ब्रजराज कुंवर कन्दर्प दर्प हर ॥ १३
बैठे पुनि तिहिं पुलिनहि परमानन्द भयो है।
कबिलिन अपनी छादन छवि सुबिछाय दयो है ॥ १४
एक एक हरिदेव सबहिं आसन पर बैसे।
किये मनोरथ पूरन जाके है मन जैसे ॥ १५
जो अनेक जोगेस्वर हियमें ध्यान धरत हैं।
एकहिं बेर रूप इक सबको सुख बितरत हैं ॥ १६
जोगीजन बन जाय जतन करि कोटि जनम पचि।
अति निर्मल करि राखत हियेमें आसन रचि रचि ॥ १७
कछु छिन तहं नहिं जात नवलनागर सुंदर हरि।
ब्रज जुवतिनके अम्बर पर बैठे अतिरुचिकरि ॥ १८
कोटिकोटि ब्रह्मांड जदपि एकहिं ठकुराई।
ब्रजदेविनकी सभा सांवरे अति छवि पाई ॥ १९
ज्यों नवदल मण्डल में कमल कर्णिका भ्राजै।
त्यों सब सुन्दरि सम्मुख सुन्दर स्याम बिराजै ॥२०
बूझन लागीं नवल बाल नंदलाल पियहिं तब।
प्रीति रीतिकी बात मनहिं मुसकात जात सब ॥ २१

एक एक छिनकी माधुरि मूरति रसभीनी ।
मनकामना ब्रज युवति मनोरथ पूरन कीनी ॥ २
कल्प वृक्ष जड़ सुनियत सबन बिदित फलदायक ।
है ब्रजराज कुमार सबहिं सुखदायक नायक ॥ ३
कोटि कल्प तरु अमरन सहित पद पङ्कज छांहीं ।
काम धेनु पुनि कोटि कोटि बिलुठित रज माहीं ॥
सो पिय भये अनुकूल तूल कोउ नाहिं भयो अब ।
नरवधि सुखको मूल मूल उनमूल किये सब ॥ ५
तब वा रातहिं तेहि सुरतरु तर सुन्दर गिरधर ।
आरंभित अद्भुत सुरास बहि कमलनयनां पर ॥ ६
एक काल ब्रजबाल लाल तहँ चढ़े जोरि कर ।
तिसमन इत उत डोल सबै निर्तत विचित्रतर ॥ ७
मनि दर्पन सम अवनि रमनि तापर छबि देहीं ।
बिलुलित कुंडल अलक तिलक झुकि भौंहें लेहीं ।
कमल कर्णिका मध्य जु स्यामास्याम बनी छबि ।
द्वैद्वै गोपिन बीच जु मोहन लाल रहे फबि ॥ ८
मूरत एक अनेक देखि अद्भुत सोभा अस ।
मंजुमुकुर मंडल मधि बहु प्रतिबिम्ब बंधू जस ॥ १०
सकल तियनके मध्य सांवरो पिय सोभित अस ।
रत्नावलि मधि नीलमणी अद्भुत झलकै जस ॥ ११
नव-मरकत-मनि स्याम कनक-मणिगण ब्रजबाला ।
वृन्दावनकों रीझि मनों पहिराई माला ॥ १२
नूपुर कङ्कन किंकिन करतल मञ्जुल मुरली ।
ताल मृदंग उपङ्ग चंग ऐकै सुर जुरली ॥ १३
मृदुल मधुर टंकार ताल झङ्कार मिली धुनि ।
मधुर जन्त्रकी तार भंवर गुंजार रली पुनि ॥ १४
तैसिय मृदुपद पटकनि चटकनि कटतारन की ।
लटकनि मटकनि झलकनि कल कुंडल हारन की ।

सांवरे पियके संग नृततयौं ब्रजकी बाला।
जनु घनमंडल-मञ्जुल खेलति दामिनि माला ॥ १६
छबिलि तियनके पाछें आछें बिलुलित बेनी।
चञ्चल रूप ललन संग डोलत जनु अलिसैनी ॥ १७
मोहन पियकी मुसकनि ढलकनि मोर मुकटकी।
सदा बसौ मन मेरे फरकनि पियरे पटकी ॥ १८
बदन कमल पर अलक छुटी कछु स्रम की झलकनि।
सदा रहौ मन मेरे मोरमुकुट की ढलकनि ॥ १९
कोऊ भई कर पकरि निरतत यौं छबिली तिय।
मानौ करतल फिरत देखि नट लट्टू होत पिय ॥ २०
कोउ नायकके भेद भाव लावण्य रूप सब।
अभिनय कर दिखरावत पद गावत पियके जब ॥ २१
नव नागर नन्दलाल चाह तिन चकित भयेयौं।
निज प्रतिबिम्ब बिलास निरखि सिसु भूल रहत ज्यौं ॥ २२
रीझि परस्पर बारत अम्बर आभरन अङ्गके।
अम्बर निरखि छिन बसन लसौ अङ्गन रङ्ग रङ्गके ॥ २३
कोउ मुरली रसभरी रसीली रसहि उठावत।
कोउ मुरलीको रोकि छबीली अटन गावत ॥ २४
ताहि सांवरो कुंवर रीझि हंसि लेत भुजन भरि।
चुंबन अरु मुख सदन बदन तें देत सीस हरि ॥ २५
कनमें जो अडोल रीति सुर नर राधन किहिं।
जो ब्रज तिय के एक गमन आगम गावत जिहिं ॥ २६
जो ब्रजदेवी निरतत मंडल रास महा छबि।
सो रस कैसे बरनि सकै ऐसो है को कबि ॥ २७
राग रागिनी सब जिनकौ कोकिला कुहाद्यौ।
सो कैसे करि आवे जो ब्रजदेविन गायौ ॥ २८
तीन ग्राम सुर भेद केलि अनगनत बढी धनि।
उघटि शब्दक सुदि निरतत चलै सहि चाचर धनि ॥ २९

छबिसों निरतत लटकत मटकनि मंडल डोलनि।
कोटि अमृत सम मुसकनि मंजुल ताथेई बोलनि॥ ३०
कोउ उतति अति गावत सुरलय लेततान नद।
मत्र संगीत जु छेके, सुन्दरि गान करत मद॥ ३१
अपनी निज गति भेद सबै निरतत लागी तब।
गंधव मोहे ताकिन सुन्दर गान करत जब॥ ३२
भुज दंडन सों मिलत ललित मंडल निरतत छबि।
कुंडल कचासों उरझे सुरझे जहां बड़े कबि॥ ३३
पियके मुकुट कौ लटकनि मटकनि मुरली रव रस।
कुहकि कुहकि मनौं नाचत मंजुल मोर भरे रस॥ ३४
गिरतें सुमन सुदेस जु बरसत अति आनन्द भरि।
मनो मदगति पर रीझि अलक पूजत फूलनि करि॥ ३५
श्रमजल सुन्दर बिन्दु रंगभरि अति छबि बरसत।
प्रेम भक्ति बिरवा जिनके तिनके हिय सरसत॥ ३६
वृन्दावनको त्रिविधि पवन बिजना जु बिलोलें।
जहं जहं श्रमित बिलोकत तहं तहं रस भरि डोलें॥ ३७
बड़े गहन पटवासन मण्डल मंडित ऐसे।
मनहुं सघन अनुराग घटाघन घुमड़त जैसे॥ ३८
ताको धूंधर मध्य मत्त अलि भरमत ऐसे।
प्रेम आलसें गोलक काउ भ्रमि उपजत जैसे॥ ३९
कुसुम धूर धूसरी कुञ्ज मधुकरनि पुञ्ज जहं।
उमड़ रस आवेस सटकि औगों प्रवेस तहं॥ ४०
नवदलनसों सेनौं अति सुख देनी सरसें।
सुन्दर सुमन सुमि निरखत अति आनन्द हिय बरसें॥ ४१
पवन थक्यो ससि थक्यो थक्यो उडु मंडल सगरो।
ताकें रवि रथ थक्यौ चल्यौ नहिं आगे डगरो॥ ४२
बिहरति रति अति बिहरत कुञ्ज जु सुखद रसमागर।
[illegible] मब गुन आगर॥ ४३

हार हारमें उरभि उरभि बहियां में बहियां।
नीलपीत पट उरभि उरभि बेसर नथ मइयां ॥ ४४
श्रमभरे सुन्दर अङ्ग सरस श्रति मिलत ललित गति।
अंसन पर भुजदिये लटक सोभा सोभित अति ॥ ४५
टूटी मुक्तन माल छूटि रही सांवरे उरपर।
गिरतें जिमि सुरसरी गिरी द्वैधार धारिधर ॥ ४६
अद्भुत रस रह्यो रासगीत धुनि सुनि मोहे मुनि।
सिला सलिल ह्वै चलीं सलिल ह्वै रह्यो सिला पुनि ॥ ४७
रीभि सरदकी राति न जानें किती इक बाढ़ी।
बिलसत सजनी श्याम यथा रुचि अति रतिगाढ़ी ॥ ४८
इहिं बिधि बिबिध बिलास हास सुखकुंज सदनके।
चले जमुनजल क्रीडन ब्रीडन कोटि मदन के ॥ ४८
उरसि मरगजी माल चाल मद गजगति मलकत।
राजत रस भरे नैन गंडथल श्रमकन भलकत ॥ ५०
धाय जमुन जल धसे लसे छबि परत न बरनी।
बिहरत मनु गजराज संग लिये तरुनी करनी ॥ ५१
तियगन तन भलमलत बदन तहं अति छबिछाये।
फूलि रहे जनु जमन कनकके कमल सुहाये ॥ ५२
मुख अरबिन्दन आगे जल अरबिन्द लगें अस।
भोर भये भवननके दीपक मन्द परत जस ॥ ५३
मंजुल अंजुल भरि भरि पियकीं तियजल मेलत।
जनों अलिनीं अरबिन्दवृन्द मकरन्दनि खेलत ॥ ५४
छिरकत हैं इल छैलि सबनजल अंजलि भरि भरि।
परत कमल मंडली फाग खेलत रसरंग करि ॥ ५५
चलत दृगञ्चल चञ्चल अञ्चलमें भलकत अस।
सरस कनक के कञ्ज खञ्जन जाल परत जस ॥ ५६
जमुनाजल में दुरि मुरि कामिनि करत कलोलें।
मानों नवघन मध्य दामिनी दमकत डोलें ॥ ५७

कमलन तजि तजि अलिगन मुख कमलन आवत जब।
छबिली छबिली बाल छपत अलकें दबकत तब॥ ५८
कबहुक मिलि मब बाल लाल छिरकत हैं छवि अस।
मनमिज पायो राज आज अभिषेक होत जस॥ ५९
तिनकी सुन्दर कांति भांति मनमोहन भावै।
बाल भेसकी छवि कविपै कछु कहत न आवै॥ ६०
भीजि बसन तन लिपिटि निपट छवि अद्भुत हैं अस।
नैननिके नहिं बैन बैन के नैन नहीं जस॥ ६१
नीर निचोरत जुवतिन देखि अधीर भये मनु।
तन चिकुरनको पीर चीर रोवत अंसुअन जनु॥ ६२
निरखि परस्पर छबिसों विहरति प्रेम मदन भरि।
प्रकति बालकी कांति अजहुं धरकति जिनके उर॥ ६३
तब इक द्रुम तन चितय कुंवर वर आज्ञा दीनी।
निर्मल अम्बर भूषन तिन तहं बरसा कीनी॥ ६४
अपनी अपनी रुचिके पहिरे बसन बनी अब।
जगत मोहिनी जे तिनको ब्रजतिय मोहनि सब॥ ६५

दोहा।

यह जु सरद की जोति इक परम मनोहर रात
खेलत रास जु रसिक पिय प्रतिछिन नई नई भांत॥ ६६

ब्रह्म महरत कुंवर कान्ह वर घर आये जब।
गोपन अपनी गोपी अपने ढिंग जानी तब॥ ६७
नित्य रासरस मत्त नित्य गोपीजन बल्लभ।
नित्य निगम जो कहत नित्य नवतन अति दुर्लभ॥ ६८
यह अद्भुत रसरास महाकवि कहत न आवे।
शेष सहस मुख गावत तोहू अन्त न पावे॥ ६९
शिव मनहीं मन ध्यावे काहु नाहिं जनावे।
सनक सनन्दन नारद शारद अति मन भावे॥ ७०

जदपि यह पद कमल जु कमला सेवत निस दिन।
तदपि यह रस सपने कबहूँ नहिं पायो तिन॥ ६७
अज भजहूँ रज वांछित सुन्दर वृन्दावनकी।
सोऊ तनक न पावत सूल मिटत नहिं तनकी॥ ६८
निपट निकट घटमें जो अन्तरजामी आही।
विषै विदूषित इन्द्री पकर सकै नहिं ताही॥ ६९
जो यह लीला हितसों गावै सुनै सुनावै।
प्रेम भक्ति सोइ पावै अरु सबके जिय भावै॥ ७०
प्रेम प्रीति सों जो कोइ गावै सुनै धरै हिय।
प्रेम भक्ति तेहि देत दया करि नवनागर पिय॥ ७१
हीन अरु निन्दक अधर्म हरि धर्म बहिर्मुख।
तिनसों कबहुं न कहै कहै तो नाहिं लहै सुख॥ ७२
नैनहीन जो नायक ताको नवनागरि जस।
मंद हंसन मुकटाछ लसनि कहा वह जानि रस॥ ७३
भक्तजनन सों कहैं जिन्हें भागवत धर्म बल।
ज्यों जमुनाके मीन लीन नित रहत जमुन जल॥ ७४
जदपि सप्तनिधि मेदिनि जमुना निगम बखानि।
सो तिहिं धारहीं वारि रमत कुवतन जल पानि॥ ७५
रसिक जनन के सङ्ग रहैं हरि लीला गावैं।
परमकांत एकांत प्रेमरस तबही पावैं॥ ७६
यह उज्वल रस माल कोटि जतनन करि पोई।
सावधान होइ पहिरो यह तोरो मत कोई॥ ७७
श्रवन कीरतन ध्यान सार सुमिरन कोहै पुनि।
ज्ञान-सार हरिध्यान-सार श्रुति-सार गुथो गुनि॥ ७८
अघहरनी मनहरनी सुंदर प्रेम बितरनी।
नन्ददासके कण्ठ बसो नित मङ्गल करनी॥ ७९

इति श्रीमद्भागवते महापुराणे दशमस्कन्धे रासक्रीडायां पञ्चमोऽध्यायः।

समाप्त।

श्रीगणेशायनमः

भंवर गीत ।

ऊधवको उपदेस सुनो ब्रजनागरी ।
रूप सील लावण्य सबै गुनआगरी ।
प्रेम धजा रसरूपिनी उपजावन सुखपुञ्ज ।
सुंदरस्याम बिलासिनी नव वृन्दावन कुञ्ज ।
सुनो ब्रजनागरी ॥ १

कहन स्याम सन्देस एक मैं तुमपै आयो ।
कहन समै संकेत कहूं अवसर नहिं पायो ।
सोचतही मनमें रह्यो कब पाऊं इक ठाउं ।
कहि सन्देस नन्दलालको बहुरि मधुपुरी जाउं ।
सुनो ब्रजनागरी ॥ २

सुनत स्यामको नाम ग्राम गृह की सुधि भूली ।
भरि आनन्दरस हृदय प्रेम बेली द्रुम फूली ।
पुलकि रोम सब अङ्ग भये भरिआये जलनैन ।
कण्ठघुटे गदगद गिरा बोले जात न बैन ।
व्यवस्था प्रेम की ॥ ३

अर्घासन बैठारि बहुरि परिकरमा दीन्ही ।
स्याम सखा निज जानि बहुरि सेवा बहु कीन्ही ।
बूझत सुधि नन्दलाल की बिहंसत सुख ब्रजबाल ।
नीके हैं बलबीरजू बोलति बचन रसाल ।
सखा सुन स्याम के ॥ ४

कुसल स्याम अरु राम कुसल सङ्गी सब उनके ।
यदुकुल सिगरे कुसल परम आनन्द है उनके ।
बूझत ब्रज कुसलात को आयो तुम्हरे तीर ।
मिलिहैं थोरे दिवसमें जिन जिय होहु अधीर ।
सुनो ब्रजनागरी ॥ ५

सुनि मोहन सन्देस रूप सुमिरन ह्वै आयौ।
पुलकित आनन कमल अङ्ग आवेस जनायौ।
विह्वल ह्वै धरनी परी ब्रजवनिता मुरझाय।
दै जलछींट प्रबोधहीं ऊधव बात सुनाय।
सुनो ब्रजनागरी।

वे तुमतें नहिं दूरि ज्ञानकी आँखिन देखौ।
अखिल विश्व भरि पूरि ब्रह्म सब रूप विसेखौ।
लोह दारु पाषानमें जल थल महि आकास।
सचर अचर बरतत सबै ज्योतिहि रूप प्रकास।
सुनो ब्रजनागरी।

कौन ब्रह्म, को जाति ज्ञान कासो कहौ ऊधो।
हमरे सुन्दर स्याम प्रेमको मारग सूधो।
नैन बैन स्रुति नासिका मोहन रूप लखाय।
सुधि बुधि सब मुरली हरी प्रेम ठगोरी लाय।
सखा सुन स्यामके॥ ८

यह सब सगुन उपाधि रूप निर्गुन है उनको।
निरविकार निरलेप लगत नहिं तीनो गुनको।
हाथ न पाय न नासिका नैन बैन नहिं कान।
अच्युत ज्योति प्रकासहीं सकल विश्वको प्रान।
सुनो ब्रजनागरी॥ ९

जो मुख नाहिन हुतो कहो किन माखन खायो।
पायन बिन गोसङ्ग कहो बन बन को धायो।
आँखिनमें अंजन दयौ गोवर्द्धन लयौ हाथ।
नन्द जसोदा पूत है कुँवर कान्ह ब्रजनाथ।
सखा सुन स्यामके॥ १०

जाहि कहत तुम कान्ह ताहि कोउ पिता न माता।
अखिल अण्ड ब्रह्मण्ड विश्व उनहींमें जाता।
[illegible] गुन अवतार है धरि आये तन स्याम।

जोग जुगत हो पाइये परब्रह्म पुरधाम।
सुनो ब्रजनागरी ॥ ११

ताहि बतावो जोग जोग ऊधो तहं जावो।
प्रेम सहित हम पास स्यामसुन्दर गुणगावो।
नैन बैन मन प्रानमें मोहन गुण भरपूर।
प्रेम पियूषे छोड़ि कै कौन समेटे धूर।
सखा सुन स्यामके ॥ १२

धूर बुरी जो होय ईस क्यों सीस चढ़ावे।
धूर छेत्रमें आय कर्म करि हरिपद पावे।
धूरहि तें यह तन भयो धूरिहितें ब्रह्मण्ड।
लोक चतुर्दस धूरितें सप्तदीप नवखण्ड।
सुनो ब्रजनागरी ॥ १३

कर्म धूरिको बात कर्म अधिकारी जानें।
कर्म धूरिको आनि प्रेम अमृतमें सानें।
तबही लों सब कर्म है जबलग हरि उर नाहि।
कर्मबद्ध सब विस्वके जीव बिमुख है जाहि।
सखा सुन स्यामके ॥ १४

तुम कर्म कस निन्दत आमों सतगति होई।
कर्म रूपतें बनो नाहिं त्रिभुवनमें कोई।
कर्महितें उतपत्ति है कर्महितें है नास।
कर्म कियेतें मुक्ति है परब्रह्मपुर बास।
सुनो ब्रजनागरी ॥ १५

कर्म पाप अरु पुण्य लोह सोनेकी बेरी।
पायन बन्धन दोऊ कोऊ मानो बहुतेरी।
ऊंच कर्मतें स्वर्ग है नीच कर्मतें भोग।
प्रेम बिना सब पचि मरे विषय वासना रोग।
सखा सुन स्यामके ॥ १६

कर्म बुरे जो होय योग काहेको धारें।

पद्मासन मन धारि रोकि इन्द्रियको मारें।
ब्रह्म अगिन जरि सुद्ध ह्वै सिद्धि समाधि लगाय।
लीन होय सायुज्यमें जोतिहि जोति समाय।
सुनो व्रजनागरी॥ १७

योगी जोतें भजें भक्ति निरूपें नामें।
प्रेम पियूषै प्रगट स्यामसुंदर उर आनें।
निर्गुन गुन जो पाइये लोग कहें जो नाहि।
घर आयो नाग न पूजिये बांबी पूजन जांहि।
सखा सुन स्यामके॥ १८

जो उनके गुन होंय भेद क्यों नेत बखानें।
निर्गुन सगुन आतमा रुचि ऊपर सुख मानें।
वेद पुराननि खोजिके पायो किनहुं न एक।
गुनहीके गुन होंहि ते कहो अकासकि टेक।
सुनो व्रजनागरी॥ १९

जो उनके गुन नांहि और गुन भये कहांते।
बीज बिना तरु जमें मोहि तुम कहो कहांते।
वा गुनकी परछांहरी माया दर्पन बीच।
गुनतें गुन न्यारे भये अमल बारि जल कीच।
सखा सुन स्यामके॥ २०

मायाके गुन और और हरिके गुन जानो।
उन गुनको इन मांहि आनि काहेको सानो।
जाके गुन अरु रूपको जानन पायो भेद।
तातें निर्गुन रूपको बदत उपनिषद वेद।
सुनो व्रजनागरी॥ २१

वेदहु हरिके रूप स्वास सुखतें जो निसरे।
कर्म किया आसक्त सबै पिछली सुधि बिसरे।
कर्म मध्य ढूंढै सबै किनहु न पायो देख।
कर्म रहित ही पाइयी तातें प्रेम विशेष।
सखा सुन स्यामके॥ २२

म जो कोऊ वस्तु रूप देखत लौ लागै।
नु दृष्टि बिन कहो कहा प्रेमी अनुरागै।
नि चन्द्रके रूपको गुन नहि पायो ज्ञान।
उनको कह जानिये गुनातीत भगवान।
सुनो ब्रजनागरी ॥ २३

नि अकाम प्रकाम तेजमय रह्यो दुराई।
व्यदृष्टि हो रूप भले वह देख्यो जाई।
नको वे आंखैं नहीं देखैं कब वह रूप।
है सोच क्यों उपजै जे परे कर्मके कूप।
सखा सुन स्यामके ॥ २४

करिये नित कर्म भक्तिह जासें आई।
रूप कासें कहो कौन पै छूट्यो जाई।
काम कर्म सबहि किये कर्म नाश है जाय।
आतम निष्कर्म करि निर्गुन ब्रह्म समाय।
सुनो ब्रजनागरी ॥ २५

उनके नहि कर्म कर्मबन्धन है आवै।
निर्गुन है वस्तुमात्र परमान बतावै।
उनको परमान है तो प्रभुता कछु नाहि।
न भये अतीतके सगुन सकल जगमाहि।
सखा सुन स्यामके ॥ २६

गुन आवै दृष्टि माझ नहि ईश्वर सारे।
उहनतें वासुदेव अच्युत है न्यारे।
दृष्टि विकारतें रहत अधोक्षज जोति।
सरुपी ज्ञान जिय ग्रसि तु तातें होति।
सुनो ब्रजनागरी ॥ २७

तक जेहै लोग कहा जानें हितरूपै।
भातको छांड़ि गहे पर छांहीं धूपै।
हमरे रूपही और न कछू सुहाय।

ज्यों करतल आमासकी कोटिक ब्रह्म दिखाय।
सखा सुन श्यामके ॥ २८

ऐसेमें नन्दलाल रूप नैननके आगे।
आयगये छविछाय बने पियरे उरबागे।
ऊधोसों मुखमोरिके कहि कछु उनते बात।
प्रेम अमृत मुखतें स्रवत अम्बुज नैन चुवात।
तरक रसरीतिकी ॥ २९

अहो नाथ रमानाथ और यदुनाथ गोसांई।
नन्द नन्दन बिडरात फिरत तुम बिन सब गाई।
काहे न फेरि कृपालहै गोग्वालन सुखदेहु।
दुख निधि जलमें बूड़ही करि अवलम्ब ने लेहु।
निठुर है कांहे रहे ॥ ३०

कोउ कहै अहो दरस देहु पुनि बेन बजावो।
दुरि दुरि बनकी ओट कहा हिय लोन लगावो।
हमको तुमसे एक है तुमको हमसो कोरि।
बहुत भांतिके रावरे प्रीति न डारो तोरि।
एवो बारही ॥ ३१

कोउ कहै अहो दरस देत फिर लेत दुराई।
यह छल विद्या कहो कौन पिय तुम्हें सिखाई।
हम परबस आधीन हैं तातें बोलत दीन।
जल बिन कहो कैसे जियें गहिरे जलकी मीन।
विचारिय रावरे ॥ ३२

कोउ कहै अहो श्याम कहा इतराय गये हो।
मथुराको अधिकार पाय महाराज भये हो।
ऐसी कछु प्रभुता हुती जानत कोउ नांहि।
अबला बध सुनि डरि गये बसो डरे जगमांहि।
पराक्रम जानिकें ॥ ३३

कोउ कहै अहो श्याम चहत मारन जो ऐसे।

इन वपु धरि नरसिंहको नयन विदार्यो आय।
बिना अपराधहीं ॥ ३८
कोउ कहै इन परसराम ह्वै माता मारी।
फरसा कांधे धरी भूमि क्षत्रिन संघारी।
सोनित कुण्ड भरायके पोषे अपने पित्र।
इनके निर्दय रूपमें नाहिन कछू विचित्र।
बिलग कह मानिये ॥ ४०
कोउ कहैरी कहा दोष सिसुपाल नरेसे।
ब्याह करनको गयो नृपति भीषमके देसे।
दलबल जोरि बरातको ठाढे ह्वै छबि बाढि।
इन छलकरि दुलही हरी क्षुधित ग्रास मुख काढि।
आपने स्वारथो ॥ ४१
यहि विधि ह्वै आवेस परम प्रेमी अनुरागी।
और रूप पिय चरित तहांते देखन लागी।
रोम रोम हरि व्यापिके मोहन जिनके आय।
जिनको भूत भविष्यको जानत कौन दुराय।
रंगीलो प्रेमको ॥ ४२
देखत इनको प्रेम नेम ऊधोको भाज्यो।
तिमिरभाव आवेस बहुत अपने मन लाज्यो।
मनमें कहै रज पांयकी लै माथे निजधारि।
हौंतो क्षत क्षत ह्वै रह्यो त्रिभुवन आनन्द वारि।
सुवन्दना जोगाय ॥ ४३
कबहूंके गुण गाय स्यामके इनहि रिझाऊं।
ताते प्रेमाभक्ति स्यामसुन्दरकी पाऊं।
जिहि विधि मोपे रीझहीं सो विधि करौं बनाय।
ताते मो मन शुद्ध ह्वै दुविधा ज्ञान मिटाय।
पाय रस प्रेमको ॥ ४४
ताही छिन इक भवर कहूंतेंहो उड़ि आयो।

ब्रज बनितनके पुञ्ज मांहिं गुञ्जत छबि छायो।
चर्‍यौ चहत पग पगनि परं अरुण कमल दल जानि।
मनो मधुकर ऊधो भयो प्रथमहि प्रगर्‍यौ आनि।
मधुपको भेस धरि ॥ ४५

ताहि भंवर सों कहैं सबै प्रति उत्तर बातैं।
तर्क वितर्क नियुक्ति प्रेमरस रूपीघातैं।
जिन परसौ मम पांवरे तुम मानत हम चोर।
तुमहीसे कपटी हुते मोहन नन्दकिसोर।
यहांतें दूरिहो ॥ ४६

कोउ कहैरी विस्व माझ जेतेहैं कारे।
कपटि कुटिलको कोटि परम मानुष मसिहारे।
एक स्याम तन परसिकें जरत आजलों अङ्ग।
ता पाछे यह मधुपहू लायो जोग भुवंग।
कहां इनको दया ॥ ४७

कोई कहैरी मधुप भेष उनहीको धार्‍यौ।
स्याम पीत गुञ्जार बैन किंकिणि झनकार्‍यौ।
मापुर गोरस चोरिकैं फिर आयो यहि देस।
इनको जिन मानहु कोऊ कपटी इनको भेस।
चोरि जिन जाय कछु ॥ ४८

कोऊ कहैरे मधुप कहैं अनुरागी तुमको।
कौने गुणधौं जानि एहू अचरज है हमको।
कारो तन अति पातकी मुख पियरो जगनिन्द।
गुन अवगुन सब आपनो आपुहि जानि अनिन्द।
देखि मैं आरसी ॥ ४९

कोऊ कहैरे मधुप कहा तू रसको जानै।
बहुत कुसुम पै बैठि सबै आपन सम मानै।
आपन सम हमको कियो चाहत है मतिमन्द।
दुविधा ग्यान उपजाय कै दुखित प्रेम आनन्द।
कपटके छन्द सों ॥ ५०

कोऊ कहै रे मधुप कहा मोहन गुन गावै।
हृदय कपटमों परम प्रेम नाहिन छबि पावै।
जानति हौं सब भाँति कै सरबस लयो चुराय।
यह बौरी ब्रजबासिनी को जो तुम्हें पतियाय।
नहिं हम जानिकै॥ ५१

कोऊ कहै रे मधुप कौन कहै तुम्हें मधुकारी।
लिये फिरत मुख जोग गाँठ काटत बेकारी।
रुधिर पान कियो बहुतकै यवन अधर रङ्गरात।
अब ब्रजमें आये कहा करन कौनको घात।
जात किन पातकी॥ ५२

कोऊ कहै रे मधुप प्रेम षटपद पसु देख्यो।
अबलौं यहि ब्रजदेस मांहि कोउ नांहि बिसेख्यो।
है सिंग आनन ऊपर रे कारो पीरो गात।
खल अमृत सम मानहीं अमृत देखि डरात।
बादि यह रसिकता॥ ५३

कोऊ कहै रे मधुप ज्ञान उलटो लै आयो।
मुक्ति परे जे फेरि तिन्हें पुनि कर्म बतायो।
वेद उपनिषद सारजे मोहन गुन गहि लेत।
तिनकै आतम सुद्ध करि फिरि फिरि करि सन्या देत।
जोग चटसारमें॥ ५४

कोऊ कहै रे मधुप निर्गुन इन बहु करि आन्यौं।
तर्क बितर्क नियुक्ति बहुत उनहीं यह भान्यो।
पै इतनो नहिं जानहीं वस्तु बिना गुन नाहिं।
निर्गुन होहिं पतीतके सगुन सकल जगमांहि।
सखा सुन स्यामके॥ ५५

कोऊ कहै रे मधुप तुम्हें लज्जा नहिं आवै।
सखा तुम्हारो स्याम कूबरीनाथ कहावै।
यह नीची पदवी हुती गोपीनाथ कहाय।

व यदुकुल पावन भयो दासी जूठन खाय।

मरत काह बोलको ॥ ५६

ाउ कहै यहो मधुप स्याम योगी तुम चेला।
जा तीरथ जाय कियो इन्द्रिनको मेला।
धुबन सुधि बिसरायके आये गोकुलमांहि।
हां सबै प्रेमी बसै तुमरो गाहक नांहि।

पधारो रावरे ॥ ५७

ाउ कहै रे मधुप साधु मधुबनके ऐसे।
ार तहांके सिद्ध लोगहूं हैं धौं कैसे।
ागुन गुन गहि लेत हैं गुनको डारत मेटि।
इन निर्गुनको गहे तुम साधनकी भेंटि।

गांठिको खोयके ॥ ५८

उ कहै रे मधुप होंहि तुमसे जो सङ्गी।
ीं न होय तन स्याम सकल बातन चौरङ्गी।
कुलमें जोरी कोउ पावै नांहि तुमारि।
न त्रिभङ्गी आपुही करी त्रिभङ्गी नारि।

रूप गुन सीलकी ॥ ५९

ह बिधि सुमिरि गोविन्द कहत ऊधो प्रति गोपी।
मर्यादा करि कहत सकल कुल लज्जा लोपी।
पाहैं इकवारही बदित सकल ब्रजनारि।
करुणामय नायहो केशव हरि मुरारि।

फाटि हियरो चल्यो ॥ ६०

ये जो कोउ सलिल सिन्धु ले तनको धारनि।
इत अम्बुज नीर कंचुकी यदुगुन हारनि।
ो प्रेमबाहमें ऊधव चले बहाय।
ो ज्ञानको मेंड़ह्वै ब्रजमें दीन्हों पाय।

कूल लागत भये ॥ ६१

विचरत पद मोपै परै सब सुख जीवन मूरि ।
मुनिनहूं दुरलभै ॥ ६७

कैसे होंहु द्रुम लता बेलि बल्ली बनमाहीं ।
आवत जात सुभाय परत मोपै परछाहीं ।
मोकोमेरे बस नहीं जो कछु करौं उपाय ।
मोहन होंहिं प्रसन्न जो यह वर मांगो जाय ।
कृपा करि देहु जू ॥ ६८

ऐसे मन अभिलाष करत मथुरा फिरि आयो ।
गदगद पुलकित् रोम अङ्ग आवेश जनायो ।
गोपी गुन गावन लग्यो मोहन गुन गयो भूलि ।
जीवनको ले कहा करै पायो जीवन मूलि ।
भक्तिको सार यह ॥ ६९

ऐसे सोचत जहां स्याम तहां आयो धायो ।
परिकरमा दण्डौत बहुत आवेश जनायो ।
कछु निर्दयता स्यामको करि क्रोधित दोउ नैन ।
कछु ब्रजवनिता प्रेमको बोलत रस भरि बैन ।
सुनो नन्दलाडिले ॥ ७०

करुनामयी रसिकता है तुम्हरी सब झूठी ।
जबही लों नहिं लखो तबहिं लौं बांधी मूंठी ।
मैं जान्यौं ब्रज आयके तुम्हरो निर्दय रूप ।
जो तुमको अवलम्ब ही वाकौं मेलो कूप ।
कौन यह धर्म है ॥ ७१

पुनि पुनि कहै अहो चलो जाय वृन्दावन रहिये ।
प्रेमपुञ्जको प्रेम जाय गोपिन सङ्ग लहिये ।
और काम सब छाड़िके उन लोगन सुख देहु ।
नातरु टूट्यो जात है अबही नेह सनेहु ।
करौगे तो कहा ॥ ७२

सुनत सखाके बैन नैन भरिआये दोऊ।
विवस प्रेम आवेश रही नाहीं सुधि कोऊ
रोम रोम प्रति गोपिका ह्वै रहि सांवर गा
कल्पतरोरुह सांवरो ब्रजबनिता भई पात
उलहि अंग अङ्ग

हो सचेत कहि भलो सखा पठयो सुधि ल्या
अवगुन हमरे आनि तहां ते लगे बतावन
मोमें उनमें अन्तरो एको छिन भरि नाहि
ज्यों देखो मो मांहि वे तो मैं उनही मांहि
तरङ्गनि वारि ज्यों

गोपी रूप दिखाय तबै मोहन बनवारी।
ऊधो भ्रमहि निवारि डारि सुख मोहको उ
अपनो रूप दिखायके लीन्ही बहुरि दुराय।
नन्ददास पावन भयो जो यह लीला गाय।
प्रेमरस पुञ्जनी

शिवशम्भुका चिट्ठा।

मेलेका ऊंट।

[illegible]रतमित्र सम्पादक! जीते रहो—दूध बताशे पीते रहो! [illegible]ली तो अच्छी थी। फिर वैसीही भेजना। गत सप्ताह चिट्ठा आपके पत्रमें टटोलते हुए "मोहनमेले" के लेख पर [illegible] पड़ी। पढ़कर आपकी दृष्टि पर अफसोस हुआ। पहलो [illegible]आपकी बुद्धि पर अफसोस हुआ था। - भाई! आपकी दृष्टि [illegible]तीसी होना चाहिये, क्योंकि आप सम्पादक हैं। किन्तु आप [illegible]ष्टि गिद्धकीसी होने पर भी उस भूखे गिद्धकीसी निकली जिसने आकाशमें चढ़े चढ़े भूमि पर एक गेहूं'का दाना पड़ा देखा, [illegible]सके नीचे जो जाल बिछ रहा था वह उसे न सूझा। यहांतक [illegible]स गेहूं के दानेको चुगनेसे पहले जालमें फंस गया।

[illegible]मोहनमेलेमें आपका ध्यान दो एक पैसेकी एक पूरीकी तरफ [illegible]। न जाने आप घरसे कुछ खाकर गये थे या योंही। वरर [illegible]क पैसेकी पूरीके मेलेमें दो पैसे हों तो आश्चर्य न करना [illegible]ये, चार पैसे भी होसकते थे। यह क्या देखनेकी बात थी? [illegible] व्यर्थ बातें बहुत देखीं, कामकी एक भी तो देखते? [illegible] और आकर तुम११सौ सतरोंका एक पोस्टकार्ड देख आये पर [illegible] तरफ बैठा हुआ ऊंट भी तुम्हें दिखाई न दिया! बहुत [illegible] उस ऊंटकी ओर देखते और हंसते थे। कुछ लोग कहते थे कलकत्तेमें ऊंट नहीं होते इसीसे मोहनमेलेवालोंने इस विचित्र [illegible]वरका दर्शन कराया है। बहुतसी शौकीन बीबियां कितनेही

फूल बाबू ऊंटका दर्शन करके खिलते दांत निकालते चले तब कुछ मारवाड़ी बाबू भी आये। और झुक झुक घेरेमें बैठे हुए ऊंटकी तरफ देखने लगे। एकने कहा— है।" दूसरा बोला—ऊंटड़ो कठेसे आयो?" ऊंटने देख दोनो ओठोंको फड़काते हुए थूथनी फटकारी। तरङ्गमें मैंने सोचा कि ऊंट अवश्यही मारवाड़ी बाबुओंसे कहता है। जीमें सोचा कि चलो देखें यह क्या कहता है। उसकी भाषा मेरी समझमें न आवेगी? मारवाड़ियोंकी समझ लेता हूं तो मारवाड़के ऊंटकी बोली समझमें न इतनेमें तरङ्ग कुछ अधिक हुई। ऊंटकी बोली साफ साफ में आने लगी। ऊंटने उन मारवाड़ी बाबुओंकी ओर कहा—

"बेटा! तुम बच्चे हो, तुम क्या जानोगे? यदि मेरी उ कोई होता तो वह जानता। तुम्हारे बापके बाप जानते थे कौन हूं, क्या हूं। तुमने कलकत्तेके महलोंमें जन्म लिया तुम के अमीर हो! मेलेमें बहुत चीजें हैं, उनको देखो। और यदि कुछ फुरसत हो तो सो सुनो, सुनाता हूं। आज दिन तुम बग्घी फिटिन टमटम और जोड़ियोंपर चढ़कर निकलते हो, कतार तुम मेलेके द्वार पर मोटरों तक छोड़ आये हो, तुम चढ़कर मारवाड़से कलकत्ते नहीं पहुंचे थे। यह सब तुम्हारे लम्बी हुई हैं। तुम्हारे बाप पचास साल के भी न होंगे इसी मुझे भलीभांति नहीं पहचानते। हां, उनके भी बाप हों तो पहचानेंगे। मैंनेही उनको पीठपर लादकर कलकत्ते तक पहुंचाया है।

आजसे पचास साल पहले रेल कहां थी। इसी मारवाड़से मिरजापुर तक और मिरजापुरसे रानीगंज तक कितनेही फेरे किये हैं। महीनों तुम्हारे पिताके पिता तथा उनके भी पिताओंका ब मेरीही पीठ पर रहता था। जिन सिर्दीने तुम्हारे बाप दा

भी आपको जमा है यह सदा मेरी पीठकोही पालकी
ती थीं। मारवाड़में मैं सदा तुम्हारे द्वारपर हाजिर रहता था,
हां वह मौका कहां ? इसीसे इस मेलेमें तुम्हें देखकर आंखें
त करने आया हूं। तुम्हारी भक्ति घटजाने पर भी मेरा वात्सल्य
घटता है। घटे कैसे मेरा तुम्हारा जीवन एकही रस्सीसे बंधा
था। मैंही हल चलाकर तुम्हारे खेतोंमें अन्न उपजाता था
रैही चारा आदि पीठ पर लादकर तुम्हारे घर पहुंचाता था।
कलकत्तेमें जलकी कलें हैं, गङ्गाजी हैं, जल पिलानेको ग्वाले
हैं पर तुम्हारी जन्मभूमिमें मेरीही पीठ पर लादकर कोसोंसे
ाता था और तुम्हारी प्यास बुझाता था।

री इस चायल पीठको घृणासे न देखो। इस पर तुम्हारे बड़े,
स्त्रियां यहांतक कि उपले लादकर दूर दूर तक लेजाते थे।
ए मेरे साथ पैदल जाते थे और लौटते हुए मेरी पीठपर चढ़े
चकोले खाते वह स्वर्गीय सुख लूटते थे कि तुम रबड़के
वाली चमड़ेकी कोमल गद्दियोंदार फिटिनमें बैठकर भी वैसा
प्राप्त नहीं कर सकते। मेरी बलबलाहट उनके कानोंको
सुरीली लगती थी कि तुम्हारे बागीचोंमें तुम्हारे गवैयों तथा
पसन्दकी बीबियोंके स्वर भी तुम्हें उतने अच्छे न लगते
मेरे गलेके घण्टोंका शब्द उनको सब बाजोंसे प्यारा लगता
फोगके जङ्गलमें मुझे चरते देखकर वह उतनेही प्रसन्न होते
मे तुम अपने सजे बागीचोंमें भङ्ग पीकर, पेट भरकर और
लकर।"

"की निन्दा सुनकर मैं चौंक पड़ा। मैंने ऊंटसे कहा—बस
ना बन्द करो। यह बावला शहर नहीं जो तुम्हें परमेश्वर
। तुम पुराने हो तो क्या, तुम्हारी कोई कल सीधी नहीं है।
की छाल और पत्तोंसे शरीर ढांकते थे, उनके बनाये कपड़ों
संसार बाबू बना फिरता है, जिनके पिता सिर पर गठरी
यही पहले दरजेके अमीर हैं, जिनके पिता छः आनेमें गठरी

(भारतमित्र, ८ मार्च सन १८०१ ।)

शिवशम्भुका चिट्ठा ।

मनुष्य गणना ।

जय भङ्ग भवानी की ! सम्पादक महाशय ! अबके अच्छी घमो-
में फंसे थे, पर रामपालजीके "भारतमित्र" में अपना चिट्ठा छप-
ाके और कुछ दिनके लिये बच गये । इस बार गरीब शिवशम्भु
ोंकी होली किरकिरी होते होती बच गई । सो अब गहरी
 भेजिये । ऐसी भेजिये कि योंसही घर घूमे और छप्पर छिले ।

आप अपने होलीके नम्बरकी धुनमें जान पड़ता है कि दोन
ेया सब भूल गये । फिर शिवशम्भु शर्माको क्या याद रखते
 एक बात आपको बता देते हैं कि जब आप अपना होलीका
पर तय्यार करनेमें लगे थे ठीक उसी समय कलकत्तेमें मनुष्य
गनाके बेचारे पकड़े जाते थे । सरहदी लड़ाईके समय जिस
कार पञ्जाबमें ऊंट और छकड़े पकड़े जाते थे, इस कलकत्ता मह
गरमें ठीक उसी प्रकार बाबू लोग पकड़े जाकर "एन्युमरेटर"
नाये जाते थे । कई दिन तक यह बेचारे छकड़ोंकी भांति लदे
ौर ऊंटकी तरह गर्दन उठाये गली गली घूमते थे । इन गरीबो
ी दशा देखकर बड़ी हंसी आती थी, पर आगे चलकर वही हंसी
ांसुओंमें बदल गई ।

मुझे यह खबर न थी कि बाजारमें जातेही बेगारका छकड़ा
ःबना पड़ेगा । एक कानिष्टबल मुझे देखकर पूछने लगा कि
महाराज ! आप पढ़ेहुए जानते हैं ? मैंने कहा—हां । इस
हर्ष्से कानिष्टबलने कहा—तो फिर अपनी थानेमें साहब बुला
हैं । मैंने सिपाहीसे कहा कि मुझ शिवशम्भु शर्माका थानेसे का

आप ढोकर लाते थे उनको सिर पर पगड़ी सम्हालना भारी है, जिनके पिताका कोई पूरा नाम न लेकर पुकारता था, वह बड़ी बड़ी उपाधिधारी हुए हैं। संसारका जब यही रंग है तो ऊंट पर चढ़नेवाले सदा ऊंटही पर चढ़ें यह कुछ बात नहीं। किसीकी पुरानी बात यों खोलकर कहनेसे आजकलके कानूनसे इतक-इज्जत होजाती है। तुम्हें खबर नहीं कि अब मारवाड़ियोंने "एसोसीयेशन" बनाली है। अधिक बलबलाओगे तो वह रिज़ोल्यूशन पास करके तुम्हें मारवाड़से निकलवा देंगे। अतः तुम उनका कुछ गुणगान करो जिससे वह तुम्हारे पुराने हकको समझें और जिस प्रकार लार्ड कर्ज़नने किसी जमानेके "ब्लैकहोल"को उस पर लाट बनवा कर और उसे संगमरमरसे मढ़वाकर शानदार बना दिया है उसी प्रकार मारवाड़ी तुम्हारे लिये मखमली काठी, जरीकी गद्दियां, झोरे पंखोंकी नकेल और सोनेकी घन्टियां बनवाकर तुम्हें बड़ा करेंगे और अपने बड़ोंकी सवारीका सम्मान करेंगे।

(भारतमित्र, ८ मार्च सन १९०१।)

शिवशम्भुका चिट्ठा।

मनुष्य गणना।

जय भङ्ग भवानी की! सम्पादक महाशय! अबके आपही घसीटनमें फंसे थे, पर रामप्रसादसे "भारतमित्र" में अपना चिट्ठा छपानेकी और कुछ दिनके लिये बच गये। इस बार गरीब शिवशम्भु शर्माकी होली फिरकिरी होती होती बच गई। सो अब गहरी भङ्ग भेजिये। ऐसी भेजिये कि होलीकी घर घूमे और छप्पर हिले।

आप अपने होलीके नम्बरकी धुनमें जान पड़ता है कि दीन दुनिया सब भूल गये। फिर शिवशम्भु शर्माको क्या याद रखते? पर एक बात आपको बता देते हैं कि जब आप अपना होलीका नम्बर तय्यार करनेमें लगे थे ठीक उसी समय कलकत्तेमें मनुष्य गणनाके बेगारी पकड़े जाते थे। सरहदी लड़ाईके समय जिस प्रकार पञ्जाबमें ऊंट और छकड़े पकड़े जाते थे, इस कलकत्ता महा नगरमें ठीक उसी प्रकार बाबू लोग पकड़े जाकर "एन्युमरेटर" बनाये जाते थे। कई दिन तक यह बेचारे छकड़ोंकी भांति लदे और ऊंटकी तरह गर्दन उठाये गली गली घूमते थे। इन गरीबोंकी दशा देखकर बड़ी हंसी आती थी, पर आगे चलकर वही हंसी आंसुओंमें बदल गई।

मुझे यह खबर न थी कि बाजारमें जातेही बेगारका दण्डा धरना पड़ेगा। एक कानिष्टबल मुझे देखकर पूछने लगा कि हे महाराज! आप पढ़ना जानते हैं? मैंने कहा—हां। इतना सुनतेही कानिष्टबलने कहा—तो फिर चलिये थानेमें साहब बुलाते हैं। मैंने कितनाही कहा कि मुझ शिवशम्भु शर्माको थानेसे काम

हो क्या है, पर एक न सुनी गई। कनिष्टबल धकेलकर मुझे थानेमें लेगया।

एक साहबने आकर कागजोंका एक पुलन्दा मेरे सामने डाल दिया और कहा कि सेन्सस आईनकी रूसे तुम एन्यूमरेटर बनाये गये, तुमको एक मुहल्लेके बीस मकानोंकी मनुष्यगणना करना पड़ेगी। और खबरदार इस कामसे इनकार करोगे या इसमें गफलत करोगे तो तुमको सजा होजावेगी।

मेरी बुद्धि चकरा गई। मैंने कहा—साहब, मैं अक्खड़ जाहिल आदमी मुझसे भला यह काम कैसे होगा? इसके उत्तरमें साहबने कहा कि नहीं अलबत्ता तुमको करना होगा और नहीं करनेसे जेल जाना होगा। जाओ अपना घर पर जाकर सब काम समझो।

"गले पड़ी ढोलकी, बजाये सिद्ध" समझकर मैं कागजोंका पुलन्दा लिये चल निकला। साहबने कहा घर जाओ, यह क्या जानेकी शिवशम्भुके घर है या नहीं? आज शिवशम्भुको घर दरकार है। जिनके घर फालतू हो वह शिवशम्भुको देदें, वह उसमें बैठकर सरकारी बेगार पूरी करेगा!

घर दर तो कुछ न सूझा। सूझा सरकारी बाग—ईडनगार्डन। वहां आकर सब प्रकारकी चिन्ताओंको भगानेवाली भगवती भङ्गका ध्यान किया। इस भगवतीकी कृपासे सब चिन्ताएं दूर होकर बुद्धि निर्द्वन्द हुई। तब पुलन्दा खोलकर देखना आरम्भ किया। नम्बर, मकान, नाम, जाति आदिसे लेकर पैदा होनेकी जगह तकका पता लिखनेकी बात देखी। देखते देखते जब नीचेको दृष्टि गई तो कुछ विचित्र बातें लिखी देखीं। इनमें यह भी लिखा था कि हीजड़ोंकी [illegible] लिखो। विचार उत्पन्न हुआ कि यह दिल्लगी तो नहीं है? किन्तु सरकार प्रजासे दिल्लगी कर ऐसा तो नहीं सकता!

[illegible] लिखे काटे और लिखा लिखा, तो हीजड़ोंको, हीजड़ों[illegible] लिखनेमें क्यों न लिखा जावे? इसलिये अब उनको भी

उत्पन्न ज्ञाप क्या किया जाय ? इसके सिवा जब हीजिड़ मर्द लिख गये तो मर्दों और हीजड़ोंमें पहचानही क्या रही ?

देर तक जीमें यही उलझन रही कि किस कारण सरकार मर्द और हीजड़ोंको एक कर रही है। क्या भारतवर्षमें मर्द और हीजड़ोंमें कुछ पहचान रखनेकी जरूरत नहीं है ? मैं इसी विचार में था कि एक लम्बी तरङ्गने उठकर मेरी गर्दन दबा दी। नशेकी गहरी झोंकमें मर्दों और हीजड़ोंकी एकता भलीभांति समझमें आने लगी।

अब भारतवर्षके मर्द मर्द कहलानेसे प्रसन्न हैं तो यहांके हीजड़ों को मर्द कहना क्या बेजा है ? मर्द ऐसा कौन काम करते हैं जो हीजड़े नहीं कर सकते ? एक पुरानी फारसी कहावत है कि हीजड़ेको हथियारसे क्या लाभ। अर्थात हीजड़ोंके पास यदि हथियार रहें भी तो उससे क्या लाभ है ? भारतवर्षमें जो लोग मर्द कहलाते हैं सरकारने उनसे हथियार छीन लिये हैं। केवल इस लिये कि उनकेपास हथियार रहनेसे कुछ फायदा नहीं है। कितनेही वर्ष बीत गये बिना हथियार रहने पर भी इस देशके मर्द, मर्दही कहलाते हैं। इससे जान पड़ता है कि हीजड़ोंके पास भी हथियार न रहनेसे उनको कोई नामर्दीका दोष नहीं लगा सकता। तथा जैसे हीजड़ोंके पास हथियार रहनेसे कोई लाभ नहीं, वैसेही अंगरेजी सरकारको समझमें भारतवर्षके मर्दोंके पास हथियार रहनेसे भी कुछ लाभ नहीं।

इस देशके हथियार-रहित मर्दोंको जब सरकार कृपापूर्वक मर्दही समझती है तो मनुष्यगणनामें इस देशके हीजड़ोंको भी उन्हींकी श्रेणीमें रख देना कुछ युक्ति विरुद्ध नहीं है।

यह तो हुई हथियारकी बात। अब हथियारोंका खयाल छोड़ कर मर्दों और हीजड़ोंका मुकाबला करना चाहिये। खानेमें, पीनेमें, चलने फिरनेमें, सोने जागने और उठने बैठनेमें, कपड़ा पहननेमें—सबमें देखिये और बताइये कि हीजड़े और मर्दोंके बीच इन सब बातोंमें क्या भेद है ?

इस देशके मर्द जिसी खाते पीते कपड़ा पहनते और बनते हैं
... रातको पांव पसारकर सो रहते हैं। हीजड़े भी ठीक इसी
...कार सब काम करते हैं। फिर उनका नाम भी सरकार मर्दोंमें
...ों न लिखे?

यदि गाने बजाने या छातीको पीटने और गलेमें ढोलको डाल
...को बात कहिये तो इस भारतवर्षमें ऐसे मर्द कहलानेवालोंकी भी
कमी नहीं है। मर्द नामधारियोंमें जो बनकर नाचनेवाले और
ढोलको बजानेवाले कितनेही हैं। हीजड़े अपनीही ढोलकी और
अपनेही पांवके घुंघरूओंकी आवाज पर नाचते हैं किन्तु मर्द, कब
...नानेवालोंमें कितनेही ऐसे हैं जो रण्डी या लौंडेकी संगतीके इशा...
पर नाचते हैं। फिर भी हीजड़ोंका नाम मर्दोंमें क्यों न लि...
जावे?

यदि यह कहो कि हीजड़े पराये द्वार पर जाकर बधाई देते हैं
और न्योछावर मांगते हैं, तो भी मियमनुष्य धर्मोंके निकट उनका
कुछ हीजड़ापन नहीं है। सेठजीके जम्हाई लेने पर पास बैठने
वालोंमेंसे कितनेही चुटकियां बजाते हैं और बाबू साहबकी बैठकमें
जाकर उनके मुंह पर उनके चेहरे मोहरे और कपड़े लत्तोंकी
प्रशंसा कितनेही गाते हैं। यदि यह सब लोग मर्द कहला सकते
हैं, तो हीजड़े भी मर्द कहला सकते हैं इसमें सन्देह नहीं।

हीजड़े विवाह आदि उत्सवों पर दो घड़ी तुम्हारी खुशामद...
करने आते हैं। पर हे मर्द नामधारियो! तुममेंसे ऐसे बहुत हैं...
जिनकी खुशामद करते उमरें बीत गईं। तुम मर्द हो तो भी...
तुम्हारी रक्षा सरकार करती है और हीजड़े, हीजड़े हैं तब...
उनकी रक्षा सरकार करती है! कौन काममें तुम उनसे बढ़...
हो जिससे तुम मर्द और वह हीजड़े कहलावें? तुम खाते...
पीते हो, शौकीनी करते हो, मानुषत्व दिखाते हो और अपनी...
खाते हो, हीजड़े भी यही सब करते हुए तुम्हारी तरह मर...
हैं। मरने पर दोनों बराबर! नहीं नहीं हीजड़े तुमसे बढ़...

क्योंकि हीजड़े मरकर अपने पीछे और हीजड़े नहीं छोड़ जाते, पर तुम अपनेसे मर्द बहुत छोड़ जाते हो!

इसके अतिरिक्त यह बात भी ध्यान रखनेकी है कि अब सरकार अङ्गरेजोंके बनाये सब कुछ बन सकता है। वह तुम्हारे हथियार छीन कर तुम्हें हीजड़ा बना सकती है और मनुष्यगणनामें हीजड़ोंका नाम मर्दोंके साथ लिखवा सकती है। इन सब बातोंसे तुम यह न समझ लेना कि शिवशम्भु हीजड़ोंका हिमायती है। नहीं नहीं, यह पागल ब्राह्मण तुम्हें हीजड़ों और मर्दोंके पहचाननेके दिव्य नेत्र देता है।

जिनके बाप दादा भेड़की आवाज सुनकर डर जाते थे, जिनको स्वयं चाकूसे कलमका डङ्क काटते भय लगता है उन्हें सरकारने "राय बहादुर" बनाया है। जिनकी हुकूमत उनके घरकी चारदीवारीसेभी बाहर नहीं निकली है, वैसे कितनेही राजाबहादुर और महाराजा बहादुर कहलाते हैं। जब मारवाड़का राजा भी राजा है और मोचीपाड़ेका राजा भी राजाही है तो हीजड़ोंके मर्दोंमें लिखे जानेका कुछ अफसोस नहीं है। जहां गवालियरका महाराज भी महाराज है और अयरियापाड़ाका महाराज भी महाराज है, उस देशके हीजड़ोंको सरकार मर्दोंमें लिखवावे तो शिवशम्भु शर्मा उससे नाराज नहीं। वरञ्च यदि सरकार उनको मर्दोंकी सब उपाधियोंसे भी विभूषित किया करे तो शिवशम्भुको अधिक प्रसन्नता होगी।

अपने इस नोटके साथ भङ्ग प्रसादात मैंने अपने हिस्सेकी गणना कर डाली है। और कागजोंका पुलन्दा उन्हीं साहबके सामने फेंक आया हूं। साहब मेरे कामसे प्रसन्न हुए हैं। मैंने यह भी सुना कि किसीके कामसे भी वह अप्रसन्न नहीं हुए। बेगारमें अप्रसन्नताही क्या? जो हो—"आम खाओ, पेड़ मत गिनो" (?)

शिवशम्भु शर्मा।

(भारतमित्र; १५ जून सन १९०१)

शिवशम्भुका चिट्ठा।

अधिमास-निर्णय।

जय भङ्ग भवानीकी! अहा हे लाला भारतमित्रजी! अब दो होलियां होजावें।

गत वर्ष दो दीवालियां थीं, दो एकादशी और दो जन्माष्टमी बहुधा हुआ करती हैं। अबके दो अधिक मास हैं। काशीके बड़े बड़े ज्योतिषी और बड़े बड़े पण्डित महामहोपाध्याय अबके सभा करके श्रावणको भी अधिक मास कहते हैं और आषाढ़को भी। पण्डित लोगोंके विचारकी सूक्ष्मताका इसीसे अच्छा परिचय मिलता है कि श्रावणवाले श्रावणहीका गीत गाते हैं, और आषाढ़वाले आषाढ़हीका। दरभङ्गा नरेशका पञ्चाङ्ग श्रावणका तरफदार है किन्तु काशीके महामहोपाध्याय सुधाकरजी झुण्डके झुण्ड महामहोपाध्यायगण सहित आषाढ़ पर डटे हुए हैं। ऐसी खींचखांच देखकर महाराज काशीनरेशने भी अपने दरबारमें पण्डितोंकी सभा करके कुछ फैसला करना चाहा था पर बात सहज न देखकर कुछ देर तो वह भी वहीं पड़ी भूल गयी। इससे आप समझ गये होंगे कि अधिमास निर्णय करना कुछ सहज नहीं है। किन्तु जो काम भारतके सब पण्डित मिलकर नहीं कर सकते, राजा महाराजा नहीं कर सकते, भङ्ग-प्रसादात् शिवशम्भु शर्मा उसी करनेको चले हैं।

अथमिति लिख्यते। शिवशम्भु शर्मा अपना फैसला आरम्भ करते हैं। आपराम होकर समझा चाहा कसौटी उनके घमंडको

सद्गत होजायं। आषाढ़ मासका अधिमास होना हम पसन्द करते हैं। क्योंकि महामहोपाध्याय सुधाकर द्विवेदी इसे पसन्द करते हैं। यदि कोई कहे कि क्यों शिवशम्भु शर्मा! तुमने क्या कुछ भी ज्योतिष पढ़ा है जो यों बीचमें टांग अड़ानेको चले आये हो? तो हमारा उत्तर यह है कि क्यों साहिबो! भट्टाचार्य कैलाशचन्द्र शिरोमणि, पण्डित राममिश्र शास्त्री, पण्डित शिवकुमार शास्त्री जैसे तीन धुरन्धर महामहोपाध्याय जब केवल दूसरेको सुनकर बिना ज्योतिष पढ़े ही आषाढ़को अधिमास निर्णय करते हैं तो शिवशंभु शर्माकी और कुछ नहीं तो अन्धुलज्जाहीके लिये इन लोगों की बात क्यों न मान लेना चाहिये? यह लोग काशीके पण्डित हैं और शिवशंभु शर्माके नाममें भगवान काशीपतिका नाम है। इतना भारी मेल रहने पर भी शिवशम्भु शर्माको काशीके इन विद्वानोंका क्या कुछ लिहाज न करना चाहिये? अतः आषाढ़ ही अधिक मास हो।

इससे यह लाभ होगा कि यदि पहले आषाढ़में वर्षा न होगी तो दूसरेमें अवश्य होगी। एक आषाढ़ सूखा निकल जानेसे किसानोंके जी न घबरावेंगे।

और यदि श्रावण अधिमास होजाय तो भी हम राजी हैं। क्योंकि बहुतसे पञ्चाङ्गोंमें यही महीना अधिक मास छप चुका है— बहुतसे क्या इतने लोगोंने इसी महीनेको अधिक माना है कि यदि उनकी गिनती की जाय तो सुधाकरजी अकेलेसे खड़े दिखाई देने लगें। दरभङ्गानरेशके सिवा रीवां नरेश भी इसीको अधिमास मानते हैं। फिर श्रावणके माननेसे वह पञ्चाङ्ग निकम्मे न होंगे जिनमें श्रावण अधिमास छप गया है। विशेषकर दरभङ्गानरेशका पञ्चाङ्ग देखकर तो हमको बड़ाही मोह होता है। श्रावण अधिमास न होनेसे ऐसा सुन्दर पञ्चाङ्ग किस कामका रहेगा? फिर श्रावणवादी पण्डित विनायक शास्त्री और पण्डित चन्द्रदेवजी प्रसन्न होंगे। शिवशम्भु शर्माके कानोंमें दो मास तक मलारकी मीठी

तानें गूंजेंगी, दो महीने तक शिवालयोंमें हर हर बम बमका मधुर मन्द प्रतिध्वनित होता रहेगा। अतः महामहोपाध्याय रामभिश शास्त्रीकी भांति शिवभक्त धर्मी आषाढ़के भी तरफदार हैं और दबी जबानसे श्रावणके भी। अर्थात् अपराधी निर्दोष है पर उसे फांसी भी होसकती है!

यदि यह न हो तो आधा आषाढ़ और आधा श्रावण मिलाकर अधिमास कर लिया जाय। क्योंकि गत शनिवारको एक सज्जनोंने इसमें भलीभांति गणना कराकर निश्चय कर लिया है कि चाहे आषाढ़ अधिमास माना जाय या श्रावण—तीस दिन अधिक होंगे यह बढ़के नहीं होंगे और उनमें चन्द्रमाका एकही दौरा होगा। यदि यह बात भी मंजूर न हो तो दो अधिमास कर दि जायं। अधिमासके दो होनेसे ब्राह्मणोंका बड़ा लाभ होगा। दि दस दो होनेसे दिग्गज भी प्रसन्न होंगे और ब्राह्मणोंके पेट लम्बे पूरे बत्तीस दिन तक खीर पूरी मिलेंगी। तबतक ... करके दोनों पक्षके भगड़ोंको अधिमास निर्णय कारिका भी बना कर लिख जायगा।

किन्तु यह सब बातें होने पर भी शिवशम्भु शर्माको जीमें फाल्गुन मास पसन्द है। यदि ज्योतिषी सज्जनोंमें इतनी शक्ति हो कि वह इस मखडलान्त, दृग्गणित, सूर्यसिद्धान्त—इन तीनोंमेंसे किसीका सहारा लेकर फाल्गुनको अधिक मास करें तो इस भङ्गड़को खुशीका ठिकाना न रहे। लगातार साठ दिन तक आनन्द के तार बजेंगे, चारों ओरसे बाजोंकी भनकार कानोंमें आवेगी, "भारतमित्र"के दोकी जगह चार नम्बर रंगीन निकलेंगे, मौजें उड़ेंगी, बागीचोंमें चारों ओर भङ्ग पर रगड़ा लगेगा और पीनेवाले भंकड़ भंकड़ कर कहेंगे—

कूंडी सोटेकी यजा और देख फिर कुदरतके खेल।
छोड़ सब कामोंको गाफिल भङ्ग पी और दण्ड पेल॥

अतः शिवशम्भु शर्मा दो होली चाहते हैं। होसके तो उसकी यह आशा पूरी की जाय—काशीके धुरन्धर पण्डितोंसे यही प्रार्थना है। और यदि उनसे यह कुछ भी न होसके तो अगले वर्षसे जनवरीसे पञ्चाङ्ग आरम्भ करें। ऐसा करनेसे न अधिक मास बढ़ानेकी जरूरत पड़ेगी और न यों धड़ाबन्दी होगी।

शिवशम्भु शर्मा।

(भारतमित्र ६ जुलाई सन १८०१।)

शिवशम्भुका चिट्ठा।

मेम्बर बुलानेकी तरकीब।

भारतमित्र सम्पादक ! इस बारकी भांगमें कुछ नया न था। इसीसे रङ्ग अच्छा न जमा। आगेको जरा तेज भेजना। सुना है कि कलकत्तेकी मारवाड़ी एसोसीयेशनको मेम्बर जमा करनेकी बड़ी चिन्ता पड़ी है। महीनोंसे सप्ताहके सप्ताह खाली जारहे हैं कोरम तक नहीं होता है। फिर और बातें तो क्या हों ?

फीकी नशेमें मैंने पड़े पड़े सोचा कि यदि मारवाड़ी लोग ए- सोसियेशन बनावें तो उसमें क्या होना चाहिये ? मेरी समझमें यही आया कि मारवाड़ियोंके लिये जो कुछ होना चाहिये वह एसोसीयेशनमें होता है। जो मेम्बर राजी खुशी, शर्माशर्मी अप कुछ माथ भौं सिकोड़कर दो रुपया मासिक चन्देका अदाकर दें हैं वह लेलिया जाता है और मकानका भाड़ा उससे एक सौ रु मासिक देदिया जाता है। गैसवाला गैस देता है और एसोसीयेश का दरवार उसे दियासलाई दिखाकर रोशन कर देता है। चांद झाड़ देता है यही तकिये साफ कर देता है। क्लर्क काररवाईय रिपोर्ट लिख देता है। इतना सब काम भगवानकी कृपासे आपही आप होजाता है। किसी मेम्बर या ओहदेदारको इसके लिये ज़र भी कष्ट नहीं करना पड़ता। सब अपने अपने घरोंमें आनन्द तकियेके सहारे पैर फैलाये पड़े रहें किसी प्रकारकी चिन्ताक आवश्यकता नहीं। अत: संसारमें जिनके काम आपसे आप होजात हैं उन्हें किसी प्रकारका कष्ट करनेकी क्या जरूरत है ?

फिर संसारमें टका कमानेके सिवा मारवाड़ियोंको ऐसा काम

क्या है जिसके लिये सभा समाजमें आनेकी जरूरत पड़े ? यदि व्यिक्की कहिये तो मारवाड़ी वाणिज्य करतेही हैं उसके लिये म छोड़कर एसोसीयेशनमें जानेकी क्या जरूरत है ? रही मालिक बातें, उनमें बेचारे मारवाड़ी पुरुषोंका दखलही क्या है ? माजके मालिक मारवाड़ी गृहलक्ष्मियां हैं। उसमें दखल देनेमें यद कनकड़नकी कड़ाई मरदाना माथे पर रखना पड़े। सो माजकी मालकिन स्त्रियां चाहे सड़क पर पैदल गाती निकलें हे गाड़ीमें बैठकर। इसकी डोर उन्हींके हाथ है। पोलिटिकल त छेड़नेमें राजभक्तिमें खलल आता है। सारांश यह कि एक ऐसी जरूरी बात नहीं जिसके लिये मारवाड़ी सज्जनोंको सभा पदार्पण करनेका महाकष्ट दिया जावे।

मेरे इस विचारको पड़ोसका एक लड़का सुन रहा था। वह ोला कि ठीक है महाराज ! कोई काम तो मारवाड़ी एसोसीयेशन नहीं है पर सभा न जुड़नेसे सब मेम्बरी छोड़ते जाते हैं, कोई एक हाई छोड़ चुके हैं बाकीमेंसे बहुत छोड़नेवाले हैं यदि ऐसा हुआ ो एसोसीयेशन कैसे रहेगी ? मैंने चुपके चुपके कहा तब तो और ो खुशकी बात है अर्थात मारवाड़ी एसोसीयेशनका स्वर्गारोहण- संस्कार भी और कामोंकी भांति आपसे आप होजावेगा और किसी म्बर महाशयको कष्ट न होगा।

पर रङ्ग फीका था यह बात भी दिल पर न जमी। ख्याल ाया कि शायद मारवाड़ी लोग मेम्बर एकत्र करनाही पसन्द रते हों। ऐसी दशामें उनका उत्साह बढ़ानेके लिये मेम्बर एकत्र रनेकी तरकीब अवश्य बताना चाहिये ! भांगकी लहरमें जो कुछ ेरी समझमें आया सो बताता हूं—

(१) मेम्बरोंके पास जो बुलानेका कार्ड भेजा जाता है वह न भेजकर पारसी थियेटर वालेके विज्ञापनकी भांति बाजे गाजेके साथ विज्ञापन बटा करे। इससे मेम्बर लोगोंको ध्यान अवश्य होगा।

कर मेम्बरोंको सभामें लेआया करे और सभा होलेने पर वापि उनके घर पहुंचा आया करे।

(७) एसोसीयेशन हालके द्वार पर रोशनी की जावे, भण्ड लगाया जावे और बाजा बजाया जावे। उससे भी कुछ लोगों आनेकी सूरत होसकती है। बाजेकी आवाज़से अवश्य मेम्बरों दिल कुछ खिंचेंगे।

और भी उपाय तलाश करनेसे कुछ मिल सकते हैं। आज ह पांच सात उपायों पर ही बस की जाती है। तबीयत दुरुस्त नहीं है, नशा जमा नहीं है। उपाय कितनेही अच्छे अच्छे कह सक्ते हैं। मारवाड़ी लोग भङ्गका प्रवन्ध कर धनको सार्थक करें तो शिवशम्भु शर्माकी साचात् भङ्गबुद्धिसे मारवाड़ी एसोसीयेशनका दिव्य समारोह नचत्रावली खचित चन्द्र सूर्य्य विभूषित पुच्छलतारे की पूंछमें विलम्बित गगन पट पर भी विराजित होसकता है। किन्तु भङ्ग चाहिये, ऐसे फीके नशेमें वह दिव्यबुद्धि नहीं आवेगी।

—शिवशम्भु शर्मा।

(भारतमित्र, २७ फरवरी सन १९०४ ।)

शिवशम्भुका चिट्ठा ।

मारवाड़ी महाशयोंके नाम ।

कितनेही दिन हुए भांग छूट गई। फिर भी लार्ड कर्जनको चिट्ठा लिखनेका इतना नशा था कि और किसीको कुछ लिखनेकी इच्छा न थी। किन्तु हे कलकत्तेके मारवाड़ी महोदयगण ! जब आपलोगोंकी चिट्ठीपत्री म्युनिसिपलिटीके चेयरमैनसे चलती है तथा छोटे बड़े लाटों तकके नाम आप चिट्ठियां भेजते हैं तो शिवशंभु शर्माका आपके नाम एक चिट्ठा लिख डालना कौन अपमानका काम है। हां कुछ मानका काम हो तो हो सकता है।

भारतमित्र आप लोगोंके विषयमें कुछ ऐसी बातें सुनाता है जो आप लोगोंकी प्रकृतिके एकदम विरुद्ध हैं। अर्थात् वह ऐसी बातें हैं जो आपलोगोंके करनेकी नहीं हैं और न इससे पहले कभी आप लोगोंने की हैं। प्रकृतिके विरुद्ध चलनेका फल अच्छा नहीं होता। एक कहावत चली आती है—

करघा छोड़ तमाशे जाय।
नाहक चोट जुलाहा खाय॥

मेरा माथा उसी समय ठनका था जब आपलोगोंने एक एसोसीयेशन बनाई थी। उस समय भी मैंने आपको एक उचित सलाह दी थी। वह काम भी आप लोगोंके रुचिके प्रतिकूल था पर अब सुना है कि आप कुछ आगे बढ़ रहे हैं। आप कुछ विद्या प्राप्त करनेकी चेष्टा कर रहे हैं। किसी विद्वान सन्यासीके नाम पर तुमने कोई विद्यालय खोला है और सुना है कि एक दिन तुम्हारी एसोसीयेशनके कुछ मुखिया लोग (क्षमा कीजिये आप लोग लिखने

से तुम लिखनेमें कुछ सुभीता पड़ता है और यह कुछ शिष्टाचारके विरुद्ध भी नहीं है क्योंकि यह अङ्गरेजीके You का तरजमा है और फिर आप लोगोंमें तो बड़े शिष्टाचारके समय तू चलता है। छोटेलाटके पास चांदीके कासकेटमें एक अभिनन्दनपत्र लेकर गये थे। वहां जाकर तुमने कहा कि हम लोगोंने विद्याकी ओर ध्यान दिया है अङ्गरेजी हिन्दी पढ़ानेके लिये एक विद्यालय खोल दिया है। उसमें मारवाड़ी जातिके लड़के हिन्दी अङ्गरेजी संस्कृत बिना किसी प्रकारकी फीस दिये पढ़ते हैं। और सुना कि छोटेलाट इस पर प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा कि केवल इस विद्यालयही पर बस मत करना कुछ उच्च शिक्षाका भी प्रबन्ध करना। भाई! तुम्हारे सिरकी शपथ है जबसे मैंने यह सुना है मेरा नशा हरन होगया है। मैंने सोचा था कि अभी दौड़कर आपकी सभामें पहुंचूं और आप लोगोंको इस अनर्थ कार्य्यसे रोकूं पर मुझे भय था कि एक तो वहां जाने पर भी आप सब लोगों तक मेरी बात पहुंचेगी या न पहुंचेगी दूसरे सुना है कि एक सप्ताहकी पुकार दूसरे सप्ताहमें आपके पास पहुंचती है। इससे भारतमित्र द्वारा यह चिट्ठी आपके नेत्र कमलों तक पहुंचाना अच्छा समझा।

खबरदार! खबरदार! विद्याके कभी पास न फटकना। विद्या का और तुम्हारा कुछ मेल नहीं चौदह पीढ़ी तकका पता लगा लो विद्यासे तुम्हारा कुछ सरोकार न निकलेगा। विद्या तुमसे और तुम विद्यासे सदा कोसों तक भागते रहे हो। विद्याने तुमसे और तुमने विद्यासे कभी कुछ लाभ नहीं उठाया जहां तुम रहते हो वहांसे कोसोंदूर खड़े रहकरभी विद्याके पर जलते हैं। ऐसे जो तुम हो तुम्हें विद्यासे क्या सरोकार है? विद्यासे तुम बड़े आदमी नहीं हुए विद्या तुम्हें यहां नहीं लाई विद्यासे तुम्हारा कुछ सब धन वैभव नहीं हुआ। जो स्वर्गीय भोग तुम भोग रहे हो यह सब विद्याका फल नहीं है। जिस चीजसे तुमको कभी कुछ लाभ नहीं पहुंचा उसका तुम आदर करना चाहते हो यह कैसे अनर्थ

की बात है। कलकत्ते में जब तुम्हारे पूर्व पुरुष आये तो। उन्हें विद्या अपनी पीठ पर चढ़ाके नहीं लाई थी ऊंट लाया था।

शेखावाटीसे रानीगंज तक ऊंटहीके अनुग्रहसे आप लोग पहुंचे थे। यह बात पचास सालसे अधिककी नहीं है यदि होसके तो परम श्रद्धास्पद ऊंटजी महाराजके लिये एक पंचायती मकान बनाओ उसके लिये कहीं दस बड़ेआदमी एकत्र होकर जबरदस्ती एक पञ्चायती चन्दा खोलो और उसमें एक ऊंटको रखकर षोड़शोपचारसे उसकी पूजा करो। विद्यालयसे तुमको क्या मिल सकता है और क्या मिलेगा? तुम्हारे लड़के पढ़कर काम धन्धेसे भी जाते रहेंगे। ऊंटकी पूजासे दो लाभ होंगे। एक कलकत्तेमें ऊंट नहीं है लोगोंको ऊंट देखनेके लिये अलीपुरके चिड़ियाखाने में न जाना पड़ेगा दूसरे लोग समझेंगे कि मारवाड़ियोंमें गुणका ड़ा आदर है जो उनके साथ किसी प्रकारका उपकार करता है सका बदला वह भी देते हैं। इससे हजार काम छोड़कर पहले ह काम करो।

तुममेंसे कितनोंहीके पास जो धन है वह तुमने अपने परिश्रम ा बुद्धिके जोड़तोड़से कमाया है विद्याके बापका उसमें भी कुछ ाहारा नहीं लगा। जो कुछ तुम्हारे पास है उस धनकी लपासे ़ खोनचे और फेरीसे लेकर दुकानदारी तक और मामूली दस्तूरी ा लेकर साहूकारी और बड़े बड़े आफिसोंकी दलाली तक तुम्हारे ितने काम है वह सब तुम्हारोंही बुद्धि या भाग्यके जोरसे हुए हैं ानमें भाते जो कुछ होरहा है वह सब भी तुम्हारा अपना है। वेद्यासे उसका कुछ लगाव नहीं है। तुम्हारे सजे मकान और ़ड़िया बाग बागीचे और अच्छे गाड़ी घोड़े सब तुम्हारी लक्ष्मीके ातापसे हैं उन सबको भोगनेका तुम्हें स्वत्व प्राप्त है क्योंकि वह सब तुम्हारे धनसे बने हैं और धन तुम्हारे परिश्रमसे उत्पन्न हुआ है। भूलते हैं वह लोग जो तुम्हें इन भोगविलासकी चीजोंसे रोकना चाहते हैं। जो लोग तुम्हारे धन वैभवको देख नहीं सकते

वही तुम्हारे काममें आकर विद्या विद्या पुकारते हैं। उन की बात सुननेके योग्य नहीं है। विद्या किस कामकी चीज है। वह न ओढ़नेकी है न बिछानेकी और न खानेकी। यदि तुम्हारे पास रुपया होगा तो सैकड़ों विद्वान तुम्हारे पास आकर टक्करें मारेंगे। तुम्हारे गवड मूर्ख होने पर भी तुम्हें झुककर सात सात सलाम करेंगे तुम्हारी भद्दी सुहरमी शकलको भी अच्छा बतावेंगे। कितने ही पढ़े लिखे दस दस बीस बीस रुपयेकी नौकरीके लिये तुम्हारे दरवाजे पर ठोकरें खाते फिरते हैं। यहांतक कि पांच पांच चार चार रुपये महीनेके लिये तुम्हारे लड़कोंको पढ़ानेके लिये कितनेही तुम्हारी खुशामद करने आते हैं और तुम उनको दरबान और कहारोंसे भी बदतर समझतेही नहीं हो उनके मुंह पर कह भी देते हो। विद्या होनेसे यह सब बातें कहां होंगी। सचमुच विद्वानोंसे तुम्हारे दरवान अच्छे हैं तुम्हारे ग्वाले अच्छे हैं औ तुम्हारे अच्छा होनेमें तो कोई सन्देहही नहीं।

बिना विद्याही तुम राजा होगये रायबहादुर होगये और आगे अभी तुम्हारे भाग्यमें क्या क्या होना लिखा है। नीतिमार्गमें कहा है—

विद्याददाति विनयं विनयंद्दाति पात्रतां।
पात्रतात् धनमाप्नोति धनाद्धर्म ततः सुखम्॥

अर्थात् विद्यासे विनय मिलती है विनयसे योग्यता, योग्यतासे धन, धनसे धर्म और धर्मसे सुख। सो देखते हैं कि धन आपके हाथमें है। जबर्दस्तीसे तुम लोग विद्यासे चार पीढ़ी लंघे हो, धन तुम्हारे पास मौजूद है इससे धर्म भी ख्वाहमख्वाह तुम्हारेही पास रहेगा। आयगा कहां? सुख तुम्हें मिलही रहा है तुम भी जानते हो और सभी जानते हैं। इससे विद्याके पीछे दौड़ना [illegible] छकड़ेके पीछे फिरना है। तुम्हारे पास धन है सुख है और क्या चाहिये?

विद्याका फल धन तुम्हारे हाथमें और धनका फल सुख

वार्य हाथमें है। उनको तुम भोगो और जो तुम्हें विद्या विद्या काहकर कुपथमें लेजाना चाहते हैं उनको धता बताओ। संसार अनित्य है जीवन भी अल्प है। इसमें जो हो कर लेना चाहिये। फिर यह सब बातें कहां मिलेंगी। धनसे तुम्हारे कितनेही काम होजाते हैं। जिस प्रकार दूसरे कामोंके लिये तुम्हारे यहां रसोइये कहार जमादार गुमाश्ते आदि हैं वैसेही विद्याके लिये बहुत मिलेंगे। विद्याका फल धन सब काम करेगा और तुम धनके फल सुखकी लूट कर डालो। खाओ पीओ बागीचे जाओ मौज करो। बागीचोंमें तुम जो आनन्दके काम करते हो उनकी उन्नति करो। अपने लड़केवालोंको भी मौज करने दो। बहुत जन्मोंके शुभ कर्मों के फलसे उनका तुम्हारे घरोंमें जन्म हुआ है उन्हें भी आनन्द करने दो। यह पुण्यक्षेत्र कलकत्ता और इसके यह सड़कोंके दोनों ओर के बालाखाने अन्य जन्ममें और अन्यत्र फिर कहां? इससे आप भी सफल जन्म हो और सन्तानको भी होने दो।

धन कमाकर तुम्हारे बड़ोंको धर्मका खयाल होता था। तुमने उन्नति की है। धर्मको छोड़कर उसके फल सुखको ग्रहण किया है। इससे धर्मप्राप्तिके लिये तुम्हारे बड़े जो धन खर्च करते थे वह तुम उससे एक दरजे ऊंची चीज सुखमें करते हो अच्छा करते हो। बुद्धिमान लोग सारग्राही होते हैं। तुम भी सारग्राही हो। इससे खबरदार विद्यामें एक पैसा न दो और न उसकी ओर मुंह करके सोचो ऐसा करोगे तो तुम्हारे भोगविलासमें बाधा पड़ेगी। बाबूपन शौकीनीमें कमी आवेगी जिसको तुमने धर्मको धक्का देकर हासिल किया है। वाजिदअली शाहकी एक कहावत पर सदा ध्यान रखो—

ढेले फूटे हुए नवाब—पढ़े पढ़ाये हुए खराब।

खूब आनन्द करो, खूब भंग पीओ और बने तो एक दो गिलास शिवशम्भु शर्माको भी किसी बागीचेमें बुलाकर पिलाओ और होली का आशीर्वाद लो।

शिवशम्भु शर्मा।

(भारतमित्र, २१ दिसम्बर सन १८०५।)

शिवशम्भुका चिट्ठा।

लार्ड मिन्टोका स्वागत।

भगवान करे श्रीमान इस विनयसे प्रसन्न हों—मैं इस भार
देशकी मट्टीसे उत्पन्न होनेवाला, इसका अन्न फल मूल आदि ख
कर प्राण धारण करनेवाला, मिल जाय तो कुछ भोजन करनेवाल
नहीं तो उपवास कर जानेवाला, यदि कभी कुछ भंग प्राप्त होजा
तो उसे पीकर प्रसन्न होनेवाला, जवानी बिताकर बुढ़ापेकी ओ
फुर्तीसे कदम बढ़ानेवाला और एक दिन प्राणविसर्जन करके इ
मातृभूमिकी वन्दनीय मट्टीमें मिलकर फिर शान्तिलाभ करनेक
आशा रखनेवाला शिवशम्भु शर्मा इस देशकी प्रजाका अभिनन्दनपत्र
लेकर श्रीमानकी सेवामें उपस्थित हुआ हूं। इस देशकी प्रजा
श्रीमानका हृदयसे स्वागत करती है। आप उसके राजाके प्रति-
निधि होकर आये हैं। पांच साल तक इस देशकी ३० करोड़
प्रजाके रक्षण पालन और शासनका भार राजाने आपको सौंपा।
इससे यहांकी प्रजा आपको राजाके तुल्य मानकर आपका स्वागत
करती है और आपके इस महान पद पर प्रतिष्ठित होनेके लिये
हर्ष प्रकाश करती है।

भाग्यसे आप इस देशकी प्रजाके शासक हुए हैं। अर्थात् यहां
की प्रजाकी इच्छासे आप यहांके शासक नियत नहीं हुए। न यहां
की प्रजा उस समय तक आपके विषयमें कुछ जानती थी जब कि
उसने श्रीमानके इस नियोगकी खबर सुनी। किसीको श्रीमानकी
ओरका कुछ भी गुमान न था। आपके नियोगकी खबर इस देश
में बिना मेघकी वर्षाकी भांति अचानक आगिरी। अब भी यहांकी

जा श्रीमानके विषयमें कुछ नहीं समझी है, तथापि उसे आपके नियोगसे हर्ष हुआ। आपको पाकर वह वैसीही प्रसन्न हुई है जैसे डूबता घास पाकर प्रसन्न होता है। उसने सोचा है कि आप तक पहुंच जानेसे उसकी सब विपदोंकी इति होजायगी।

भाग्यवानोंसे कुछ न कुछ सम्बन्ध निकाल लेना संसारकी चाल है। जो लोग श्रीमान तक पहुंच सके हैं उन्होंने श्रीमानसे भी एक गहरा सम्बन्ध निकाल लिया है। वह लोग कहते हैं कि सौ साल पहले आपके बड़ोंमेंसे एक महानुभाव यहांका शासन कर गये हैं इससे भारतका शासक होना आपके लिये कोई नई बात नहीं है। वह लोग साथही यह भी कहते हैं कि सौ साल पहलेवाले लार्ड मिन्टो बड़े प्रजापालक थे। प्रजाको प्रसन्न रखकर शासन करना चाहते थे। यह कहकर वह श्रीमानसे भी अच्छे शासन और प्रजा रंजनकी आशा जनाते हैं। पर यह सम्बन्ध बहुत दूरका है। सौ साल पहलेकी बातका कितना प्रभाव होसकता है, नहीं कहा जा सकता। उस समयकी प्रजामेंसे एक आदमी जीवित नहीं जो कुछ उस समयकी आंखों देखी कह सके। फिर यह भी कुछ निश्चय नहीं कि श्रीमान अपने उस बड़ेके शासनके विषयमें वैसाही विचार रखते हों जैसा यहांके लोग कहते हैं। यह भी निश्चय नहीं कि श्रीमानको सौ साल पहलेकी शासननीति पसन्द होगी या नहीं तथा उसका कैसा प्रभाव श्रीमानके चित्त पर है। हां, एक प्रभाव देखा कि श्रीमानके पूर्ववर्त्ती शासकने अपनेसे सौ साल पहलेके शासककी बात स्मरण करके उस समयकी योगाकर्से गवर्नमेन्ट हौसके भीतर एक नाच नाच डाला था।

सारांश यह कि लोग जिस ढङ्गसे श्रीमानकी बड़ाई करते हैं वह एक प्रकारकी शिष्टाचारकी रीति पूरी कर रहे हैं। आपकी अपनी बड़ाईका मौका अभी नहीं आया, पर वह मौका आपके हाथमें विलक्षण रूपसे है। श्रीमान इस देशमें अभी यदि अज्ञात-कुल नहीं तो अज्ञातशील अवश्य हैं। यहांके कुछ लोगोंकी समझ

में आपके पूर्ववर्त्ती शासकने प्रजाको बहुत संताया और वह इसी
शायसे बहुत तंग हुई। वह समझते हैं कि आप उन पीड़ाओंको
दूर कर देंगे जो आपका पूर्ववर्त्ती शासक यहां फैला गया है। इसी
वह दौड़ दौड़ कर आपके द्वार पर जाते हैं। यह कदापि न स
झिये कि आपके किसी गुण पर मोहित होकर जाते हैं।
जैसे आंखों पर पट्टी बांधे जाते हैं वैसेही चले आते हैं, जिस
में हैं उसीमें रहते हैं।

अब यह कैसे मालूम हो कि लोग जिन बातोंको कष्ट म
हैं उन्हें श्रीमान भी कष्टही मानते हों? अथवा आपके पूर्व
शासकने जो काम किये आप भी उन्हें अन्यायभरे काम मानते
यहभी एक और बात है। प्रजाके लोगोंकी पहुंच श्रीमान
बहुत कठिन है। पर आपका पूर्ववर्त्ती शासक आपसे पहले
मिल चुका और जो कहना था वह कह गया। कैसे जाना
कि आप उसकी बात पर ध्यान न देकर प्रजाकी बात पर ध्या
देंगे? इस देशमें पदार्पण करनेके बाद जहां आपको जरा भी
होना पड़ा है वहीं उन लोगोंसे घिरे हुए रहे हैं जिन्हें आपके पू
वर्त्ती शासकका शासन पसन्द है उसकी बात बनाई रखनेको अपनी
इज्जत समझते हैं। अब भी श्रीमान चारों ओरसे उन्हीं लोगों
घेरेमें हैं। कुछ करने धरनेकी बात तो अलग रहे, श्रीमान
विचारोंको भी इतनी स्वाधीनता नहीं है कि उन लोगोंके खिंचे
घेरेको जरा भी उल्लंघन कर सकें। तिसपर गजब यह
कि श्रीमानको इतनी भी खबर नहीं कि श्रीमानकी स्वाधीनता पर
इतने पहरे बैठे हुए हैं। हां, यह खबर होजाय तो वह बच
सकते हैं।

जिस दिन श्रीमानने इस राजधानीमें पदार्पण करके इस
सौभाग्य बढ़ाया उस दिन प्रजाके कुछ लोगोंने [illegible]।
[illegible] श्रीमानको बड़ी कठिनाईसे एक दृष्टि देख पाए
इसके लिये पुलिस [illegible] घूंसे और धक्के भी खाए

कये। बस उन लोगोंने श्रीमानके श्रीमुखकी एक झलक देखली।
कुछ कहने सुननेका अवसर उन्हें न मिला न सहजमें मिल सकता
हुजूरने किसीको बुलाकर कुछ पूछताछ न की न सही, उसका कुछ
अरमान नहीं, पर जो लोग दौड़कर कुछ कहने सुननेकी आशामें
हुजूरके द्वार तक गये थे उन्हें भी उलटे पांव लौट आना पड़ा।
ऐसी आशा अन्ततः प्रजाको आपसे न थी। इस समय वह अपनी
आशाको खड़ा होनेके लिये स्थान नहीं पाते हैं।

एक बार एक छोटासा लड़का अपनी सौतेली मातासे खानेको
रोटी मांग रहा था। सौतेली मा कुछ काममें लगी थी लड़केके
चिल्लानेसे तंग होकर उसने उसे एक बहुत ऊंचे ताकमें बिठादिया।
बेचारा भूख और रोटी दोनोंको भूल नीचे उतार लेनेके लिये रो रो
कर प्रार्थना करने लगा, क्योंकि उसे ऊंचे ताकसे गिरकर मरनेका
डर भय होरहा था। इतनेमें उस लड़केका पिता आगया। उसने
पितासे बहुत गिड़गिड़ाकर नीचे उतार लेनेकी प्रार्थना की। पर
सौतेली माताने पतिको डांटकर कहा, कि खबरदार! इस शरीर
लड़केको वहीं टंगे रहने दो, इसने मुझे बड़ा दिक किया है। इस
बालककीसी दशा इस समय इस देशकी प्रजाकी है। श्रीमानसे
वह इस समय ताकसे उतार लेनेकी प्रार्थना करती है रोटी नहीं
मांगती। जो अत्याचार उस पर श्रीमानके पधारनेके कुछ दिन
पहलेसे आरम्भ हुआ है उसे दूर करनेके लिये गिड़गिड़ाती है रोटी
नहीं मांगती। बस, इतनेहीमें श्रीमान प्रजाको प्रसन्न कर सकते
हैं! सुनाम पानेका यह बहुतही अच्छा अवसर है, यदि श्रीमान
को उसकी कुछ परवा हो।

आशा मनुष्यको बहुत लुभाती है, विशेषकर दुर्बलको परम
कष्ट देती है। श्रीमानने इस देशमें पदार्पण करके बम्बईमें कहा
और यहां भी एक बार कहा कि अपने शासनकालमें श्रीमान इस
देशमें सुख शान्ति बढ़ाना चाहते हैं। इससे यहांकी प्रजाको बड़ी
आशा हुई थी कि वह ताकसे नीचे उतार ली जायगी, पर श्रीमान

के दो एक कामों तथा कौंसिलके उतरने उस पायाको ढीला ह
डाला है, उसे ताकमें उतरनेका भरोसा भी नहीं रहा।

अभी कुछ दिन हुए आपके एक लफटन्टने कहा था कि
दशा उस आदमीकीसी है जिसके एक हिन्दू और एक मुस
दो जोरू थीं. हिन्दू जोरू नाराज रहती थी और मुसलमान
प्रसन्न। इससे वह हिन्दू जोरूको हटाकर मुसलमान बीबीसे
प्रेम करने लगे। श्रीमानके उस लफटन्टकी ठीक वैसी दशा
नहीं, कहा नहीं जासकता। पर श्रीमानकी दशा ठीक उस
के पिताकीसी है जिसकी कहानी ऊपर कही गई है। ऊपर
का लड़का ताकमें बैठा नीचे उतरनेके लिये रोता है और
उसकी नवीना सुन्दरी स्त्री लड़केको खूब डरानेके लिये पति
आंखें लाल करती है। प्रजा और "प्रेस्टिज" दो खयालोंमें श्री
फंसे हैं। प्रजा ताकका बालक है और प्रेस्टिज नवीन सुन्
पत्नी—किसकी बात रखेंगे? यदि दया और वात्सल्यभाव श्रीम
के हृदयमें प्रबल हो तो प्रजाकी ओर ध्यान होगा नहीं तो प्रेस्टि
की ओर ढुलकनाही स्वाभाविक है।

अब यह विषय श्रीमानहीके विचारनेके योग्य है कि प्रजाकी ओ
देखना कर्तव्य है या प्रेस्टिजकी। आप प्रजाकी रक्षाके लिये आये
या प्रेस्टिजकी। यदि आपके खयालमें प्रजारूपी लड़का ताकमें बै
रोया करे और "उतारो, उतारो" पुकारा करे, इसीमें उसका हि
और शान्ति है तो उसे ताकमें टंगा रहने दीजिये जैसाकि इस सम
रहने दिया है। यदि उसे वहांसे उतारकर कुछ खाने पीनेको
देनेमें सुख है तो वैसा किया जासकता है। यह भी होसकता है कि
उसकी विमाताको प्रसन्न करके उसे उतरवा लिया जाय इसमें प्रजा
और प्रेस्टिज दोनोंकी रक्षा है।

जो बात आपको भली लगे वही कीजिये—कर्तव्य समझिये
वही कीजिये। इस देशकी प्रजाको अब कुछ कहने सुननेका साहस
नहीं रहा। अपने भाग्यका उसे भरोसा नहीं, अपनी प्रार्थनाके

स्वीकार होनेका विश्वास नहीं। उसने अपनेको निराशाके हवाले कर दिया है। एक विनय और भी साथ साथ की जाती है कि इस देशमें श्रीमान जो चाहें बेखटके कर सकते हैं, किसी बातके लिये विचारने या सोचमें जानेकी जरूरत नहीं। प्रशंसा करनेवाले अब और चलते समय बराबर आपको घेरे रहेंगे। आप देखही रहे हैं कि कैसे सुन्दर कासकेटोंमें रखकर, लम्बी चौड़ी प्रशंसा भरे एड्रेस लेकर लोग आपकी सेवामें उपस्थित होते हैं। श्रीमान उन्हें बुलाते भी नहीं किसीप्रकारकी आशा भी नहींदिलाते, पर वह आते हैं। इसी प्रकार हुजूर जब इस देशको छोड़ जायंगे तो हुजूरवाला को बहुतसे एड्रेस उन लोगोंसे मिलेंगे, जिनका हुजूरने कभी कुछ भला नहीं किया। बहुत लोग हुजूरकी एक मूर्तिके लिये धना-धम रुपये गिन देंगे, जैसे कि हुजूरके पूर्ववर्त्ती वाइसरायकी मूर्ति के लिये गिने जारहे हैं। प्रजा उस शासकको बड़ाईके लिये लाख रोती है पर इसी देशके धनसे उसकी मूर्ति बनती है!

विनय होचुकी, अब भगवानसे प्रार्थना है कि श्रीमानका प्रताप बढ़े, यश बढ़े और जबतक यहां रहें आनन्दसे रहें। यहांकी प्रजा के लिये जैसा उचित समझें करें। यद्यपि इस देशके लोगोंकी प्रार्थना कुछ प्रार्थना नहीं है पर प्रार्थनाकी रीति है इससे की जाती है।

शिवशम्भु शर्मा।

(भारतमित्र १६ फरवरी सन् १९०७।)

शिवशम्भुका चिट्ठा।

मार्ली साहबके नाम।

"निश्चित विषय !"

विज्ञवरेषु, साधुवरेषु !

बहुत काल पश्चात् आपसा पुरुष भारतके भाग्य विधाता हुआ है। एक पण्डित, विचारवान और आडम्बरशून्य सज्जनको अपना अफसर होते देखकर अपने भाग्यको अचल प और कभी उससे मस न होनेवाला वरंच आपके कथनानुसार Settled fact समझनेपर भी आडम्बर शून्य भोलेभाले भारतवासी हर्षित हुए थे। वह इस लिये हर्षित नहीं हुए कि आप उनके भाग्यकी कुछ मरम्मत कर सकते हैं। ऐसी आशाको वह कभी जलांजलि दे चुके हैं। उनका हर्ष केवल इस लिये था कि एक सज्जनको, एक साधुको, यह पद मिलता है। भलेका पड़ोस भी भला, उसकी हवा भी भली। जो गन्धी कछु दे नहीं, तौहू बास सुबास !

आप उपाधिशून्य हैं। आपको माई लार्ड कहके सम्बोधन करनेकी जरूरत नहीं है। यद्यपि आप इस देशके माई लार्डके भी माई लार्ड हैं। यहांके निवासी सदासे ऋषि मुनियों और साधु महात्माओंको पूजते आये हैं और यहांके देशपति नरपति लोग सदा उन साधु महात्माओंके सामने सिर झुकाते और उनसे अनुमति लेते रहे हैं। इसी विचारसे यहांके लोग आपके नियोगसे प्रसन्न हुए थे। एक विचारशील पुरुषका सिद्धान्त है कि किसी देशका उत्तम शासन होनेके लिये दो बातोंमेंसे किसी एकका होना अति आवश्यक है—या तो शासक साधु बन जाय या साधु शासक नियत किया जाय। बर्किस बकील होजाय या बकील बर्किस बनाया जाय। क्योंकि आपको भारतका देशमन्त्री देख कर यहांके

प्रजाको हर्ष हुआ था कि भला ! बहुत दिन पीछे एक साधु पुरुष एक विद्वान सज्जन भारतका सर्व प्रधान शासक होता है !

भारतवासी समझते थे कि मिस्टर मार्ली विद्वान हैं। विद्या पढ़ने और दर्शन शास्त्रका मनन करनेमें समय बिता कर वह बूढ़े हुए हैं। वह तत्काल जान सकते हैं कि बुराई क्या है और भलाई क्या, नेकी क्या है और बदी क्या। उनको बुराई और भलाईके समझनेमें दूसरेकी सहायताकी आवश्यकता नहीं। वरञ्च वह स्वयं इतने योग्य हैं कि अपनीही बुद्धिसे ऐसी बातोंकी यथार्थ जांच कर सकते हैं। दूसरोंके चरित्रको झट जान सकते हैं। वह दोषीको धमकायेंगे और उसे सुमार्गमें चलानेका उपदेश देंगे। भारतवासियोंका विचार था कि आप बड़े न्यायप्रिय हैं। किसीसे ज़रा भी किसी विषयमें अन्याय करना पसन्द न करेंगे और खुशीको नेकीसे बढ़ कर न समझेंगे। उचित कामोंके करनेमें कभी कदम पीछे न हटावेंगे और कोई लालच कोई इनाम और कोई भारीसे भारी पद या राजनीतिक मार पेच आपको सत्य और सच्चाईसे न डिगा सकेगा। आपके मुंहसे जो शब्द निकलेंगे वह तुले हुए सत्य होंगे। यही कारण है कि भारतवासी आपके नियोगकी खबर सुन कर खुश हुए थे।

पार्लीमेन्टके चुनावके समय जिस प्रकार भारतवासी आपके चुनावकी ओर टकटकी लगाये हुए थे आपके भारत सचिव होजाने पर उसी प्रकार वह आपके मुंहकी वाणी सुननेको उत्सुक हुए। पर आपके मुंहसे जो कुछ सुना उसे सुनकर वह लोग जैसे हक्का बक्का हुए ऐसे कभी न हुए थे। आपने कहा कि बङ्ग भंग होना बहुत खराब काम है क्योंकि यह अधिकांश प्रजावर्गकी इच्छाके विरुद्ध हुआ। पर जो होगया उसे Settled fact, निश्चित विषय समझना चाहिये। एक विद्वान पुरुष दार्शनिक सज्जनकी यह उक्ति कि यह काम यद्यपि खराब हुआ तथापि अब यही अटल रहेगा इसकी खराबी अब दूर न होगी! किमाश्चर्य्य मतः परम्!

लड़कपनमें एक देहातीकी कहानी पढ़ी थी जिसका गधा खोया गया था और वह एक दूसरेकी गधीको अपना गधा बताकर पकड़ लेजाना चाहता था। पर जब उसे लोगोंने कहा कि अरे तू तो अपना गधा बताता है, देख यह गधी है; तो उसने बराबर कहा था कि मेरा गधा कुछ ऐसा गधा भी न था! गंवारका गधा गधी होसकता है, पर भारतसचिव दार्शनिकप्रवर मार्ली साहब जिस कामको बुरा बताते हैं वही 'निश्चित विषय' भी हो सकता है यह बात भारतवासियोंने कभी स्वप्नमें भी नहीं विचारी थी! जिस कामको आप खराब बताते हैं उसे वैसेका वैसा बना रखना चाहते हैं यह नये तरीकेका न्याय है! अब तक लोग यही समझते थे कि विचारवान विवेकी पुरुष जहां जायंगे वहीं विचार और विवेककी मर्यादाकी रक्षा करेंगे। वह यदि राजनीतिमें हाथ डालेंगे तो उसकी जटिलताको भी दूर कर देंगे। पर बात उल्टी देखनेमें आती है। राजनीति बड़े बड़े सत्यवादी साहसी विद्वानोंको भी गधा गधी एक बतानेवालोंके बराबर कर देती है!

विद्वर! आप समझते हैं और आप जैसे विद्वानोंको समझना चाहिये कि सत्य सत्य है और मिथ्या मिथ्या। मिथ्या और सत्य गड़प सड़प होकर एक होसकते हैं यह आप जैसे साधु पुरुषोंके कहनेकी बात नहीं है। विज्ञ पुरुषोंके कहनेकी बात नहीं है। विज्ञ पुरुषोंकी बातोंको आपसमें टकराना न चाहिये। पर गत बजटकी स्पीचमें आपने बातोंके भेड़े लड़ा डाले हैं। आपने कहा है—"जहांतक मेरी कल्पना जासकती है भारत शासन यथेच्छ ढंग का रहेगा।" पर यह भी कहा है—"भारतमें किसी प्रकारकी बुरी चाल चलना हमें उससे भी अधिक खराबीमें डालेगा जितना दक्षिण अफरीकामें चार साल पहले एक बुरी चाल चलकर खराबी में पड़ चुके हैं।

आपने कहा है—"हिन्दुस्थानी कांग्रेसकी कामनाओंको सुनकर मैं घबराता नहीं।" पर यह भी कहा—"जो बातें विलायतकी

प्राप्त है वह भारतको राय नहीं प्राप्त होसकती।" आपकी इन दोरङ्गी बातोंमें भारतवासी बड़े घबराहटमें पड़े हैं। घबराकर उन्हें आपके देशकी दो कहावतोंका आश्रय लेना पड़ता है कि— राजनीतिज्ञ पुरुष युक्ति या न्यायके पाबन्द नहीं होते; अथवा राजनीतिका कुछ ठिकाना नहीं!

आपको अपनेही एक वाक्यकी ओर ध्यान देना चाहिये— "अपनी साधारण योग्यताके परिणामसेही कोई आदमी प्रसिद्ध या बड़ा नहीं होसकता। वरञ्च उचित समय पर उचित काम करनेहीसे उसे बड़ा बनाता है।" जिस पद पर आप हैं उसकी जो कुछ इज्जत है वह आपकी नहीं उस पदकी है। लार्ड जार्ज हमिल्टन और मिस्टर ब्राडरिक भी इसी पद पर थे। पर इस पद से उनकी इतनीही इज्जत थी कि वह इस पद पर थे। बाकी उनके कामोंके अनुसारही उनकी इज्जत है। आपका गौरव इस पदसे नहीं बढ़ना चाहिये वरञ्च आपके कामोंसे इस पदकी कुछ मर्यादा बढ़नी चाहिये।

भारतवासियोंने बहुत कुछ देखा और देख रहे हैं। इस देशके ऋषि मुनि जब वनोंमें जाकर तप करते थे और यहांके नरेश उन की आज्ञासे प्रजापालन करते थे वह समय भी देखा। फिर मुसल-मान इस देशके राजा हुए और पुराना क्रम मिट गया वह भी देखा। अब देख रहे हैं सात समुद्र पारसे आई हुई एक जाति के लोग जो पहले बिसातीके रूपमें इस देशमें आये थे और कुछ दल और कौशलसे यहांके प्रभु बन गये। यह देश और यहांकी स्वा-धीनता उनके मुट्ठीकी चिड़िया बन गई। और भी न जाने क्या क्या देखना पड़ेगा। पर संसारकी कोई बात निश्चित है यह बात यहां के लोगोंकी समझमें नहीं आती। निश्चितही होती तो लार्ड जार्ज हमिल्टन और ब्राडरिककी गद्दी साधुवर मार्लों तक कैसे पहुंचती!

न बंगभंगही निश्चित विषय है और न भारतका यथेच्छशासन। स्थिरता न प्रभातकी है और न संध्याकी। सदा न बसन्त रहता है

न मीठ। हां एक बात अब भारतवासियोंके जीमें भली भांति पक्की होती जाती है कि उनका भला न कन्सरवेटिवही कर सकते हैं और न लिबरलही। यदि उनका कुछ भला होना है तो उन्हींके हाथसे। इससे यदि मिष्टर मार्ली "निश्चित विषय" मा तो विशेष हानि नहीं!

अतः भारतवासियोंका भला या बुरा जो होना है, सो हो इसकी उन्हें कुछ परवा नहीं है। उन्हें ईश्वर पर विश्वास है औ काल अनन्त है, कभी न कभी भलेका भी समय आजायगा। भारत वासियोंको चिन्ता केवल यही है कि उनके देशसचिव साधुप्र मार्ले साहबको अपनी चिरकालसे एकत्र की हुई कीर्ति और उसमें अपने वर्तमान पद पर कुरबान न करना पड़े। इस देशका एक बहुतही साधारण कवि कहता है—

झूठा है वह हकीम जो लालचसे मालके,
अच्छा कहे मरीजके हाले तबाहको।

अपने लालचके लिये यदि रोगीकी बुरी दशाको अच्छा बतावे तो वह हकीम हकीम नहीं कहला सकता। भारतवासी आपको दार्शनिक और हकीम समझते हैं। उनको कभी यह विश्वास नहीं कि आप अपने पदके लोभसे न्यायनीतिकी मर्यादा भंग कर सकते हैं या अपने दलकी बुराई भलाई और कमजोरी मजबूतीके खयालसे भारतके शासन रूपी रोगीकी बिगड़ी दशाको अच्छी बता सकते हैं। आपहीके देशका एक साधु पुरुष कह गया है— "आयर्लैण्डकी स्वाधीनता मेरे जीवनका व्रत है पर इस स्वाधीनता लानेके लोभसे भी मैं दक्षिण अफरीकावालोंकी स्वाधीनता छिनजाने का समर्थन कभी न करूंगा!" अतः आपसे बार बार यही विनय है कि अपने साधुपदकी मर्यादाका खूब विचार रखिये। भारत वासियोंको अपनी दशाकी परवा नहीं है। पर आपकी इज्जतका उन्हें बड़ा ध्यान है। कहीं आप राजनीतिक पदके लोभसे अपने साधुपदको उस टेकालोंका गधा न बना बैठें।

अपने किस्सा तो यहां कुछ गम नहीं,
गम न यह आदि मेरो तकसीरहीं। शिवशम्भु शर्मा।

(भारतमित्र ३० मार्च सन् १९०७।)

शिवशम्भुका चिट्ठा।

आशीर्वाद।

तीसरे पहरका समय था। दिन जल्दी जल्दी ढल रहा था। और सामनेसे संध्या फुर्तीके साथ पांव बढ़ाये चली आती थी। शर्मा महाराज बूटीकी धुनमें लगे हुए थे। सिल बट्टेसे भङ्ग रगड़ी जा रही थी। मिर्च मसाला साफ हो रहा था। बादाम इलायचीके छिलके उतारे जाते थे। नागपुरी नारङ्गियां छील छील कर रस निकाला जाता था। इतनेमें देखा कि बादल उमड़ रहे हैं। चीलें नीचे उतर रही हैं; तबीयत भुरभुरा उठी। इधर भङ्ग उधर घटा, बहारमें बहार। इतनेमें वायुका वेग बढ़ा, चीलें अदृश्य हुईं। अंधेरा छाया। बूंदें गिरने लगीं। साथही तड़ तड़ धड़ धड़ होने लगी, देखा ओले गिर रहे हैं। ओले थमे, कुछ वर्षा हुई। बूटी तयार हुई। बम भोला कहके शर्माजीने एक लोटा भर चढ़ाई। ठीक उसी समय लालडिग्गी पर बड़े लाट मिन्टोने बङ्गदेशके भूतपूर्व छोटे लाट उडबर्नकी मूर्ति खोली। ठीक एकही समय कलकत्तेमें यह दो आवश्यक काम हुए। भेद इतनाही था कि शिवशम्भु शर्माके बरामदेकी छत पर बूंदें गिरती थीं और लार्ड मिन्टोके सिर या छाते पर।

भङ्ग छानकर महाराजजीने खटिया पर लम्बी तानी कुछ काल खुमारीके आनन्दमें निमग्न रहे। अचानक धड़धड़ तड़तड़के शब्दने कानोंमें प्रवेश किया। आंखें मलते उठे। वायुके झोंकोंसे किवाड़ पुर्जे पुर्जे हुआ चाहते थे बरामदेके टीनोंपर तड़ातड़के साथ ठनाका भी होता था। एक दरवाजेके किवाड़ खोल कर बाहरकी ओर

झोंका तो हवाके झोंकेने दस बीस बून्दों और दो चार ओलोंसे शर्म्माजीके श्रीमुखका अभिषेक किया। कमरेके भीतर भी ओलोंकी एक बौछाड़ पहुंची। फुर्तीसे किवाड़ बन्द किये तथापि एक शीशा चूर हुआ। समझमें आगया कि ओलोंकी बौछाड़ चल रही है। इतनेमें ठन ठन करके दस बजे। शर्म्माजी फिर चारपाई पर लम्बायमान हुए। कान टीन और ओलोंके सम्मिलनकी ठनाठनका मधुर शब्द सुनने लगे। आंखें बन्द हाथ पांव सुखमें। पर विचारके घोड़ेको विश्राम न था। वह ओलोंकी चोटसे बाजुओंको बचाता हुआ परिन्दोंकी तरह इधर उधर उड़ रहा था। गुलाबी नशेमें विचारोंका तार बन्धा कि बड़े लाट फुर्तीसे अपनी कोठीमें घुस गये होंगे और दूसरे अमीर भी अपने अपने घरोंमें चले गये होंगे पर वह चीलें कहां जाई होंगी? ओलोंसे उनके बाजू कैसे बचे होंगे? जो पक्षी इस समय अपने अण्डे बच्चों समेत पेड़ोंपर पत्तोंकी आड़में हैं या घोसलोंमें छिपे हुए हैं उन पर क्या गुजरी होगी! जरूर झड़े हुए फलोंके ढेरमें कल सवेरे इन बदनसीबोंके टूटे अण्डे और बच्चे और इनके भीगे सिसकते शरीर पड़े मिलेंगे। हा, शिवशम्भु! तू इन पक्षियोंकी चिन्ता है, पर यह नहीं जानता कि इस अभ्रस्पर्शी अट्टालिकाओंसे परपूरित महानगरमें सहस्रों अभागे रात बितानेको झोंपड़ी भी नहीं रखते। इस समय सैकड़ों अट्टालिकाएं शून्य पड़ी हैं। उनमें सहस्रों मनुष्य सो सकते पर उनके ताले लगे हैं और सहस्रोंमें केवल दो दो चार चार आदमी रहते हैं। अहो! तिस पर भी इस देशकी मट्टीसे बने हुए सहस्रों अभागे सड़कोंके किनारे इधर उधरकी सड़ी और गीली भूमियोंमें पड़े भीगते हैं! मैले चिथड़े लपेटे वायु वर्षा और ओलोंका सामना करते हैं! सवेरे इनमेंसे कितनोंहीकी लाशें जहां तहां पड़ी मिलेंगी। तू इस चारपाई पर मौजें उड़ा रहा है!

आनकी आनमें विचार बदला, नशा उड़ा, हृदय पर दुर्बलता आई। भारत! तेरी वर्त्तमान दशामें हर्षको अधिक देर स्थिरता

कहां ! कभी कोई हर्षसूचक बात दस बीस पलकके लिये चित्तको प्रसन्न कर जाय तो यही बहुत समझना चाहिये। प्यारी भङ्ग! तेरी कृपासे कभी कभी कुछ कालके लिये चिन्ता दूर हो जाती है। इसीसे तेरा सहयोग अच्छा समझा है। नहीं तो यह अधबूढ़ा भङ्गड़ क्या सुखका भूखा है! घावोंसे चूर जैसे नींदमें पड़कर अपने कष्ट भूल जाता है अथवा स्वप्नमें अपनेको स्वस्थ देखता है तुझे पीकर शिवशम्भु भी उसी प्रकार कभी कभी अपने कष्टोंको भूल जाता है!

चिन्ता स्रोत दूसरी ओर फिरा। विचार आया कि काल अनन्त है। जो बात इस समय है वह सदा न रहेगी इससे एक समय अच्छा भी आ सकता है। जो बात आज आठ आठ आंसू रुलाती है वही किसी दिन बड़ा आनन्द उत्पन्न कर सकती है। एक दिन ऐसीही काली रात थी। इससे भी घोर अंधेरी—भादों कृष्णा अष्टमीकी अर्द्धरात्रि। चारोंओर घोर अन्धकार—वर्षा होती थी बिजली कौंदती थी घन गरजते थे। यमुना उत्ताल तरङ्गोंसे बह रही थी। ऐसे समयमें एक दृढ़ पुरुष एक सद्यजात शिशुको गोदमें लिये मथुराके कारागारसे निकल रहा था। शिशुकी माता शिशुके उत्पन्न होनेके हर्षको भूल कर दुःखसे विह्वल होकर चुपके चुपके आंसू गिराती थी पुकार कर रो भी नहीं सकती थी। बालक उसने उस पुरुषको अर्पण किया और कलेजे पर हाथ रख कर बैठ गई। सुख आनेके समयसे उसने कारागारमेंही आयु बिताई है। उसके कितनेही बालक वहीं उत्पन्न हुए और वहीं उसकी आंखोंके सामने मारे गये। यह अन्तिम बालक है। कड़ा कारागार, विकट पहरा, पर इस बालकको वह किसी प्रकार बचाना चाहती है। इसीसे उस बालकको उसके पिताकी गोदमें दिया है कि वह उसे किसी निरापद स्थानमें पहुंचा आवे।

वह और कोई नहीं थे, यदुवंशी महाराज वसुदेव थे और नवजात शिशु कृष्ण। उसीको उस कठिन दशामें उस भयानक काली

रातमें वह गोकुल पहुंचाये जाते हैं। कैसा कठिन समय था
दृढ़ता सब विपदोंको जीत लेती है सब कठिनाइयोंको सुगम
देती है। बसुदेव सब कष्टोंको सह कर यमुना पार करके
हुए उस बालकको गोकुल पहुंचा कर उसी रात कारागारमें
आये। वही बालक आगे कृष्ण हुआ, व्रजका प्यारा हुआ,
बापकी आंखोंका तारा हुआ, यदुकुल मुकुट हुआ। उस समय
राजनीतिका अधिष्ठाता हुआ। जिधर वह हुआ उधर विजय
जिसके विरुद्ध हुआ उसकी पराजय हुई। वही हिन्दुओंका सर्वप्र
अवतार हुआ और प्रियप्रभु धर्मोका इष्टदेव, स्वामी और सर्व
वह कारागार भारत सन्तानके लिये तीर्थ हुआ। वहांकी
मस्तक पर चढ़ानेके योग्य हुई—

बर जमीने कि निशाने कफे पाये तो बुवद।
सालहा सिजदये साहिब नजरां ख्वाहद बूद। *

तब तो जेल बुरी जगह नहीं है। "पञ्जाबी" के स्वामी और
सम्पादककी जेलके लिये दुःख न करना चाहिये। जेलमें कृष्ण
जन्म लिया है। इस देशके सब कष्टोंसे मुक्त करनेवालेने अप
पवित्र शरीरको पहले जेलकी मट्टीसे स्पर्श कराया। उसी प्रका
"पञ्जाबी" के स्वामी लाला यशवन्तरायने जेलमें जाकर जेलकी
प्रतिष्ठा बढ़ाई भारतवासियोंका सिर ऊंचा किया, अग्रवाल जातिका
सिर ऊंचा किया। उतनाही ऊंचा जितना कभी स्वाधीनता और
स्वराज्यके समय अग्रवाल जातिका अयोध्यामें था। उधर एडीटर
मि॰ अथावलेने स्वानीय ब्राह्मणोंका मस्तक ऊंचा किया जो उनके
गुरु तिलकको अपने मस्तकका तिलक समझते हैं। सुरेन्द्रनाथने
बङ्गालकी जेलका और तिलकने बम्बईकी जेलका मान बढ़ाया था।
यशवन्तराय और अथावलेने लाहोरकी जेलको वही पद प्रदान

---

* जिस भूमि पर तेरा पद चिन्ह है दृष्टिवाले सैकड़ों वर्ष तक
पर अपना मस्तक टेकेंगे।

किया। लाहोरी जेलकी भूमि पवित्र हुई। उसकी धूल देशके शुभचिन्तकोंकी आंखोंका अञ्जन हुई। जिन्हें इस देश पर प्रेम है वह इन दो युवकोंकी स्वाधीनता और साधुता पर अभिमान कर सकते हैं।

जो जेल चोर डकैतों दुष्ट हत्यारोंके लिये है जब उसमें सज्जन साधु शिक्षित स्वदेश और स्वजातिके शुभचिन्तकोंके चरण स्पर्श हों तो समझना चाहिये कि उस स्थानके दिन फिरे। ईश्वरकी उस पर दया दृष्टि हुई। साधुओं पर सङ्कट पड़नेसे शुभ दिन आते हैं। इससे सब भारतवासी शोक सन्ताप भूलकर प्रार्थनाके लिये हाथ उठावें कि शीघ्र वह दिन आवे कि जब एक भी भारतवासी चोरी डकैती दुष्टता व्यभिचार हत्या लूट खसोट जाल आदि दोषोंके लिये जेलमें न जाय। जाय तो देश और जातिकी प्रीति और शुभचिन्ताके लिये। दीनों और पददलित निर्बलोंको सबलोंके अत्याचारसे बचानेके लिये, हाकिमोंको उनकी भूलों और हार्दिक दुर्बलतासे सावधान करनेके लिये और सरकारको सुमन्त्रणा देनेके लिये। यदि हमारे राजा और शासक हमारे सत्य और स्पष्ट भाषण और हृदयकी स्वच्छताको भी दोष समझें और हमें उसके लिये जेल भेजें तो वैसी जेल हमें ईश्वरकी कृपा समझ कर स्वीकार करना चाहिये और जिन हथकड़ियोंसे हमारे निर्दोष देशबान्धवोंके हाथ बंधे उन्हें हेममय आभूषण समझना चाहिये। इसी प्रकार यदि हमारे ईश्वरमें इतनी शक्ति न हो कि वह हमारे राजा और शासकोंको हमारे अनुकूल कर सके और उन्हें उदारचित्त और न्यायप्रिय बना सके तो इतना अवश्य करे कि हमें सब प्रकारके दोषोंसे बचाकर न्यायके लिये जेल काटनेकी शक्ति दे जिससे हम समझें कि भारत हमारा है और हम भारतके। इस देशके सिवा हमारा कहीं ठिकाना नहीं। रहें इसी देशमें चाहे जेलमें चाहे घरमें। जब तक जियें जियें और जब प्राण निकल जाय तो यहींकी पवित्र महीमें मिल जावें।

शिवशम्भु शर्म्मा।

(भारतमित्र, २५ नवम्बर सन्

शाइस्ताखांका ख

फुलर साहबके नाम।

भाई फुलरजङ्ग ! दो सौ सवा दो सौ साल
एक बार नवाबी जमानेको ताजा किया है इस
शुक्रिया किस जुबानसे अदा करूं। मैंने तो स
लोगोंको बदनाम नवाबी हुकूमतको दुनियामें
न होगी। उस पर अमलदरामद तो क्या उसका
कोई लेगा तो गाली देनेके लिये। मेराही नहीं मे
नवाब हुए उन सबका यही खयाल है। मगर अब
जमानेका इनकलाब एक वार फिरसे इम लोगोंके
ताजा करना चाहता है।

अपनी हुकूमतके जमानेमें मैंने कितनेही काम अप
किये और कितनेही लाचारीसे। उनमेंसे कितनोंहीके
निहायत शरमिन्दा हूं अपने ऊपर मुझे आप नफरत
मैंने देखा कि उन कामोंका नतीजा बहुत खराब हुआ। हुकू
नशेमें उस वक्त बुरा भला कुछ न सोचा। मगर अन्जाम जो
था वह सारे जमानेने देख लिया यानी हमारी कौमको
हुकूमतसे छुट्टी मिल गई और जिस बादशाहका मैं मा
कर बंगालेका नाजिम हुआ था उसने मरनेसे पहले अपनी
सलतका जवाल अपनी आंखोंसे देखा। बंगालमें मेरे बाद फिर
को नाजिम नहीं होना पड़ा।

मैंने खूब गौर करके देखा बंगालेमें या हिन्दुस्तानमें
जमाना फिर होमेकी कुछ जरूरत नहीं है। इन दोनों
कितनीही बातें मैंने जानली हैं, जमानेके

पलट देखे और समझे उसकी चाल पर खूब निगाह जमा कर देखा मगर कहीं नवाबोंको खड़ा होनेकी गुञ्जाइश न पाई। लेकिन देखा जाताहै कि तुम्हारे जीमें नवाबोंकी खाहिश है। तुम बङ्गालके हिन्दुओंको धमकाते हो कि उनके लिये फिर शाइस्ताखांका जमाना ला दिया जायगा! भई वल्लाह! मैंने जबसे यह खबर अपने दोस्त नवाब अबदुल्लतीफखांसे सुनी है तबसे हंसते हंसते मेरे पेटमें बल पड़ पड़ जाते हैं। अकेला मैंही नहीं हंसा बल्कि जितने मुझसे पहले और पीछेके नवाब यहां बहिश्तमें मौजूद हैं सब एक एकबार हंसे। यहांतक कि हमारे सिवा सूरत बादशाह औरङ्गजेब भी जो उस दुनियामें कभी न हंसे थे इस वक्त अपनी हंसीको रोक न सके। हंसी इस बातकी थी कि बेसमझेही तुमने मेरे जमानेका नाम लिया है। मालूम होता है कि तुम्हें इल्म तवारीखसे बहुत कम मस है। अगर तुम्हें मालूम होता कि मेरा जमाना बङ्गालियोंकी बनिसबत तुम फरङ्गियोंके लिये ज्यादा मुसीबतका था, तो शायद उसका नाम भी न लेते। तुमको मालूम होना चाहिये कि यहां बहिश्तमें भी अङ्गरेजी अखबार पढ़े जाते हैं। मेरे जमानेमें तो तुम लोगोंकी गिटपिट बोलीको खयालहीमें कौन लाता था, पर मैंने मालूम किया है कि मेरे बाद भी उसकी कुछ कदर न थी। यहां तक कि गदरके जमानेमें दिल्लीके मुसलमान तुम्हारी बोलीको गुड़ डामियर बोली कहा करते थे। मगर इस वक्त यहां भी तुम्हारी बोलीकी जरूरत पड़ती है क्योंकि अब यह कुल हिन्दुस्तानी हाई हुई है और हिन्दुस्तानकी खबरोंको जाननेका यहांवालोंको भी शौक रहता है। इसीसे अङ्गरेजी अखबारोंकी जरूरी खबरें यहां वाले भी नवाब अबदुल्लतीफखां वगैरहसे सुन लिया करते हैं।

भाई नवाब फुलर! मैं सच कहता हूं कि मेरा जमाना तुमसा तुम कभी पसन्द न करोगे। मुझे मालूम है कि किसी अङ्गरेजने तुम्हारे ऐसा कहने पर तुम्हें गंवार नहीं कहा। उस वक्त तुम लोग क्या थे जरा गुन डालो! तुम कई तरहके फरङ्गी इस मुल्कमें अपने

अपने जहाजोंमें बैठ कर आने लगे थे। बङ्गालमें बन
फरासीसी और तुम लोगोंने कई मुकामोंमें, अपनी कोठि
यों और तिजारतके बहाने कितनीही तरहकी शरारतें
किया करते थे। वह अक्सर चोरियां करते थे डाके डालते
जलाते थे। जब हम लोगोंको यह मालूम हुआ कि तुम्हारी
साफ नहीं है तिजारतके बहानेसे तुम इस मुल्क पर दखल
की फिक्रमें हो, तब तुम लोगोंको यहांसे मारके भगाना पड़ा
सिर्फ बङ्गालहीसे नहीं सारे हिन्दुस्तानसे निकालनेका भी
बादशाहने बन्दोबस्त किया था। उससे यह सुलूक तुम्हारे
नहीं किया गया बल्कि तुम्हारी शरारतोंके सबबसे। इसके
५० साल तक तुम अपने पांवसे खड़े न होसके।
यह कायदा है कि दूसरी कौमकी हुकूमतहीको लो
भी बड़ बार जुल्म समझते हैं। इससे हिन्दू हमारी हु
उस जमानेमें बुरा समझते हों तो एक मामूली बात है।
मैं तुम्हारे जाननेको कहता हूं, कि हम मुसलमानोंने बहुत
हिन्दुओंके साथ इंसानियतका बर्ताव भी किया है। बहुतसी
नामियोंके साथ मेरी हुकूमतके वक्तकी एक नेकनामी बङ्गाल
तवारीखमें ऐसी मौजूद है जिसकी नजीर तुम्हारी तवारीखमें का
भी न मिलेगी। मैंने बङ्गालेके दारुस्सलतनत ढाकेमें एक रुपयेका
मन चावल बिकवाये थे। क्या तुममें वह जमाना फिर लादेनेकी
फत है? मैं समझता हूं कि अङ्गरेजी हुकूमतमें यह बात नामुम
न है। अङ्गरेजोंमें ऐसा न हुआ न है और न हो सकता है।
तुम्हारी हुकूमत जाती है वहां खाने पीनेकी चीजोंको ए
लग जाती है। क्योंकि तुम तो हम लोगोंकी तरह
नहीं नहीं हो, साथ साथ कङ्गाल भी हो। उस अपने कङ्ग
हिमायतके लियेही हमारे जमानेको बङ्गालमें लेव
चाहते हो। जो बादशाह भी है और कङ्गाल भी है उसको
खाने पीनेकी चीजें सस्ती कैसे हों?

मेरी हुकूमतका एक सबसे बड़ा इलजाम मैं खुद बताता हूं। अपने बादशाहके हुकमसे मैंने बङ्गालके हिन्दुओं पर जिजिया लगाया था। पर वह तुम फरङ्गियों पर भी लगाया था। तुम लोग चालाक थे कुछ घोड़े और तोहफा नजरायन देकर बच गये। हिन्दुओंसे साथ झगड़ा हुआ। उनके दो चार मन्दिर टूटे और एक इज्जतदार रईस कैद हुआ। इसीके लिये मैं शरमिन्दा हूं और इसका बदला भी हाथों हाथ पाया और इसीका खौफ तुम अपने इलाकेके हिन्दुओंको दिलाते हो। वरना यह हिम्मत तो तुममें कहां कि मेरे जमानेकी तरह हिन्दुओंको हरवा हथियार बान्धने दो और आठ मनका गल्ला खाने दो।

तुम लोगोंने जो महसूल इस मुल्क पर लगाये हैं वह क्या कभी इस मुल्कको खाने पीनेकी चीजोंको सस्ता होने देंगे? तुम्हारा नमकका महसूल जिजियेसे किस बातमें कम है? भाई फुलरजङ्ग! कितनेही इलजाम चाहे मुझ पर हों, एक बार मैंने इस मुल्ककी रैयतको जरूर खुश किया था। मगर तुमने हुकूमतकी बाग हाथमें लेतेही गुरखोंको अपने बहदे पर मुकर्रर किया है। क्योंकि मुंहसे "वन्देमातरम्" सुनकर तुम जामेसे बाहर होते हो इतने पर भी तुम मेरी या किसी दूसरे नवाबकी हुकूमतसे अपनी हुकूमतको अच्छा समझते हो! तुम्हें आफरीं है!

तुमने बिगड़ कर कहा है कि तुम बङ्गालियोंको पांचसौ साल पीछे फेंक दोगे। अगर ऐसा हो तो भी बङ्गाली बुरे न रहेंगे। उस वक्त बंगालमें एक ऐसे राजाका राज था जिसने हिन्दुओंके लिये मन्दिर और मुसलमानोंके लिये मसजिदें बनवाई थीं और उस राजाके मर जाने पर हिन्दू उसकी लाशको जलाना और मुसलमान गाड़ना चाहते थे। वह जमाना तुम्हारे जैसा हाकिम क्यों आने देगा! तुम तो हिन्दू मुसलमानोंको लड़ा कर हुकूमत करनेकी बहादुरी समझते हो और इस वक्त मुसलमानोंके साथ बड़ी मुहब्बत जाहिर कर रहे हो। मगर तुम

लोगोंकी मुहब्बत कलकत्तेमें उस लाठके बनानेसेही समझ
मुसलमान समझ गये जो तुम्हारा एक अक्षता अफसर सि
मुहोलाका मुंह काला करनेके लिये एक कायसो बकूएको याद
गारीके तौर पर बना गया है। मुसलमानोंसे तुम्हारो बैसी
न है उसे वह लाठ पुकार पुकार कर कह रही है।
अखीरमें मैं तुमको एक दोस्ताना सलाह देता हूं कि इस
र कभी पुराने जमानेको फिर लानेकी कोशिश न करना। तु
लोंको मैं सदा कमीने झगड़ालू लोग और बेईमान खयाल करा
। मेरे बाद भी तुम्हारे कामोंसे इस मुल्कके लोगोंको कभी
त नहीं हुई। यहां तक कि खुदाने तुम्हें इस मुल्कका
र कर दिया तो भी लोगोंका एतबार तुम पर न हुआ।
एक तुम्हारी जन्नतमकानी मलिका विक्टोरियाका जमानाही ऐसा
हुआ जिसमें इस मुल्कके लोगोंने तुम लोगोंकी हुकूमतकी
की। क्योंकि उस मलिका मुअज्जमाने अदलसे इस मुल्कके सं
का दिल अपने हाथमें लिया। मैं नहीं चाहता कि तुम उस शाहि
की हुई इज्जतको खोओ। रैयतके दिलमें इनसाफका सिक्का बैठत
है जुल्मका नहीं। जुल्मके लिये हम लोग बदनाम होचुके तुम क्यों
बदनाम होते हो? जुल्मका नतीजा हम भोग चुके हैं पर तुम्हें
उससे खबरदार करते हैं। अपने कामोंसे साबित कर दो कि तुम
इनसान हो खुदातर्स हो यहांकी रैयतको पालने आये लोगोंको
गिरी हालतसे उठाने आये हो। लोग यह न समझें कि मतलबी
नाखुदा तर्स हो अपने मतलबके लिये इस मुल्कके लड़कोंको बन्द
मादरम कहनेसे भी बन्द करते हो।
खयाल रखो कि दुनिया चन्दरोजा है आखिर सबको
दुनियासे काम है जिसमें हम हैं। सदा कोई रहा न रहे
नेकनामी या बदनामी रह जावेगी। तुम जुल्मसे बंगालियों
मत रुलाओ बल्कि ऐसा करो जिससे तुम्हारे लिये तुम्हारे अल
होनेके वक्त बंगाली खुद रोवें। फकत्।

शाइस्ताखां—अलजन्नत।

(भारतमित्र १८ अगस्त सन् १८०६ ।)

शाइस्ताखांका खत ।

फुलर साहबके नाम ।

बरादरम् फुलरजङ्ग ! तुम्हारी जङ्ग खतम होगई । यह लड़ाई तुम साफ हारे । तुमने अपनी शमशीर भी म्यानमें करली । इससे अब तुम्हारे अलकाबमें "जङ्ग" जोड़नेकी जरूरत नहीं है । पर जिस तरह तुम्हारी नवाबी छिन जाने पर भी हिन्दुस्तानी सरकार तुम्हें बम्बईमें विलायती जहाज पर तुम्हारे मामूली नवाबी ठाटसे चढ़ा देना चाहती है उसी तरह मैंने भी मुनासिब समझा कि उस वक्त तक तुम्हारा अलकाब भी बदस्तूर रहे । इसमें हर्ज ही क्या है !

सचमुच तुम्हारी हुकूमतका अञ्जाम बड़ा दर्दनाक हुआ जिसे तुमने खुद दर्दनाक बताया है । मुझे उसके लिये ताज्जुब नहीं क्योंकि वह अटल था । पर अफसोस है कि इतना जल्द हुआ ! मैं जानता था कि ऐसा होगा, उसका इशारा मेरे पहले खतमें मौजूद है । पर यह खयाल न करता था कि दस ही महीनेमें तुम्हारी नकली नवाबी तय होजायगी। बल्कि भानमतीके तमाशेको भी मात किया । अभी गुठली थी जरासा पानी छिड़क कर दो हटांक मट्टीमें दबा देनेसे फूट निकली । दो पत्ते निकल आये । चार हुए । बहुत हुए । पेड़ हुआ, फल लगे । थोड़ी देरमें वही गुठली और वही टीनका लोटा मिया मदारीके हाथमें रह गया ।

तुमने यह समझकर कि नवाबोंके कई कई बेगमें होती थीं अपनी रिआयामेंसे दो बेगमें फर्ज कीं । मगर उनमें जो होशियार थी उसने तुम्हें मुंह न लगाया और न तुम्हारी नवाबी तसलीम की । जो भोली थी उसे तुमने रिझाया । पर वह बेचारी अभी यह समझने न पाई थी कि तुम उसके हुस्नोशोहरत पर नहीं रीझे बल्कि होशि-

यार बेगमकी बेएतनाईसे कुढ़ कर मतलबकी मुहब्बत दिखा। जिसकी बुनियाद निहायत कमजोर थी। अफसोस तुम्हारी शान भी न चली। सिर्फ दो बेगमोंको भी तुम न रिझा सच है, कहीं बुलहवसी भी मुहब्बत हो सकती है !

और तुमने सुना होगा कि नवाब सख्ती बहुत किया कर उनके अमलमें सब तरहकी अन्धाधुन्ध चल सकती थी। तुमने भी सख्ती और अन्धाधुन्ध शुरू की। अपनी अक्ल तुमने उस जोशको रोकना चाहा जो अपने मुल्कको बनी चीं फैलाने और गैरमुल्ककी चीजोंके रोकनेके लिये बङ्गालेमें बड़े फैल रहा था। तुमने इस बात पर ख्याल न किया कि जो तुम्हारे अफसरेआलाकी सख्तीसे पैदा हुआ है वह सख्ती जबरदस्तीसे कैसे दब सकता है। शायद तुमने समझा कि पूरी सख्तीसे दबाया नहीं गया इसीसे फैला है तुम्हारी सख्ती दबा देगी और जो काम तुम्हारे खुदावन्दसे न हुआ उसके डालनेकी बहादुरी तुम हासिल कर लोगे। मगर अब तुम्हें अ तरह मालूम होगया होगा कि ऐसा समझनेमें तुमने कितनी गलती पाई। तुम्हारे आला अफसरने यह ओहदा तुम्हारी तरीके लिये तुम्हें नहीं दिया था बल्कि अपनी जिद पूरी कराने अपना उल्लू सीधा करानेके लिये। मगर उसकी वह आरजू पूरी न हुई उलटी तुम्हें तकलीफ और खिफ्फत उठानी पड़ी। तु सब आगे तुम्हारे ओहदे पर बैठनेके लिये तुमसे बढ़ कर लायक और वफादार लोग कई मौजूद थे। मगर वह सब होगये जो अपनी अक्लसे काम लेते और इस बात पर खूब गौर करते कि अगर कि अब हमारे आला अफसरसे गलती हुई है तो हम उसमें कैसे शामिल होंगे। तुम्हें भी अगर इतना सोचनेकी मौका मिलती तो तुम वाके इस ओहदेको कबूल न करते या इस हर्ज करते जिस पर तुम अफसर मुकर्रर हुए।

देखो भाई ! जो गुजर गया है उसे कोई लौटा नहीं सकता।

बहकर दूर निकल गया हुआ नदीका पानी क्या कभी फिर लौटा है ? पांचसौ बरसका या मेरा दो सवा दो सौ सालका जमाना फिर लौटा लेना तो बहुत बड़ी बात है तुम अपनी नवाबीके बीते हुए दस महीनोंको भी लौटानेकी ताकत नहीं रखते। क्या तुम सन् १८०६ ईस्वीको पीछे हटा कर १४०६ या १७०६ बना सकते हो ? नहीं ; भाई इतने वर्ष तो कहां तुममें २० अगस्तको १८ बनानेकी भी ताकत नहीं है। जरा पांचसौ साल पहलेकी अपने मुल्ककी तारीख पर निगाह डालो। उस वक्त तुम्हारी कौम क्या थी ? अगर तुम किसी तरह उस जमाने तक पहुंच जाओ तो अपनी शकल पहचान न सको। दुनिया तारीक दिखाई देने लगे और तुम खौफसे आंखें बन्द करलो। दुनियामें तुम्हें अपना कोई-मातहत मुल्क नजर न आवे बल्कि अपनेही मुल्कमें तुम्हें अपनेको बेगाना समझना पड़े।

हिन्दमें मेरा जमाना लानेके लिये तुम्हें रेल तार तोड़ने दुखानी जहाज गारत करने डाक उठवा देने गैस बिजली वगैरहको नेस्तनाबूद कर देनेकी जरूरत है। नहरें पटवा देने और सड़कें उठवा देनेकी जरूरत है। आपही तालीमको नेस्तोनाबूद कर देनेकी जरूरत है। तुम सबको छोड़ कर एक तालीमको मिटानेकी तरफ झुके थे। यह हिदायत तुम्हें तुम्हारे मालिक मुर्शिद लाट कर्जनकी तरफसे हुई थी। पर अञ्जाम औरही हुआ। तालीम गारत न हुई बल्कि और तरक्की पागई। बङ्गाली अपना कौमी दारुलउलूम बनाते हैं। गारत हुई पहले तुम्हारी नेकनामी और पीछे नौकरी।

रिआया और मदरसेके तुलबासे लड़ने लड़ते तुमने नवाबी खत्म की। लोगोंको आम जलसे करने और कौमी नारे मारनेसे रोका। लड़कोंको अपने मुल्की मालकी तरफ मुतवज्जह देख कर तुमने उनको जेलमें भिजवाया स्कूलोंसे निकलवाया और पिटवाया। तुम्हारे इलाके बरीसालमें तुम्हारे मातहतोंने इस मुल्कको रिआयाके सबसे आला इज्जतदार और तालीम याफ्ता अशखासको बेइज्जत करनेकी गिजाटन ... हर-

कत की। तुमने अपने मातहतोंका इसमें साथ दिया। और यह हुआ कि हाईकोर्टसे तुम्हारे कामोंकी मलामत हुई। तुमने बड़ी शेखीसे कहा था कि हाईकोर्ट मेरा कुछ नहीं कर सकता, पार्लीमेन्ट मेरे हुक्मको रोक नहीं सकती। मगर दोनों बातें साबित हुईं। हाईकोर्टसे तो तुमने मलामत सुनीही पार्ली भी वह सुनी कि सारी नवाबी भूल गये। तुम्हारी होशियारी लियाकतका इसीसे पता लगता है कि तुम्हारे अपनरका पहुंचनेसे पहले तुम्हारे सूबेमें एक बन्देयेखुदाकी वेदम होगई!

तुम्हारी इन हरकतों पर यहां जनतमें खूब खूब चर्चे होते पुराने बादशाह और नवाब कहते हैं कि भई! यह फरङ्गी सूबे एशियाई लोगोंके ऐब तलाश करनेहीको यह अपनी बहादुरी भाते हैं। दिखानेको तो उन ऐबोंसे नफरत करते हैं पर इन्हें देखिये तो उनको चुन चुनकर काममें लाते हैं। मगर इन चश्मपोशी करते हैं। तुम लोग हमारे जमानेके ऐबोंको का लानेसे नहीं हिचकते। मगर उस जमानेके हुनरोंकी नकल करने तरफ खयाल नहीं दौड़ाते क्योंकि वह टेढ़ी खीर है। कहां मनके चावल और कहां हथियार बांधनेकी आजादी!

आठ मनके चावलोंकी जगह तुम खुशकसाली और का छोड़ कर जाते हो। हथियारोंकी आजादीकी जगह दस मियोंका मिलकर निश्चनमा मजलिसें करना और वन्देमातरम कहना बन्द किया था। अरे यार! इतना तो सोचा होता कि पिञ्जरेमें भी चिड़िया बोल सकती है। कैदमें भी जबान कैद नहीं होती। तुमने गजब किया लोगोंका मुंह तक सी दिया था।

और भी अहलेजनतने एक बात पर गौर किया है। वह यह कि जिस भरोसे पर तुम अपने सूबेके लोगोंको मेरे जमानेमें वो देकर हुरमत करते थे। उसकी वजह सुनिये। तुम खूब हो कि तुम्हारी केदकी मानकी हुकूमतने तुम्हारे सूबेके

कुछ भी आगे नहीं बढ़ाया। वह करीब करीब दो सौ साल पहलेके ज़मानेहीमें हैं। तुम उनको बढ़ाते तो आज वह तुमसे किसी बातमें सिवा चमड़ेके रङ्गके कम न होते। पर तुमने उन्हें वहीं रखा बल्कि उनकी कुछ पुरानी खूबियां छीन लीं और पुराने पुराने हुकूक जब्त कर लिये। दी थी कुछ तालीम और कुछ नौकरियां उन्हींको छीन कर तुम उन्हें औरङ्गजेबके ज़मानेमें फेंकना चाहते थे। वरना और दियाही क्या था जो छीनते और बढ़ायाही क्या था जो घटाते?

अपनी दस महीनेकी नवाबीसे तुम खुद तङ्ग आगये थे। इसीसे कयास करलो कि गरीब रैयतको कैसी तकलीफ हुई होगी। अब तुम्हारे जानेसे खुश हैं। ताहम खुशकिस्मतीसे हमारी मरहूम कौम रोनेको तैयार है। उसी तुम प्यारी बेगम कह कर बेवा बना चले हो। वह तुम्हारे फिराकमें टिसवे बहाती है। तुम्हें घर तक पहुंचा देनेमें वह टिसवे तुम्हारी मदद करेंगे। भाई! हमारी कौमकी सलतनत गई हुकूमत गई शानोशौकत गई पर ज़िहालत और गुलामीकी आदत न गई। वह मर्द नहीं बनना चाहती बल्कि रांड रहकर सदा एक खाविन्द तलाश करती रहती है। देखें तुम्हारे बाद क्या करती है!

तून फ़ुनून है। तुम अभी अब कहनेमेंही बरा है। पर जो तुम्हारे जानशीन होते हैं वह सुन रखें कि ज़मानेके बहते दरयाको लाठी मार कोई नहीं रोक सकता। दूसरेकी संग करके कोई खुश रह नहीं सकता। अपने मुल्कको आओ और खुदा तौफ़ीक़ दे तो हिन्दुस्तानके लोगोंको कभी कभी दुआसे औरसे याद करना। वस्सलाम

शाइस्ताखां
अश अयस।

(भारतमित्र ८ मार्च १८०१)

सर सय्यद अहमदका खत।

अलीगढ़ कालिजके लड़कोंके नाम।

मेरे प्यारो, मेरी आंखोंके तारो, मेरी कौमके नौनिहालो!

जिन्दगीमें मैंने इज्जत नामवरी बहुत कुछ हासिल की, यह कहूंगा और मेरा यह कहना बिलकुल सच है कि तु बेहतरीकी तदबीर हीमें मैंने अपनी उमर पूरी करदी। लोगोंकी तरक्की और बेहबूदीके खयालहीको मैं अपनी जिन्द हासिल समझता रहा। होश सम्हालनेके दिनसे अखीर दम इस कौमेमरहूमका मरसियाही मेरी जुबान पर जारी था। लाख शुक्रकी जगह है कि मेरी मेहनत बेकार न गई। तु लिये मैं जो कुछ चाहता था उसमेंसे बहुत कुछ पूरा हुआ तुम्हें एक अच्छी हालतमें देखलेनेके बाद मैंने खुदाको जान दी

उस दिन मेरे मजार पर आकर तुमने निढाल होकर आंसुओंके मोती बखर दिये। उस वक्तकी अपने दिलकी कैफि क्या जाहिर करूं कि मुझ पर क्या गुजरती थी और तबसे मु कितनी बेचैनी है। हाय!

चिमकादार खूंदर अमद खुर्दा बाशम।
कि बर खाकम आई वो मन मुर्दा बाशम।

काश! मुझमें ताकत होती कि मैं उस वक्त तुमसे होन सब और तुम्हारे पास आकर तुम्हें गोदमें लेकर कलेजा ठण्डा कर और तुम्हारे फूलसे मुखड़ोंसे आंसू पोंछकर तुम्हें हंसानेकी कोशि । मगर आह! यह सब बातें नामुमकिन थीं इस कुछ होती वह मैंही जानता हूं। मर कर भी मुझे

राम न मिला! इस नई दुनियामें आकर भी मुझे कल न
ली!

अजीजो! जिस हालतमें तुम इस वक्त पड़े हो इसका मुझे जीते
ही खटका था। खासकर अपनी जिन्दगी के आखीर दिनोंमें
मे बड़ाही खयाल था। इसके इंसदादकी कोशिश भी मैंने बहुत
क की मगर खुदाको मंजूर न थी इससे काम बनकर भी बिगड़
या। तुम मेंसे बहुतोंने सुना होगा कि मैंने अपनी मौजूदगीही
यह फैसला कर दिया था कि मेरे बाद महमूद तुम्हारे कालिजका
ाइफ सेक्रेटरी बने। इस पर वह शोरिश मची और वह तूफाने
तमीजी बरपा हुआ कि अल अमान! मेरी सब करनी धरनी भूल
र लोग मुझे खुदगरज और मतलबी कहने लगे। उस कौमी
ालिजको मेरे घरका कालिज बताने लगे और ताने देने लगे कि
ं अपने बेटेको अपना जानशीन बनाकर कौमसे दगा करता हूं।
ुझपर "अहमद की पगड़ी महमूदके सिर" की फबती उड़ाई गई।
र मैंने कुछ परवा न की। सय्यद महमूदको लाइफ सेक्रेटरी
नाया। अपने जीतेजी एक अपनेसे भी बढ़कर लायक सेक्रेटरी
ुम्हारे कालिजको देगया था। पर अफसोस उसकी उमरने बफा
न की मेरे थोड़ेही दिन पीछे वह भी मेरेही पास चला आया।

इस वक्त तुम पर जो कुछ गुजरी है यदि मैं होता तो उसकी
यह शकल कभी न होती। न सय्यद महमूदकी मौजूदगीमें ऐसा
करनेकी किसीकी हिम्मत होती। मगर अफसोस हम दोनोंही
नहीं। जो हैं उनके बारेमें और क्या कहा जाय अच्छे हैं!
कालिजके नसीब! कौमके नसीब! अजीजो! यह कालिज
तुम्हारे लिये बना था। तुम्ही उसमेंसे निकाले जाते हो तो यह
किस काम आवेगा? उफ! मेरी समझमें नहीं आता कि मैंने तुम्हारे
लिये यह दारुलउलूम बनाया था या गुलामखाना! तुम्हारे मौजूदा
सेक्रेटरी क्या खयाल करते होंगे?

मगर क्या पस्तखयालीका नतीजा पस्ती न होना चाहिये?

तुम्हारी और तुम्हारे कालिजकी मौजूदा हालतका क्या मैं [illegible]
दार नहीं हूं ? क्या यह इस वक्तका दर्दनाक नज्जारा मेरी [illegible]
नतीजा नहीं है ? हां ! यह जंजीरें कौमी तरक्कीके पांवोंमें [illegible]
हाथोंसे डाली गई हैं दूसरा कोई इसके लिये कुसूरवार नहीं [illegible]
सकता ! अगर इब्तिदासे आखीर तक मेरी चाल एकही रहती
यह खराबी काहेको होती ? कौमी पस्तीका ऐसा सीन देखा
जाता !

न जिल्लतसे नफरत न इज्जतका अरमां ।

मैं वही हूं जिसने "असबाबे बगावत" लिखकर विलायत [illegible]
खलबली डाल दी थी। इन सूबोंमें मैंही पहला शख्स हूं [illegible]
अङ्गरेजोंको आम रिआयाकी रायका खयाल दिलाया। मैंने [illegible]
मैं पहले डंकेकी चोट यह जाहिर किया था कि अगर हिन्दुस्तान
कौंसिलोंमें अङ्गरेज रिआयाके कायमसुकाम लोगोंको शामिल
करते तो कभी गदर न होता। तुम कभी न समझना कि
अङ्गरेजोंकी खुशामद किया करता था या खुशामदको किसी कौम
की तरक्कीका जीना समझा करता। बल्कि मैंने सदा अङ्गरेज
अफसरोंका बरताव किया है। जितनेही बड़े बड़े अङ्गरेज अफसर
मेरे दोस्त रहे हैं मैंने सदा उनसे दोस्ताना और बेतकल्लुफ
गुफ्तगू की है। कभी उनको अफसरों या हाकिमोंका रोब मानकर
उनसे बरताव नहीं किया। खुदाकी इनायतसे सय्यद महमूद
[illegible] मुझसे भी ज्यादा आजादी थी और [illegible]
[illegible] उन्होंने भी [illegible] हासिल की थी जिससे उस [illegible]
[illegible] दमक और भी बढ़ गई थी। यही वजह थी कि मैं
[illegible] और तुम्हारे कालिज [illegible]
[illegible] किया था। [illegible]
[illegible]
[illegible]
[illegible] किया जाता।

मेरे बच्चो! मेरी एकही कमजोरीका यह फल है जिसे तुम भोग रहे हो और जिसके लिये आज मेरी रूह कब्रमें भी बेकरार है। मेरी उस कमजोरीने खुदगर्जी और खुशामदका दरजा हासिल किया। पर सच यह है मैंने जो कुछ किया कौमकी भलाईके लिये किया अपने फायदेके लिये नहीं। पर वैसा करना बड़ी भारी भूल था यह मैं कबूल करता हूँ और उसका इतना खौफनाक नतीजा होगा इसका मुझे ख्वाबमें भी ख्याल न था। मैंने यही समझा था कि इस वक्त मसलहतन यह चाल चल लीजाय आगे चलकर इसकी इसलाह करली जायगी। मैं यह न समझा था कि यह चाल मेरी कौमके रगोरेशेमें मिल जायगी और छूटनेके बजाय उसकी खू बू और आदत बन जायगी। अफसोस! खुद कर्दा अम खुद कर्दारा इलाजे नेस्त!

हिन्दुओंसे मेल रखना मुझे नापसन्द नहीं था। मेरे ऐसे हिन्दू दोस्त थे जिन्होंने मरते दमतक मुझसे दोस्ती निबाही और जिनकी सोहबतसे मुझे बड़ी खुशी हासिल होती थी। कालिजके लिये उनसे माकूल चन्दे मिले हैं। पंजाबमें कालिजके चन्देके लिये दौरा करनेके वक्त लेकचरमें मैंने कहा था कि हिन्दू मुसलमानोंको मैं एक ही आंखसे देखता हूं। क्या अच्छा होता जो मेरे एकही आंख होती जिससे मैं इन दोनोंको सदा एकही आंखसे देखा करता! अफसोस! अपनी कौमकी शकस्ताहालीने मुझे उस सच्चे रास्तेसे हटाया। मैंने सन् १८८८६० में इण्डियन नेशनलकांग्रससे मुखालिफत करके हिन्दू मुसलमानोंको दो आंखोंसे देखनेका ख्याल पैदा किया और अपने उन्हीं सच्चे और पुराने खयालात पर पानी फेरा जिनका दावेदार कांग्रससे पहले मैं खुद था। ख्याल करनेसे तअज्जुब और अफसोस मालूम होता है कि मैंने वह सच्चा और सीधा रास्ता छोड़ा भी तो किसके कहनेसे कि जो असबाबे बगावत लिखनेके वक्त मेरे पिछले ख्यालातका तरफदार था और उसीने मेरी उस उर्दू किताबका अंगरेजी तरजमा करदिया था! काश! सर आकलण्ड

कालवित इन गुर्वोके लफटन्ट गवर्नर न होते और उ
रहते जैसे उस किताबके तरजमा करनेके वक्त थे।

मेरे भजीजो ! जमानेकी रफ्तारको कोई रोक
वह सबको अपने रस्ते पर घसीट लेजाती है। अग
नहीं हो, जवान हो और माशाअल्लह तुममेंसे कि
मूंछें भी निकल रही हैं। मगर इस कालिजमें तुम
तरह रखे जाते हो गैरके सायेसे बचाये जाते हो। त
पर अङ्गरेज प्रिन्सपल वगैरा वैसाही पहरा रखते हैं
मामा छूछू गोदके और उंगलीके सहारेके बालकों
पर इतने पर भी तुम निरे गोदके बच्चे नहीं बने र
दबने पर तुम्हें जवानोंकी तरह हिम्मत करनी पड़ी
क्या सदा गोदहीमें रह सकते हैं ! उफ ! अजी
हो। तुम्हारे गोरे अफसर एक गोरे हाकिमको
अजीज समझकर एक कांस्टबल पर तुम्हें निसार
सेक्रेटरी इस्टी अपनी वफादारीके दामन पर दा
चाहते ! अगर वह तुम्हारी तरफदारी करें तो अ
बागी समझेंगे ! तुम्हारी सांप छछूंदरकीसी हाल

सबसे गजबकी बात है कि यह पस्तहिम्मती
बताई जाती है और इसका अमलदरआमद
सवाब पहुंचाना समझा जाता है। मेरा जी घ
एक मामूली कमजोरीके लिये यह जिल्लत ! जो
अपनी मेजपरसे इस मुल्कके हिन्दू मुसलमानों
उनमेंसे दो चार मुसलमानोंके लिये ज्यादा ल
जिल्लत ! इस वक्त कुछ समझमें नहीं आता कि
तसल्ली दूं। इससे एक उलुलअज्म शाइरका
यह खत खतम करता हूं।

"तुम्हीं अपने मुशकिलको आसां क
साय

॥ श्री: ॥

सूचना ।

सन् १८०६ ईस्वीमें शिवशम्भुके चिट्ठे, लार्डकर्जनके नामके पुस्तकाकार छपे और वह पुस्तक भारत मित्रके उपहारमें दीगई, पाठकोंने उसे बहुतही पसन्द किया। बहुत लोगोंने इच्छा प्रगट की कि शिवशम्भुके दूसरे चिट्ठे भी जो भारतमित्रमें समय समयपर निकले हैं- पुस्तकाकार छाप दिये जायं । बाबू बालमुकुन्दजी गुप्तने लोगोंका अनुरोध मानकर विचार किया कि अपने लिखे चिट्ठे संग्रह करके पुस्तकाकार निकाल दिये जायं और उनमें बङ्गालके भूत पूर्व नवाब शाइस्ताखां और अलीगढ़के सर सय्यद अहमदखांके खतभी जोड़ दिये जायं। यह खत भी गुप्तजीकी लेखनी से निकले थे और भारतमित्रके पाठकों को बहुत रुचे। गुप्तजीने चिट्ठोंको संग्रहकर छपवाना आरम्भ कर दिया परन्तु कुटिलकालकी गति अगम्य है। यह पुस्तक पूरी छपने नहीं पाई कि हिन्दी प्रेमियों को शोकमें डालकर, हिन्दी भाषाके भाण्डारको अनमोल रत्नोंसे भरनेकी इच्छा रखनेवाले अपनी सरस और मधुर भाषासे साहित्य रसिकोंके मन मुग्ध करने वाले बाबू बालमुकुन्दजी गुप्त १८ सितम्बर सन् १८०७ को परलोकवासी हुए !! ईश्वरकी इच्छा ! गुप्तजीका विचार और पाठकोंका अनुरोध पूराकरनेके लिये यह पुस्तक प्रकाशित की गई है आशा है कि पाठक इसे पढ़कर प्रसन्न होंगे ।

कलकत्ता—९७ मुक्तारामबाबूष्ट्रीट, भारतमित्र प्रेसमें
पण्डित कृष्णानन्द शर्म्मा द्वारा
मुद्रित और प्रकाशित।

॥ श्रीः ॥

मधुमक्षिका ।

प्रथम भाग ।

महावीरप्रसाद द्वारा
संकलित ।

कलकत्ता ।
९७ मुक्ताराम बाबू ष्ट्रीट, भारतमित्र प्रेसमें
पण्डित कृष्णानन्द शर्म्मा द्वारा मुद्रित और
प्रकाशित ।

सन् १९०१ ई० ।

॥ श्री ॥

मधुमक्षिका

जगत पिता जगदीश्वर की करुणा और शिल्प कौशल चाहे
टे से छोटा कीटाणुही चाहे मनुष्यादि श्रेष्ठ जीव सब प्राणियोंमें
समभावसे विराजमान है। खुर्दबीन द्वारा छोटे छोटे कीड़ों को
हुए देखने से विस्मित होना पड़ता है। उनके छोटे छोटे अङ्ग
त्यङ्ग जब आनन्द से इधर उधर नाचते फरफराते हैं तब उन्हें देख
र अन्तः करण एकबारही प्रफुल्लित होजाता है। वास्तवमें ईश्वर
ड़ा विलक्षण है जिस प्राणीके लिये जिस प्रकार का अङ्ग प्रत्यङ्ग
सकी जीवन रक्षाके उपयोगी होगा उसको उसने वैसाही अङ्ग
त्यङ्ग दिया है। हाथीका सूंड जिराफ की लम्बी गरदन जलचर
क्षियों के सिकुड़ते हुए पैर इत्यादि इस विषयके असंख्य उदा-
रण दिये जासकते हैं। केवल यही नहीं उसने जीव जन्तुओंको
क स्वाभाविक ज्ञानभी दिया है, जिससे वह विपदसे अपनी रक्षा
रने में समर्थ होते हैं, अपना घर बनाने और सन्तानोत्पादन
ार्यमें प्रवृत्त होते हैं और स्वाभाविक प्रेमसे सुग्धहो अपत्याद
समूहका लालन पालन करके सदा अपना वंश कायम रखते हैं।
ोटी मकड़ी मधुमक्षिका, विविध प्रकार के पक्षी और वीवरके
ासला बनानेकी विद्या, शासन प्रणाली परिश्रम अपार धैर्य,
मकायत और भविष्यत के लिये संचय प्रभृति की पर्यालोचना
रनेसे अन्तःकरण ईश्वर का रचना-कौशल और बुद्धि-शक्ति की
राकाष्ठा देखनेके लिये औरभी उत्सुक होता है। मधुमक्षिका
ा छत्ता बनानेकी विद्या देखकर शिल्प-तत्त्व-वेत्तागण बहुत ही
र्विस्मित होते हैं।

सुन्दर षट्कोण गृह बनाते देखकर किसका मन विस्मित नहीं हो[illegible]
बड़े बड़े वैज्ञानिक भी घर बनाने की प्रणालीमें शायद इन्हें
आगे हार मानेंगे। मधुमक्षिका के अधिकांश कार्य्य मनुष्य
व्यवहार के सदृश हैं। हम संक्षेपमें इसका विवरण पाठकों
को सुनाना चाहते हैं, आशा है कि उनको वह अरुचिकर नहीं
होगा।

अति प्राचीन कालसे मधुमक्षिका के ऊपर मनुष्योंकी दृष्टि है।
यहूदियोंकी धर्म पुस्तक पढ़नेसे विदित होता है कि उन्होंने बहु[illegible]
पहले मधुमक्षिका के आचार व्यवहार और स्वभाव की ओर ध्या[illegible]
दियाथा। प्राचीन कालके विख्यात प्राणि तत्ववेत्ता प्लीनी शा[illegible]
का कथन है कि एरिष टोमेकस नामक प्राणीविद्याके शास्त्री
अपनी उमरके ५८ वर्ष मधुमक्षिका के काम देखने भालने
में बितादिये। फिलिस्कस नामक किसी ग्रीस देशवासी ने
जीवन का अधिकांश समय मधुमक्षिका का स्वभाव जान[illegible]
ही बितादिया था। एरिसटाटलने अपनी प्राणितत्व विद्या
पुस्तक में मधुमक्षिका के स्वभाव आदिका वर्णन बहुत वि[illegible]
पूर्वक किया है। प्राचीन रोमके पूज्यतम कवि वर्जिलने भी
मक्षिकाको अपनी सुन्दर कवितामें स्थान दिया है। आधुनिक का[illegible]
जिन लोगोंने मधुमक्षिका का कार्य्यकलाप पर्य्यालोचना का
अधिक समय व्यतीत किया है उनमें सोयामाडंस, लिनीयस [illegible]
हिउबर और कर्बी प्रधान हैं। उक्त हिउबर का पुत्र भी प्राणि
वेत्ताथा किन्तु उस के पिताका नामही अधिक विख्यात है।
हिउबर सत्रह वर्षकी अवस्थामें अन्धा होगया था इसीसे वह
किसी प्रकारकी देखभाल करनेमें असमर्थ था, तथापि वह चुप न
रहा; अटल प्रतिज्ञा वाला मनुष्य सब प्रकारके कठिनसे कठिन
भी अवस्थामें टाल सकता है। कालिदास कहगये हैं कि [illegible]
[illegible] हुई जलधाराकी भांति अभीष्ट सिद्धिके लिये स्थिर और [illegible]
[illegible] कोई बाधा टेहर रोक नहीं सकता। [illegible]

(Paradise Lost) के रचयिता इङ्गलेण्डके महाकवि मिल्टनने अन्धे होकर उस जगद्विख्यात काव्यकी रचना कीथी। तब ह्विउबर क्यों निराश होता ? बरनेनस नामो उसका एक विश्वासी नौकरथा, वही उसकी तरफसे देखभाल करके उसकी सहायता करने लगा। उस नौकरके इस्तीफा देकर चलेजाने पर उसकी स्त्री और पुत्रने उसको यथाशक्ति सहायता दीथी। इसप्रकार उसने अध्यवसायसे कार्य्य कर के प्राणि तत्व विज्ञानमें विशेष उन्नति की। प्राचीन हिन्दुओं ने प्राणितत्व विद्यामें कहांतक उन्नति कीथी सो हमको भलीभांति विदित नहीं है। संस्कृत भाषामें प्राणि तत्व विद्या सम्बन्धी कोई पुस्तक है कि नहीं—इसमें हमको विशेष सन्देह है। इस विषय की मीमांसा संस्कृत के सुपण्डित लोगही कर सकते हैं। अस्तु संस्कृत कवियों के निकट मधुमक्षिका का विशेष आदर नहीं देखा जाता, इस विषयमें भ्रमर ही बड़ा सौभाग्यशाली है। वह कभी कामदेव के अमोघास्त्रका प्रधान सहाय और कभी बहुस्त्रिया-सक्त शठ लम्पटका आदर्श स्वरूप होकर संस्कृत कवियों का अत्यंत प्रीति पात्र हुआ था। किन्तु अविरत परिश्रमी परिमिता-चारी मधुमक्षिका शृङ्गार रस-प्रिय कवियों का मनोरञ्जन करनेमें समर्थ नहीं हुई। कविकी दृष्टिमें जोहो, किंतु मोल वैज्ञानिकों के निकट मधुमक्षिकाका कभी अनादर नहीं होता। इस लोगोंकी बोल चालमें मधुमक्षिकाके कई नाम हैं—जैसे मधुमक्षिका, मधु मक्खी, मदमाखी, मौमाखी मधरको मक्खी इत्यादि।

प्राणिविद्याके पण्डितोंने जीवसमूहको प्रधानतः पांच श्रेणि-योंमें बांटा है। इनमें से स्तनपीने वाले, पक्षी, कीड़े और मछली प्रधान श्रेणीमें हैं। इस श्रेणीके जीवों के रीढ़होते हैं। इसलिये इनश्रेणीके जीव रीढ़दार कहलाते हैं। इनके सिवा अन्य किसी और के रीढ़ नहीं होता। मधुमक्षिका दूसरी श्रेणीमें है। इस श्रेणीको "गिरहदार" (Articulates) कहते हैं। क्योंकि इस श्रेणीके जीवोंके शरीर दो या कई भागोंमें बटेहुए हैं। मधुमक्खी

को नहीं होती। उसकी ठोड़ीकी बाईंतरफ के दो हिस्से बाईं तरफ और दाहिनी तरफके दोहिस्से दाहिनी तरफकोमिकुड़ जाते हैं। इसकी जीभ एक थैलीसे ढकी है। इसके पंख बहुत तेज उड़ने वाले पक्षियोंके डैनोंसे भी अधिक मजबूत हैं। इसके चार परों की बनावटसे मनुष्यके हाथोंकी बनावट बहुत मिलती है। हरेक पैरके अन्तमें एक दूसरेकी ओर मुड़ेहुए दो कांटे हैं; इन्हीं कांटोंके जरिये वह छत्तेके ऊपर पैर रखकर आनन्द में झूल सकती है। इसके सिवा मधुमक्खीके मुंहकेदोनों तरफसे दोजोड़े विशेष अङ्ग निकलते हैं; एक जोड़ा ओठसे मिला रहता है और दूसरा जोड़ा नीचेकी ठोड़ीसे मिलाहोता है। इनको अंगरेजी भाषामें Palpi या Feelers कहते हैं, हम इनका नाम स्पर्शक रखते हैं। मधुमक्खी आहार करनेसे पहले इन स्पर्शक अङ्गोंसे भोजन को टटोलती है। सूंड़ और स्पर्शक सदा चलायमान रहते हैं।

मधुमक्खियां मनुष्यकी भांति समाजबद्ध होकर रहती हैं, किसी किसी छत्तेमें पचास हजार तक एकत्र रहती देखी गई हैं। प्रत्येक छत्तेमें तीन श्रेणीकी मधुमक्खियां पाई जाती हैं जिनके नाम क्रमसे "रानी" "निखट्टू नर" और "कामकाजी" हैं। प्रत्येक छत्तेमें केवल एक रानी रहती है। छत्तेमें जितनी मधुमक्खियां होती हैं उनके प्राय: तीस भागका एक भाग निखट्टूनर होता है और शेष सब कामकाजी। प्राणि तत्व वेत्ताओं ने पहले कामकाजियों को नपुंसक समझाथा किन्तु वास्तव में यह अपूर्ण अङ्ग वाली स्त्री जाति है। इन तीनोंप्रकार की मधुमक्खियों का विशेष विवरण आगे लिखते हैं।

रानी।

किसी ज्ञानी दार्शनिक ने कहा है कि मनुष्य जितना ही उन्नत होता है स्त्रियोंका आदर उसके यहां उतनाही अधिक होता है। वर्तमान सभ्य जाति के मनुष्यों का स्त्रियों के प्रति व्यवहार इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। मधुमक्खी समाज

ंचित है, इसको उन्नति भी नहीं है अवनतिभी नहीं। वह स्व

रानी एक भावसे मधु संग्रह करती, और मधुका छत्ता बनाने आदिका काम करती है। किन्तु यहभी संस्कार वश स्त्री जातिकी पक्षपातिनी है। एक ही मधुमक्खी ही मक्षिका साम्राज्य की अधिनेत्री है। प्रकृति देवी ही मानो उसको रानी बनाकर मक्षिका राज्य में भेजती है। उसके अङ्ग प्रत्यङ्ग उसकी प्रजाके अङ्ग प्रत्यङ्गों से बहुत बड़े होते हैं; उसका रङ्ग सबकी अपेक्षा स्वच्छ होता है; अङ्ग प्रत्यङ्ग सबल और सुडौल होते हैं। डंक कुछ टेढ़ा होता है। बहुत छोटे होते हैं। कामकाजी और निखट्टू नर के पंखों से उनकी छाती और पेट भलीभांति ढकजाते हैं किन्तु रानीके पंखों से उसकी छाती का कुछ अंश ढक सकता है। पेटका प्रायः सब हिस्सा खुलाही रहता है। कामकाजी मक्खियोंकी भांति इसके पैरमें ब्रुश के कड़ेबालोंकी तरह रोएं अथवा रज संग्रह करनेकी थैली नहीं होती। उसको इन सबका प्रयोजन भी नहीं है। कारण यह कि उसकी भक्त प्रजा उसका अभाव बड़े प्रेमसे पूरा कर दिया करती है। मधुमक्षिका वंशकी एक मात्र जननीका उदर निखट्टू और कामकाजियों के उदर की अपेक्षा बहुत बड़ा होता है, विशेष कर गर्भावस्था में वह बहुत बड़ा होजाता है। मधुमक्खियां अपनी रानीको बड़ा प्यार करती हैं। दिनरात परिश्रम करके वह रानी के लिये सहस्रों सूतिका गृह बनाती हैं, स्वयं रूखासूखा खाकर रानी को स्वादिष्ट और पुष्टि कारक भोजन खिलाती हैं और कभी उससे अलग नहीं होतीं। इसीसे भारत वर्षके किसी किसी प्रान्तके निवासी जब घरमें मधु का छत्ता लगवाना चाहते हैं तो पहले रानीको पकड़ कर उसके पंख छेदकर अथवा उसके पैर में तागा बांध कर निर्दिष्ट स्थान में रख छोड़ते हैं, बस बिना विलम्ब मधुमक्खियां वहीं आकर छत्ता बनाने लगती हैं।

पहलेही कहागया है कि मधु के छत्ते में केवल रानी ही एक मात्र स्त्री मक्षिका है, उसीसे सब मक्खियों का जन्म होता है, इसीसे जर्मनी वाले रानीको जननी मधुमक्षिका (Mother-bee) कहा करते हैं। किन्तु अकेले सैकड़ों पुरुष मक्षिकाओं के बीच रहने पर भी रानी कभी नीति विरुद्ध कार्य्य नहीं करती। सम्पूर्ण स्वाधीनता प्राप्त रहने पर भी वह एकही पुरुषको भजती है, मरतेदम तक किसी दूसरेको पति नहीं बनाती। दो तीन दिन की उम्र होतेही रानी विवाह योग्य होती है, और प्रायः पतिनिर्वाचन करनेमें अधिक विलम्ब नहीं करती, यदि रानी पति चुनने में कुछ दिन विलम्ब करे तो प्रजावर्गमें राजवंश लोपके भयसे खलबली पड़जाती है और वह भयभीत होकर रानीका चित्त विविध प्रकारसे इस ओर फेरनेकी चेष्टा करती हैं। अन्तमें रानी एक मेघशून्य स्वच्छ दिनको राज प्रासाद से निकल कर निर्मल नील नभोमण्डल में उड़ने लगती है, और निकट नर, उसी क्षण रानीका प्रेमपात्र बननेकी लालसासे प्राचीन हिन्दू राजाओंकी स्वयंवर सभाकी भांति गगन मण्डल में उड़कर स्वयंवरा रानी को घेरलेते हैं। पीछे रानी सहस्रों वरोंमेंसे एकको वरतीहै, शेष पुरुषगण लज्जा और विषादसे मुख मलिन करके छत्तेको लौटआते हैं, स्वयंवरके पश्चात राजाओं की तरह वह वरके साथ घोर संग्राम नहीं करते। किन्तु हाय! उक्त सौभाग्यवान नर नव विवाहिता वधूके साथ दोदिन भी सुखसे नहीं बिताने पाता, विवाह के दिन ही अतिभोग करके उसके सुखमय जीवनका अन्त होजाता है। संसारका सुख ऐसाही क्षण भङ्गुर है! किन्तु तथापि पति वियोग विधुरा मक्षिका रानी का अनुराग यावजीवन अटल रहता है, उसको कभी पुनर्विवाह करते नहीं देखागया है। धन्य रानी धन्य! सहस्रों पुरुषोंके बीचमें निवास कर के भी तेरा एके धर्म एक व्रतनेमा काय वचन मन पति पदप्रेमा' है, तूने सतीत्वमें भारत ललनाओंको भी पराजित किया है। भारत ललनाएं पतिव्रता होकर यद्यपि जगत प्रसिद्ध हुई हैं किन्तु उनका

पातिव्रत्य अधिकांशमें भारतवासियों के निकट सची है। यहा! तुच्छ कीट वंशमें जन्मलेकर सैंकड़ों पुरुषों के साथ निवास कर सम्पूर्ण स्वतंत्रता रहने परभी इन्द्रिय संयम की यथाही पराका दिखलारही है।

किन्तु रानीके पुनर्विवाह न करनेपर भी माक्षिका समाज की किसी प्रकार की हानि नहीं पहुंचती। रानीका जिस दिन विवा होता है, कह चुके हैं कि, केवल उसी दिन उसे पतिका सहवा लाभ होता है। केवल एक दिनके सहवास से वह दीर्घकाल तक देती है। इन अण्डों सेही असंख्य मधुमक्खियों का जन्म है। विवाहके दोहीदिन पीछे रानी अण्डा देना आरम्भ करती है। अण्डेका आकार एक बारहवें इंचका होता है; रङ्ग कुछ नीला लिये साफ और कुछ टेढ़ा होता है। काम काजी मक्खियांपहलेसे उपयुक्त गृह बनारखती हैं। रानी प्रत्येक कोठरीमें एक एक अण्ड प्रसव करती है। अण्डादेनेके पहले वह बिलमें सिर घुसा अच्छीतरह उसके चारोंओर देखलेती है। किन्तु हमारे देशके और विद्या बुद्धि सम्पन्न होनेपरभी क्या सूतिका घर चुननेमें इतना ध्यान करते हैं? यदि ऐसा होता तो हमारे देशमें बच्चोंकी इतनी मृत्यु नहीं होती। इस विषय में इस तुच्छ मक्खिका के काम से हम लोगोंको शिक्षा लेना चाहिये। बिल अच्छा विदित होने पर रानी उसमें अपने शरीरका पिछला भाग डालकर केवल एक अण्डा देती है, इसीप्रकार एकसे दूसरे में जाकर सब एक दिन में अनन्त दो सौ अण्डे देती है।

जिस प्रकार आसन्न प्रसवा युवती को स्त्रियां सहानुभूति और सहायता के लिये चारोंओर से घेरकर बैठती हैं उसीप्रकार रानी को कामकाजी मक्खियां अण्डे देनेके समय घेरे रहती हैं और समय समय पर रानीके मुँह में मधुप्रदान करती हैं। अण्डे देने पर वह जितनी पुरस्कार उसे यथोचित आह्लादित होती है; कभी कभी रानी बहुत अच्छ कर घेर लेती है, इसका भी

कभी एक एक बिलमें दो या दो से अधिक अन्डे गिरजाते हैं, किन्तु प्रत्येक बिल एकही अन्डे केयोग्य बना होता है इससे उसमें कभी अधिक अंडे रहनेसे अनिष्ट का भय करके कामकाजी मक्खियां एक को छोड़कर बाकी अंडे खाजाती हैं।

गर्भ धारण के पीछे छः अथवा आठ सप्ताह तक रानी लगातार अण्डे देती है, उन अन्डोंसे केवल कामकाजियां जन्म लेती हैं। इन अन्डोंके लिये पहलेहीसे कामकाजी मक्खियां घर बना रखती हैं। कई सप्ताह विश्राम लेकर रानी फिर अण्डे देती है, उन अण्डों से केवल निखट्टू नरों का जन्म होता है। इन के लिये भी पहलेही से कुछ बड़े और भिन्न प्रकारके घर तैयार रहते हैं। कामकाजी मक्खियों के अन्डोंकी अपेक्षा नर मक्खियों के अन्डे कम होते हैं; कामकाजी संस्कार प्रथा नर मक्खियों के निमित्त घरभी अलगही बनाती हैं। अन्तमें रानी थोड़ेसे अन्डे देकर फारिग होजाती है। इनसे राज कुमारियोंका जन्म होता है जोपीछे रानी होती है। अण्डे देदेनेके पश्चात् कामकाजी मक्खियां मधु और पराग मिश्रित मण्डयोड़ा २ हरेकघरमें डालकर उसका मुंह अच्छीतरह बन्द करदेती हैं। अन्डा धीरे धीरे बच्चा (Larva) होकर उसे चीज खाकर बढ़ता है, फिर (Pupa) नामक अवस्था को प्राप्त होकर अन्तमें पूर्ण मक्षिकावस्था को धारण करता है। अन्डे से पूरी मक्खी बनने में कामकाजीकी अपेक्षा पुरुष मक्षिका को अधिक समय लगता है। राज कुमारियों वाले अण्डे बड़े और सुन्दर गृहमें रखे जाते हैं, अत्युत्कृष्ट पदार्थ खानेको पाते हैं और बड़े यत्नसे लालित पालित होते हैं।

जब राजभवनमें राजअन्डे राजकुमारीकी अवस्था प्राप्त होकर युवती मक्षिका होनेलगते हैं तब आदि रानी बड़ी चंचलता प्रगट करने लगती है। उसको अब अनुचरवर्गके साथ रहना अच्छा नहीं लगता और वह विविध उपायोंसे शिशुओं को मारडालनेकी चेष्टा करती है। किन्तु राज कुमारियां सदा सतर्क संतियोंके पहरेमें

रहती हैं। रानी बहुधा उनका कुछ अनिष्ट नहीं करने पाती। धीरे धीरे रानीका उद्वेग सब मक्खियों पर प्रगट होजाता है, इसमें जगह जगह बलवा दिखाई देता है और तुरन्तही सम्पूर्ण बस्तीमें अराजकता और अशान्ति फैलजाती है। अन्तमें एक साफदिन के मध्याह्न कालमें रानी दलबल सहित छत्तेसे बाहर निकल कर अन्यत्र चलीजाती है। अधिकांश मक्खियां उसके साथ जाती हैं। इससे पहलेही रानी छत्तालगाने योग्य स्थान ढूंढ़नेके लिये चरों ओर दूत भेजती है, वह इधर उधर भ्रमण कर अन्तमें एक हरी शाखा अथवा लता पताकी ओटमें स्थान पसन्द करते हैं। मक्खियां वहांही जाकर बसती हैं और कामकाजी मक्खियां छत्ता बनाने लगती हैं। पुराने छत्तेकाविद्रोह दो तीनदिनमें समाप्त होजाता है और मक्षिका समाज शान्त होजाती है। सब नई रानियां एकही समय में युवती नहीं होतीं, जो सबसे पहले युवती होती है वह नाना भांति छलबल करके अन्यान्य राज-कुमारियों को मारडालने की चेष्टा करती है। जब बुद्धिमान मानवजाति तुच्छ सिंहासनके लिये लड़कर आपसके पवित्र रक्तसे अभिषिक्त होकर मानव नामको अपमानित, पृथ्वी को पतित और इतिहास के प्रत्येक पृष्ठको कलङ्कित करने में जरा भी शङ्कित या लज्जित नहीं होती तब कीट पतङ्गकी तो बातही क्या है। सब राजकुमारियां सर्वदा पहरेमें रहनेपरभी बड़ी रानी एकप्रकारका ऐसाशब्द करती है कि पहरेदार उसे सुनतेही मुग्ध होजाते हैं और प्रायः सब अपने अपने कामको भूल जाते हैं, तब बड़ी छोटी बहनोंको सहजमें मार कर निश्चिन्त होजाती है। अगर उसदिन वह किसी कारणसे कामयाब नहुई तो वहभी उस बूढ़ी रानीकी भांति अपने प्यारे अनुचरों सहित छत्ता त्यागकर अन्यत्र जा नई बस्ती बसाती है। यों दूसरा छत्ता तयार होता है। अब पुराने छत्तेमें बहुत थोड़ेही मक्खी रहजाते हैं, तब नई युवती रानियोंमें से जो बड़ी होतीहै वह और मारडालती है अथवा अगर वह सब एकही उमरकी हों तो

छत्तेमें घोरयुद्ध प्रारम्भ होता है। इस युद्धमें सबके मरजानेकी सम्भावना नहीं, क्योंकि यदि दो मधुमक्खियां लड़ाईमें डंक मारनेमें बराबर निकलीं तो वह स्वभाव वश लड़ाई बन्द करदेती हैं। इस प्रकार छत्तेमें फिर शान्ति होजाती है। किन्तु यह कुछ बात नहीं है कि बूढ़ी रानीकोही छत्ता छोड़ना पड़ेगा, बहुधा नई रानियांही अलग जाकर नये छत्ते बनाती हैं। मनुष्य समाजकी भांति मधुमक्षिका समाजमें भी कभी दो रानी थोड़ी देरके लियेभी मित्र भाव से एकत्रनहीं रहसकतीं। अगरकिसी प्रकारकोई दूसरी रानी छत्तेमें आजाय तो उसीवक्त दोनों रानियोंको संतरी इस तरह घेर लेतीहैं कि उनके भागने का रास्ता नहीं रहता, इससे वह एक दूसरे की ओर बढ़तीहैं, लड़ाई ठनजाती है औरजो जीतती है वही सिंहासन पातीहै।

रानीकी मृत्यु छत्तेमें एक बड़ी शोचनीय घटना है। जब रानी मरती है तब मधुमक्खियां अपना अपना कार्य्य छोड़कर उसकी लाशको चारोंओर से घेर लेतीहैं और एक विचित्र करुणा स्वरसे विलाप करने लगती हैं। जोहो, कुछ कालतक शोक प्रकाश करके मक्खियां नई रानी को खोजमें लगती हैं। रानी बिना मधु का छत्ता कभी रह नहीं सकता, किसी किसी राजनीतिज्ञ पण्डित की भांति मधुमक्खियां प्रजा तन्त्र राज्य शासन प्रणाली की पक्ष पातिनी नहीं हैं। अगर रानीकी मृत्यु होतेही कोई नई रानी छत्ते में घुसादीजाय तो मक्खियां तत्काल उसकी ऐसे घेरलेतीहैं कि उसे तुरन्तही भूखसे प्राण देदेना पड़ता है। शत्रु होनेपर भी मक्खियां कभी रानीके शरीरमें डंक नहीं मारतीं। किन्तु मधुमक्षिका की स्मरण शक्ति बहुत कम होती है रानीके मरनेके १८ घण्टे बाद अगर कोई नई रानी छत्तेमें आजायतो मक्खियां पहलेतो उसे घेर लेंगी; किन्तु क्षणभर बाद उसको स्वाधीनता देकर रानी बना लेंगी। अगर रानीके मरनेके २४ घण्टे पीछे कोई नई रानी छत्तेमें आवेतो मक्खियां तुरत उसको अपनी रानीबनालेंगी। रानीकी मृत्यु होनेपर बहुधा कामकाजी मक्खियां कामकाजी अण्डोंको संस्कार

समानहोता है। पंख शरीरको अपेक्षा बड़े और नेत्रभी बड़ेहोते हैं; शरीरमें डंक नहीं होते। यह २४ दिनमें अंडे से पूर्णावस्था को प्राप्त होते हैं। हरेक छत्तेमें इनकी संख्या ६०० से लेकर २००० तक होती है। यह मधुमक्षिका समाजका कोई काम नहीं करते। इसीसे इनका नाम निखट्टू नर है। कामकाजियोंकी भांति मधु या मोम बटोरनेके निमित्त इनके कोई थैली नहीं होती। मनुष्य समाजमें भी ऐसे पुरुषोंका अभाव नहीं है। ऐसे अनेक अघरगट्टू पाये जाते हैं जो संसारके किसी काममें हाथ नहीं डालते हरामका खाना, खूब सोना और केवल पाशव इन्द्रिय सुखमें मत्त होकर जगतका दुःख बढ़ानाही उनका काम है। नर मख जब उड़तेहैं तो इनके पंखसे एक प्रकारकी भिनभिनाहट निकलती है। इससे अंगरेजी भाषामें इनको *Drone* कहते हैं। यह आलसी और बड़े डरपोक होते हैं; भगवानने मानो इनको सङ्कटमें मरजाने के लियेही, आत्मरक्षाका एक मात्र उपाय डंक नहीं दिया है। यह कुछ महीनों तक जीते हैं और इनकी मृत्यु प्रायः स्वाभाविक नहीं होती। जो रानीका पति होतांहै वह तो अत्यन्त इन्द्रिय सुख भोग करके उसी दिन प्राण गंवा देता है। बाकी जो नर रानीके साथ अन्यत्र जा बसते हैं वह कुछ दिन जीते हैं और जो पुराना छत्ता नहीं छोड़ते उनके ऊपर मक्खियों का घृणा क्रमशः बढ़ने लगती है; अन्तमें भादों अथवा आश्विन महीनेमें एक दिन कामकाजी मक्खियां मिलकर सब निखट्टू नरोंको मारडालती हैं। किन्तु छत्तेमें अगर रानी न हो या कोई राजकुमारियां युवती न हुई हों तो कामकाजी मक्खियां उनका विनाश नहीं करतीं। यों कोई नर छः महीनेसे अधिक नहीं जीनेपाता।

कामकाजी।

ना. कामकाजी मक्खीका आकार नरसेभी छोटा होता है। इसका चेहरा कलयी होता है; मस्तक और छाती मस्तक और छातीके सदृश हैं, उदर होकर नीचे एक बिन्दुमें आकर समाप्त होजाता है। सर्वशरीर रोमसे ढका रहता है; इस से इसको मधु और संग्रह करनेमें बड़ा सुभीता है। इसके पंखोंसे उदर छिपसकता है। इसकी छाती गोल और डंकसीधा होता है। के एक लचकदारसुगढ़ और पिछले दो पैरोंमें पराग बटोरनेकी थैलियां होती हैं। अण्डे से पूर्ण अवस्था प्राप्त होनेमें इसको २१दि लगते हैं। अनेक प्राणीतत्त्ववेत्ताओंका अनुमान है कि कामकाजी मक्खियां अंडेकी अवस्थासेही बहुत छोटे घरमें रहती हैं इस कारण इनका शरीर ठीक बढ़ने नहीं पाता। मधुके छत्ते में इन्हींकी संख्या अधिक होती है, अक्सर इन मक्खियोंकी संख्या १२००० से २०००० तक हुआ करती है; किसी किसी बड़ेछत्तेमें ६०००० कामकाजी मक्खियां भी देखीगई हैं। देखनेमें छोटी होनेपर भी य समाज का प्राण हैं। मधुसंचय, शिशु प्रतिपालन, गृह निर्माण प्रभृति सब काम इन्हींके द्वारा सम्पादित होते हैं। प्राचीन कालमें प्राणी तत्व वेत्तागण कामकाजियों को नपुंसक समझते किन्तु अब सिद्धान्तहुआ है कि यह अपूर्णअङ्ग वालीस्त्री जातिकी पहलेही कहागया है कि रानीकी अकालमृत्यु होनेपर कामकाजी मक्खियां कुछ कामकाजी अंडोंको तेजस्कर खाद्य विशेष द्वारा पोषण करके उन्हीं को रानी बनाती हैं। इससे स्पष्टहै कि कामकाजी ... जातिकी हैं।

... और मधु मिलाहुआ परागही मधुमक्खिका का ... है। किन्तु बारहों महीने मकरन्द वाला पू... पायाजाता; इसी मधुमक्खियां, स्वभावशः अधिक

फूलके मौसिम में दुर्दिनके लिये विशेषकर जाड़ेके लिये जहांतक मिलता है मधु संचय कर रखती हैं। ग्रीष्म ऋतुही मधु बटोरने का प्रधान समय है। मधुमक्खियां यद्यपि प्रायः सब फूलोंसे मधु लेती हैं तथापि कोई कोई फूल उनको बहुत पसन्द है ; कोबी जैसे सब तरहके साग (कोबी, सरसों, मूली, शलगम इत्यादि) सफेद तीन पत्ते (white clover) थाइम (thyme) स्ट्रोबिलेन्थिस (strobi lanthes) इत्यादि के फूलही भारत वर्षकी मधु मक्खियों को अधिक पसन्द हैं ; जहां यह सब फूल बहुतायत से मिलते हैं वहां मधुछत्तों की संख्या अधिक होती है और वहां का मधु भी बढ़िया होता है। मधुमक्खियों की मधु और फूलकी रज संग्रह की रीति बड़ी विचित्र है। जिस फूल से मधु लेना होता है, मधुमक्खियां पहले उस फूल के ऊपर अच्छी तरह जमकर बैठ जाती हैं ; फिर अपने लम्बे पतले सूंड़से फूलको केशर छेदकर मधु खींचने लगती हैं ; जबतक उसमें एक बूंद भी मकरंद रहता है तबतक उसे छोड़कर दूसरे फूलपर नहीं जातीं। मधु पहले जीभसेही संग्रहीत होता है। मधुमक्खियों की जीभमें केवल आस्वादनही नहीं है उसमें और भी एक विशेष गुण देखाजाता है। वह अपनी अपनी इच्छानुसार अपनी अपनी जीभोंको फुलाकर थैली बनासकती हैं और उन्हीं थैलियोंमें कामकाजी मक्खियां पहले मधु बटोरती हैं। पीछे उसे निगलजाती हैं ; निगलजानेपर वह मधु संचय के निमित्त निर्दिष्ट पेटकी पहली थैलीमें जाता है। यह थैली निगड़ूबर या रानीके पेटमें नहीं देखी जाती। वहां से थोड़ासा मकरंद शरीरपोषणके लिये पाकाशयमें जाता है ; शेष भाग को कामकाजी मक्खियां छत्तेमें आकर उगलकर वहांकी रखवाली कामकाजी मक्खियोंके मूंहमें छोड़ देती हैं। वह उसमें अपना अपना पेट भरकर शेषभाग निर्दिष्ट खन्नोंमें संचय कर रखती हैं; कामकाजी मक्खियां बादर इन सब मधुपूर्ण घरके दरवाजोंको मोम से अच्छीतरह बन्द करदेती हैं। फूलसे जब पराग लेना होताहै

तब कामकाजी मक्खियां पहले अपने पैरके कड़े रोमोंद्वारा वे
रेणु एक जगह बटोरती हैं ; पीछे ठुड्डी और आगेके दो पैरों
उसे छोटी छोटी गोलियोंकी तरह बनाकर पिछले पैरोंमें सटे
रेणुसंग्रहकी थैलीमें डालती जाती हैं। कामकाजियोंकी
थैलियोंका ऊपरी भाग मुलायम और सफेद और भीत
भाग छोटे छोटे रोमोंसे ढका रहता है ; इन रोमोंके का
ही मक्खीके उड़ते समय थैलीसे जराभी रेणु गिरने नहीं पाती।
यह ऐसी सफाई वाज होती हैं कि पराग लेते समय पेट और
में जो चूर्ण लगजाता है उसेभी अच्छीतरह झाड़कर डलिया
रज संग्रह की थैलीमें रखलेती हैं, जराभी बरबाद नहीं होनेदेतीं।
छत्तेमें जैसे शिशु पालनके लिये तीन और मधुसञ्चयके लिये
अलग घर बने होते हैं वैसेही रजकी हिफाजत के लिये भी
घर देखाजाता है दोनों थैलियां रजसे भरजाने पर कामका
मक्खियां छत्तेको लौट आती हैं। यहां कामकाजियोंका एक
उनसे पराग लेकर निर्दिष्ट स्थानमें रखदेता है। पराग
कर बच्चोंके खानेमेंही खर्च होता है।

कामकाजी मक्खियोंकी मुख्य दो श्रेणी होती हैं। जो
बगीचेमें जाकर फूलोंसे मधु और पराग बटोरती हैं और
बनाकर छत्ता बनानेमें सहायता करती हैं उनको "मोम
वाली" (Wax-makers) कहते हैं ; और जो साफ कर
पालने और घर बनानेमें लगी रहती हैं उनको दाई (Nur
कहते हैं दाइयां भी काम पड़नेपर थोड़ा बहुत
बनालेती हैं।

मधुका छत्ता।

मधुमक्खियोंकी छत्ता बनानेकी विचित्र बुद्धि देखनेसे दंग
रह जाना पड़ता है और विस्मय से भरजाता है; तुच्छ कीट जातिको
[illegible] संस्कार प्रणाली देखकर सर्वसंस्कार दाता
[illegible] ईश्वरके अस्तित्वमें किसको संदेह न होगी। प्राचीन कालके

व मनुष्य जाति पहाड़की गुफाओं में या पत्तोंके झोपड़ों में
स करके सूर्यकी धूप, वर्षाकी मूसल धारा और जाड़ेकी दांत
टाकटसे किसीतरह प्राण बचातीथी उस समय मधुमक्षिका छत्ता
नानेमें जो कौशल दिखलाती थी आज दिन भी उसका वह
ौशल वैसाही है। आज दिनभी क्या सुसभ्य युरोप क्या बिया
न अफरीका क्या पूर्व गौरव गर्वित भारतके नीलगिरि अथवा
हिमालय पर्वतकी ऊंची चोटी सर्वत्रही मधुमक्षिका एक ढङ्गसे
ाम करती है। जुदा जुदा स्थानोंमें मधुके छत्तेका आकार यद्यपि
दा जुदा मालूम देता है किन्तु हरेक छत्ता षट्कोण होता है,
ौर उसके बनाने की प्रणाली, मधुसञ्चय और मोम बनानेकी
ाति सब जगह एक समान है। षटकोणाकार घर बनानेमें कितना
मीता है यह विषय गणित शास्त्रकी उन्नतिके साथ२ लगभग आधी
ताब्दीहुई, युरोपके पण्डितोंको समझमें आया है; किन्तु मधुमक्षिका
कड़ोंवर्ष पहलेसे ऐसा घर बनाती आती है। गणित विद्याविशारद
पण्डितोंने यह निश्चय किया है कि षट्कोणाकार घर बनानेसे किसी
निर्दिष्ट स्थानमें कमपरिश्रम और कम सामानमें अधिक घर तय्यार
हो सकते हैं। मधुमक्खीको यह कैसे मालूम हुआ? किसने उसे
यह बात सिखाई? यह क्या दैव घटना है या मधुमक्षिकाकी मान्-
सिक उन्नतिका चरम फल है? ईश्वरका दिया स्वाभाविक संस्कार
ही इसका एक मात्र कारण है। जैसे संस्कार वश माता अपने
सद्यप्रसूत बच्चेपर स्नेह करती है जैसे अंडा देतेही चिड़िया
खाना पीना छोड़कर बच्चे निकलनेतक उसपर बैठी रहती है
जैसे तुरन्तका जन्माहुआ बच्चा माताकी छाती की ओर दौड़ता है,
और जैसे चिड़िया आसन्न प्रसवा होनेपर घोंसला बनाने लगती है
वैसेही मधुमक्षिका भी ईश्वर प्रदत्त संस्कार के वशीभूत होकर
षट्कोण घर बनाया करती है।

छत्तेके भीतरी भागकी ओर दृष्टिफेरनेसे ज्ञानी अज्ञानी सबको
विस्मित होनापड़ेगा। दर्शक अपने सामने एक सुन्दर क्षुद्रनगरी देखेगा

और द्विवेगाकि अच्छे अच्छे षट्‌कोण घरोंकी कतार खड़ी है, वे बीचमें समानान्तर और सीधी सड़कें निकली हैं। मनुष्य समाजके प्रधान, प्रधान, नगरोंकी भांति वहां कहीं माल असबाब हे घरोंकी कतार कहीं साधारण प्रजाके छोटे छोटे घर कहीं आलीशान बादशाहीमहल देखकर उसको आश्चर्य होता मधुमल, या, मोम छत्ता बनानेका मुख्य सामान है; विश्व शास्त्रके ज्ञानाभिमानी विद्वानों को आजतक मोम बना विद्या नहीं आई; वरंच मधुमक्षिका की मोम बनानेकी प्रणा विषयमें पण्डितोंका एक मत नहीं है। किसी कीरायमें, मक्षिका पराग खाती है और यह परागही उसके पेटमें मोम जाता है।, हिउबर, हण्टर आदि कुछ प्राणितत्व वेत्ताओंकी है कि मधु सिही मधुमक्षिका के पेटमें मोम तय्यार होता है; उन रायमें पराग केवल बच्चोंके खानेमें खर्च होता है। पूरी उमर मक्खियां केवल मधु पीकरही जीती हैं। जोहो, कोई बड़ाभा मैमारभी खाली मोम से मधुमक्षिका की तरह कभी घर नहीं ब सकता।, किन्तु तुच्छ मधुमक्षिका दो छोटे दांतों और टांगों सहायता से सहजमें छत्ता बनालेती है। बहुत पुराने समयसे आजतक प्राणितत्व वेत्ताओंने बराबर स्वीकार किया है कि मधु छत्ता बनाना और मोम तय्यार करना बड़ाही विस्मयकारक और मनुष्योंकी क्षमतासे परे है।

कुछ देरतक ध्यानपूर्वक मधुकाछत्ता देखनेसे स्पष्ट विदित होगा कि मक्खियोंने कम जगहमें कम परिश्रम करके कम मोमसे अनेक घर बनाकर कमाल किया है। मोम सहजमें मिलनेकी चीज नहीं है, इसलिये थोड़ेसे मोमसे जितनेही अधिक घर बनें मक्षिका समाजके लिये उतनाही अच्छा है। संस्कारवश वह यही उत्तम उपाय से कामलेती हैं; महा प्रतिभाशाली ज्ञानाभिमानी मनुष्य की रायमें भी उससे बढ़कर दूसरा उपाय नहीं है। यद भाव घटेहुए अनेक घर बनाना हो तो त्रिकोण, चतुष्कोण अष्ट

षट्कोण घर बनानाही उत्तम है; क्योंकि गोलाकार या और किसी आकारका घर बनानेमें अधिक स्थान व्यर्थ पड़ा रहजायगा, इससे बहुतसा मोमभी व्यर्थ खराब होगा। इसलिये उक्त तीन आकारों मेंसे किसी एक आकार का घर मधुमक्षिका को बनाना होगा। अब देखना चाहिये कि उक्त तीन प्रकार के घरोंमें किस प्रकार का घर मधुमक्षिकाके विशेष उपयोगी होसकता है और कम खर्चमें बन सकता है। मधुमक्खी की शकल लम्बाई में अधिक गोल होती है; इसलिये त्रिकोण या चारकोण घरके कोनेके निकट मक्खीके आने जानेके लियेअधिक जगह किसी काम न आवेगी। षट्कोण घर त्रिकोण और चतुष्कोण घरकी अपेक्षा लम्बाईमें अधिक गोलाकार होता है। अतएव छः कोनेका घरही मधुमक्षिका के लिये कमखर्च बालानशीन है। कैसे आश्चर्यकी बात है! मधुमक्खियां स्वभावतः त्रिकोण या चतुष्कोण घर न बनाकर षट्कोण घरही बनाती हैं। घर एक तरफा होनेसे हरेक घरके पीछे एक दीवार दरकार होती; किन्तु सब घर छत्तेके दोनों तरफ बनते हैं इससे दोदो घर के बीच एक एक दीवार दरकार होतीहै; यह दीवार सीधी होनेसे टूटजानेका डर रहता; इसीसे मधुमक्खियां सब घरोंका पिछला भाग पिरामिडके आकार का बनाती हैं; इसमें ज़राभी जगह फ़ुज़ूल पड़ी नहीं रहती अथच दीवार खूब मज़बूत होती है। मधुमक्खियां और एक कामकरती हैं; सटे हुए दो घरोंके बीचकी दीवार बहुत पतली बनाती हैं; किन्तु ऐसा होनेसे आते जाते समय उनके मुंहकी ठेस लगनेसे घरका दरवाज़ा सहजमें टूट सकताहै; इसीलिये वह हरेक घरका दरवाज़ा भीतरकी अपेक्षा अधिक मोटा बनाती हैं इससे सब मोटा करनेमें जितना मोम लगता उससे बहुत कम लगता है और घरभी मज़बूत होता है। इससे बढ़कर औरक्या आश्चर्यकी बात होसकती है! पाठक! मधुमक्षिका ने तो गणितशास्त्र नहीं पढ़ाहै तब इस क्योंकर ऐसे भामोंका काम करती है?

घर बनानेके समय पहले मोम बनानेवाली कामकाजी मक्खियाँ कार्य्य प्रारम्भ करती हैं। भरपेट मधु पीकर हरेक मक्खी अपने सामनेके दो पैरोंसे अपने ठीक ऊपर बैठी हुई मक्खीके पिछले दो पैरोंको पकड़कर लम्बीही लटक जाती है। यों २४ घंटेतक चुप चाप लटकी रहती है। पीछे उनमेंसे एक उड़कर छत्तेके ऊपर जाती है और वहां लगभग एक इंच व्यासकी जगह को झाड़बुहार देती है। फिर एक, पिछले दो पैरोंसे पेटके एक खास हिस्सेसे एकतरहकी निरंग साफ चीज निकालकर अपने मुंहमें लेती है; मुंहसे उस चीजको सामनेके दोपैरोंसे पकड़कर जीभ और होंठकी सहायता से फीतेकी तरह बनाडालती है। पीछे मुंहकी लारमें उसे अच्छीतरह मिलादेनेसे असली मोम तय्यार होजाता है। लारसे मिलाकर इस प्रकार मोम न बनानेसे उस ची कुछ काम न होता। मोम बनाकर वह साफकी हुई जगह पोत देती है; इस तरह सब मक्खियां एकएककरके अपनाअपना मोम यथास्थान पोत देती हैं। अगर कोई भूलसे अपना मो किसी और जगह रखदे तो दूसरी मक्खी जरूर उसे लेकर उचि स्थानपर रखदेगी। इसतरह मोम बनानेवाली मक्खियां आध लम्बी एक छठाईंच ऊंची और एक चौबीसवां इंच मोटी मो की दीवार बनाती हैं। दीवारबनतेही दाइयां घरबनाने आती हैं पहले एक दाई दीवारकेपास आकर उसके बीचसे मोमलेकर दो तरफ लगाने लगती है। कई मिनट काम करके वह चलीजाती और दूसरी दाई उस कामपर आती है; यों बीस दाइयोंके परिश्रम बाद वह दीवार पिरामिडकी शकलकी होजाती है। इसप्रकार दाइयां घरबनानेमें लगी रहती हैं तब मोम बनानेवाली मक्खि फिर अपने काममें लगकर उस दीवारकी चारोंतरफ बढ़ाती रह हैं। जब एक तरहके घर बनजाते हैं तब दाइयां उसी अच्छे

और श्रमविभाग द्वारा थोड़े समयमें बड़े बड़े छत्ते बनाडालती हैं। ११ इंच लम्बा ७ इंच चौड़ा चार हजार घर का छत्ता बनानेमें २४ घंटेसे अधिक समय नहीं लगता।

कामकाजी नर और राजकुमारियोंके अण्डों लिये इनके छत्तेमें तीन तरह के घर होते हैं। कामकाजी अण्डोंके घर सबसे छोटे और सबसे अधिक होते हैं। नर अण्डोंके घर उनसे बड़े और अक्सर छत्तेके बीचमें या अगल बगल होते हैं। राजअंडेके संख्यानुसार उनके लिये सबसे बड़े घर तय्यार होते हैं। इसके सिवा मधु और पराग रखनेके लिये छत्तेमें अनेक बड़े भाण्डार घर भी होते हैं।

मक्खियां प्रायः भवतरहकी जगहोंमें छत्ते बनाती हैं। क्या हिमालय या नीलगिरि की बीहड़ ऊंची चोटी क्या भयानक शेर बाघोंके रहने योग्य बन क्या निर्जन स्थानके ऊंचे पेड़की डालियों पर क्या दरिद्रके मचानपर जमीहुई लताओंपर क्या गृहस्थकी खिड़कियोंमें और क्या तालाबमें खिलेहुए कमलकी डंटियोंपर सर्वत्र ही मधुका छत्ता दृष्टिगोचर होता है। किसी किसी किस्मकी मक्खियोंको आदमियोंकी बस्ती इतनी प्यारीहोती है कि बार बार मधु खोनेपर भी वह आदमियोंकी बस्ती नहीं छोड़तीं। और एक किस्म की मक्खियां अन्य जीवोंके न आनेयोग्य निर्जन स्थानमें ही छत्ता लगाना पसन्द करती हैं। पेड़का कोटर, टहनी और पहाड़की गुफा इन्हीं तीन जगहों को वह छत्तेकेलिये पसन्द करती हैं। पश्चिम भारतमें एक किस्मकी मक्खियां हैं जो कभी एक जगह एकसे अधिक छत्ता नहीं बनातीं। उनकी ज्यों ज्यों संख्या बढ़ती जाती है त्यों त्यों वह छत्ते का आकार बढ़ाती हैं। कुर्ग प्रदेशमें कहीं कहीं बीसे अधिक छत्ते एक पेड़पर देखेजाते हैं। गंजाममें (मन्द्राज) एक किस्मकी मक्खियां एक एक जगह सात सात छत्ते बनाती हैं इसलिये उस देशके निवासी उनको सप्तपुरी मधुमक्खी ? कहते हैं।

लगाती हैं। वाइनद नामक स्थानमें नदीकी तरफ टेढे मेढे ऊंचे पहाड़की चोटी या अनेक शाखा वाले वृक्षोंकी कतार को छत्ता बनानेके लिये पसन्द करती हैं। जैसे जुदा जुदा स्थानोंमें छत्तोंकी संख्या जुदा जुदा होती है वैसेही छत्तोंका आकार और परिमाणभी जुदा जुदा स्थानोंमें जुदाजुदा होता है। वास्तवमें मधुछत्ता त्रिकोण, गोलाकार, अर्द्धगोलाकार, अण्डाकृति इत्यादि सब आकारके देखे गये हैं। गंजाममें चौंसलेकी भांति एक प्रकारका छत्ता होता है वहांके निवासी उसे "हाथी कान" कहते हैं। छत्ते बहुत बड़े भी होते हैं और बहुत छोटेभी। भारतवर्षमें जगह जगह बहुत बड़ेबड़े छत्तेभी पायेजाते हैं। दक्षिण करनूल विभागमें ४ फुट लम्बा १ फुट चौड़ा और एकफुट गहरा एक प्रकार का छत्ता देखाजाता है। ऐसे हरेक छत्तेमें २ मन शहद और १० सेर मोम पायाजाता है। तिनासरममें इनसे बड़ा छत्ताभी देखागया है, वह लम्बाई में ७ फुट और चौड़ाई में ६॥ फुट होता है। उसमेंसे बहुत ज्यादा मधु और मोम निकलता है।

हरेक छत्तेमें घर समानान्तर होते हैं। उनमें आनेजानेके लिये सीधे रास्तेभी होते हैं; इनरास्तोंसे होकर मक्खियां एक से दूसरे घरमें या छत्तेसे बाहर जासकती हैं। यह रास्ते दोदो पांतिके बीचमें होते हैं और इतने चौड़े होते हैं कि दोमक्खियां एक बार एक साथ आजासकती हैं। यह समानान्तर सड़कें लम्बाईमें स्थित कुछ सड़कोंसे जगह जगह मिलीहोती हैं। यह सब मक्खिका महानगरीकी सदर सड़कें हैं। सब सभ्य देशोंकी सदर सड़कों की भांति इनसड़कों पर भी सदा भीड़ रहती है; किसी सड़कमें काम करने वाली मक्खियां घर बनाने का सामान लिये जाती हैं, किसीमें मधु लाने वाली मक्खियां मधुलिये मधु भाण्डार की ओर जाती हैं, किसीमें कामकाजी मक्खियों का खाद्य सामग्री का भाण्डार लिये जाता है। जगह जगह सिपा-
हियोंके सदृश चौकीदार भी [illegible] रहे हैं। [illegible]

सभ्य देशोंके राज मार्गोंसे कई बातोंमें इस कीट जातिके राजपथ बहुत अच्छे हैं। छत्तेके सदरास्ते सीधे, चौड़े और साफ होते हैं; रास्तेके दोनो तरफ सुन्दर बनेहुए इनघरे घरोंको पांति देखकर मनमुग्ध होजाता है। किन्तु प्रश्न यह है कि इस सभ्यताभिमानी अंगरेजोंकी राजधानी सुन्दर सुन्दर इमारतों वाली कलकत्तानगरी की कितनी सड़कें सीधी चौड़ी और दुर्गन्धि रहित हैं? ऐसी कितनी सड़कें हैं जिधरसे जाने पर घुटने तक कीचड़ न लगजाय या दुर्गन्धिसे नाक न बन्द करना पड़े? हमारा अभिप्राय कलकत्तेके उत्तरीय विभागसे है।

अन्यान्य कीड़ोंकी तरह मधुमक्खी की देहमें एक बूंदभी खून नहीं है। तिसपरभी वह अन्यान्य कीड़ोंकी भांति सांस लिये बिना पलभरभी नहीं जीसकती; अस्तु उनका वायुकी मक्खियोंकी देह रक्षाकेलियेभी अत्यन्त आवश्यकता है। कामकाजी ऐसी होशियारीसे छत्ता बनाती है कि उसमें भलीभांति हवा आजासकती है कुछ रुकावट नहीं होती। कितने आदमी हवादार रास्ता छोड़ कर घर बनाते हैं?

शिशुपालन।

बच्चेके ऊपर माताकाप्रेम प्राय, सब जीवोंमेंपायाजाता है; खूंखार बाघिन भी जीजानसे अपनाप्राय शावकका पालन करती है। किन्तु मक्खियों की दुनियाका नियम बिलकुल अलग और बड़ाही विचित्र है। रानी अंडे देकरही निश्चन्त होजाती है; जननेके बाद उसको और कोई कष्ट भोगना नहीं पड़ता; अंडे सेना, उसपर गर्मी पहुंचाना बच्चे को खिलाना पिलाना आदि सब माता का काम है किन्तु यह सब काम कामकाजी ही बड़े यत्न से करती हैं। रानीका बच्चोंपर माताके योग्य स्नेह दिखाना तो दूर रहे, वह मधुकी भांति अपूर्वायवता, अलहदा राजकुमारियों को मारडालने के लिये सदा चेष्टा करती है। शिशुपालनके विषयमें

मिक्षामिनीमिर्मांकी उपमा दीजाती है। गर्भधारणका बोझ दूसरेके सिर नहीं पटका जासकता इसीसे वह गर्मी यंत्रणा सहती हैं। किन्तु सन्तान जन्मतेही उसकोकिसी नीच जातिकी दूधपिलाई दाई के हवाले करके निश्चिन्त होजाती है। सुतरां सन्तान दाईका दूध पीकर उसीका चाल चलन सीखकर नीचता ग्रहण करती है। स्वाभाविक नियमके विरुद्धाचरण करनेसे उसका फल भोगनाही पड़ेगा। ईश्वरने मनुष्यकी ऐसी सृष्टि की है कि माताके दूधसे बढ़कर शिशुके लिये और कोई खाने पीनेकी चीज उपयोगी और पुष्ट हो नहीं सकती इसलिये माताका दूध छोड़कर शिशुको दूसरे का दूध पिलाना बहुत अनुचित है।

किन्तु जगत् पिताने मक्खीरानीको शिशुके लालन पालन का भार नहीं सौंपा है। रानी गर्भावस्थामें अधिक दूर तक नहीं उड़ सकती और कभी कभी तो बिल्कुल ही नहीं उड़ सकती, सो शिशु-पालन तो दूर रहा, रानीको अक्सर अपनाही आहार जुटाने की सामर्थ्य नहीं रहती, इसीसे मालूमहोता है कि दूरदर्शी जगदीश्वरने रानी और बच्चेके आहारादि जुटानेका भार राजभक्त परिश्रमी कामकाजियों के हाथ सौंपा है। निराश्रय बच्चे यद्यपि गर्भधारिणी के स्नेहसे वञ्चित होते हैं तथापि इससे उनका कुछ नुकसान नहीं होता; सैकड़ों कामकाजी मक्खियां दाई बनकर माताकी जगह उनका लालन पालन करती हैं, उनको सब जरूरत बिना विलम्ब पूरी करती हैं और रक्षक बनकर यथाशक्ति उनको गर्भधारिणी के निठुर आक्रमणसे भी बचाती हैं। निःस्वार्थ परोपकार का इससे बढ़कर सुन्दर उदाहरण और क्या होसकता है।

दाइयां बच्चोंको जिसप्रकार अधिक गर्मी पहुंचाती हैं वह विशेष आश्चर्य जनक है। सब लोग जानते हैं कि पक्षिगें खाना पीना भूलकर बराबर अण्डोंके ऊपर बैठेरहते हैं और उनको अधिक गर्म रखते हैं। किन्तु मक्खियोंके अण्डोंके ऊपर इस

प्रकार बैठे रहनेसे उनको विशेष गर्मी नहीं पहुँचती। दाइयां स्वाभाविक संस्कार-वश अधिक गर्मी पहुँचानेकेलिये एक दूसरा मगर सुन्दर उपाय अवलम्बन करती हैं। सांसलेने से वायुका अम्लजनक वाष्प (अक्सिजन) शरीरके अंगार और उदजनकवाष्पसे मिलजाती है अंगारके साथ अम्लजनक वाष्प मिलनेसे जो गर्मी उत्पन्न होती है, साधारण पत्थरके कोयलेकी आगकी तरफ दृष्टि करनेसे स्पष्ट मालूम होगी। अतएव सांसलेने और छोड़ने से शरीरमें गर्मीका संचार होता है इसमें कुछ सन्देह नहीं; और इसी कारण सांसलेने की क्रिया जितनी जल्दी जल्दी होगी शरीरमें उतनीही अधिक गर्मी बढ़ने की सम्भावना है। जब मक्खियोंके बच्चे बढ़नेकी हालतमें रहते हैं तब एक एक दाई एक एक के घरके ऊपर बराबर बैठ कर खूब जोरसे जल्दी जल्दी सांसलेती है। अपने शरीरमें गर्मी बढ़ाकर उससे बच्चे के शरीरकी गर्मी बढ़ानाही उसका उद्देश्य है। इसप्रकार लगातार आठ या दस घण्टेतक परिश्रम करनेसे जब दाईका शरीर खूब गर्म और पसीने से भीग जाता है तब वह शान्त होकर नियमित चालसे सांस लेने लगती है। अन्तमें जब वह थक जाती है तो एक दूसरी दाई आकर उसकी जगह पर बैठती है और वह छुट्टी पाती है। प्राणितत्त्व वेत्ता निउपोर्ट साहबने इस बातकी अच्छी तरह परीक्षाकीथी कि दाइयां इसप्रकार कोशिश बच्चेके शरीरमें कहां तक गर्मी पहुँचा सकती हैं। बच्चेके जिन घरोंमें दाई मक्खियां पूर्वोक्त प्रकारसे गर्मी नहींपहुँचाती थीं उन्होंने पहले उन्हीं घरोंमें तापमान-यंत्र लगाकर देखाकि पारा ८०.२ डिग्रीपर है। पीछे जिन बच्चोंके घरोंमें दाइयां गर्मी पैदा करती थीं उनमें से एकमें थर्मामिटर लगाया। कुछ देर बाद पारा अपनी जगह से धीरे धीरे ऊपर को उठने लगा और अन्तमें ९२.५ डिगरीपर जाकर ठहर गया। इससे उनको स्पष्ट विदित हुआ कि दाई मक्खीने अपने सांस की गति बढ़ाकर बच्चेके शरीरमें

छत्तेमें गर्मी बढ़कर वायुकी चाल रुकजानेसे मधुमक्खियां कभी कभी कुछदेरकेलिये वहांसे अलग होजाती हैं। किन्तु बहुधा वह अपना अपना काम छोड़कर अन्यत्र जानेके बदले वायु सञ्चालन करनेके लिये एक अद्भुत उपाय करती हैं। ठंढ लाने और वायु राशिको चलानेके लिये कुछ मक्खियां लगातार पंख हिलाती हैं; जब वह हिलाते हिलाते थकजाती हैं तो उनकी जगह एक दूसरा दल आजाता है। इस तरह वह पंख हिलाकर छत्तेमें हवा को चलायमान करदेती हैं। हिउवरसाहबने छत्तेमें कृत्रिम उपाय से गर्मी पहुंचाकर देखाहै कि छत्तेमें जितनीही ज्यादा गर्मी बढ़ती है उतनी ही पंख हिलाने वाली मक्खियों की संख्या अधिक होने लगती है और अन्तमें छत्तेकी सब मक्खियां गर्मी घटानेकेलिये खूब जोरसे पंख हिला हिला कर हवाको चलाती हैं।

मक्खियोंकी इन्द्रियां।

मधुमक्खियोंकी दृष्टि बड़ी तेज होती है। मधुके लिये छत्तेसे बहुत दूर निकल जानेपर भी उनको वहांसे छत्ता दिखाई देता है और बिना विलम्ब सीधे रास्ते छत्तेको वह लौट आती हैं; कभी रास्ता भूलकर विह्वल नहीं बनतीं। कोई कोई कहते हैं कि उनको पासकी चीजें अच्छीतरह नहीं सूझतीं। इसीलिये वह जब छत्तेके पास रहती हैं तब उनको छत्तेका दरवाजा सहजमें नहीं मिलता। किन्तु उड़कर कुछदूर आनेसे वह उन्हें साफ दिखाई देनेलगता है।

इनकी स्पर्श शक्तिभी नजरकी भांति खूब तेज है। छत्तेके भीतर अंधेरी जगह में केवल स्पर्श शक्तिके सहारेही यह घर बनाना, मधु सञ्चय, रानीकी सेवा जुदा जुदा उमरके बच्चोंको जुदा जुदा खुराक खानेदेना इत्यादिकाम भलीभांति करती हैं। इनकी सूंघनेकी शक्ति भी कम नहीं है। अगर छत्तेसे बहुत दूर भी बढ़िया मधुवाले फूल खिले हों तो भी वह उसकी तेज महक झट जानजाती हैं और बिना विलम्ब उसको लूट लाती हैं। मक्खियां [illegible] मनुष्यकी भांति मनोहर रूप या सुन्दर चेहरा देखकर मोहित नहीं होतीं,

मकरन्द रूपीसह यही उनके उन्नत हृदय को भाकर्षित करता है। फूल देखने में चाहे जितना मनोहर क्यों न हो उत्तम मधुयुक्त न होनेसे मधुमक्खिका उसकी ओर देखेगी भी नहीं। और मधु अगर बहुत खराब और दुर्गम स्थानमें रखाहो तो भी अध्यवसायी मक्खियां उसे लेभानेकी जी जानसे चेष्टा करेंगी। एकबार विख्यात गणितत्वत्वित् ह्विउवर साहबने एक बाक्समें थोड़ा मधु रखकर उसमें दो चार छेदकर दिये और छेदोंको कागज के किवाडसे इसतरह बन्दकिया कि जिसमें मक्खियां उनसबको सहजमें हटा-कर भीतर घुससकें। उन्होंने बाक्सको एक छतसे २०० गजके फासिलेपर रखा। आधे घण्टेमें मधुमक्खियोंने उसे देखलिया और उनका एकझुण्ड वहां पहुंचकर मानो भीतर जानेका रास्ता पानेकेलिये उसके चारोंओर फिरनेलगा। अन्तमें किवाड़ मिलगये और उन्हें अलग करके वह आनन्दसे मधु चटकर गया। सूंघनेकी शक्ति अधिक तेज न होनेसे मक्खियां दोसौ गजके फासिलेपर रखे हुए किवाड़ बन्द सन्दूकके भीतर के मधुका गन्ध कैसे पासकतीं? इनकी आंखें भी बड़ीतेज शक्ति रखती है वह चुन चुनकर सबसे बढ़िया फूलोंकाही मधु लेती है। लोनियस वनिट आदि कई विद्वानोंकी रायमें मधुमक्खिका के कान नहीं होते। किन्तु डाक्टर बेवन (Bevan) और डाक्टर लार्डनरके (Lardner) मतसे और और जीवोंकी भांति इनकेभी कान होते हैं। लार्डनर साहबका कथन है कि छत्तेके किसी तरफ किसी तरहका शब्द होनेसे सखियों सहित रानी तुरन्त वहां पहुंचती है और शब्द होनेका कारण ढूंढ़-ती है। किसी किसी की राय है कि मक्खी के तीक्ष्ण स्मरण शक्तिभी है।

मक्खियोंकी सफाई।

पाठकगण शायद कामकाजियोंके श्रमविभाग को कार्य्य तत्प-रता और परिश्रम...

वास्तवमें मधुमक्षिकाका इतिहास बड़ा कौतूहल जनक और
द्देग दायक है। जब कामकाजी मकरन्द लेकर छत्तेकी तरफ
हैं उस समय अगर कोई भूखी मक्खी उनके पास आजाय
सादर इसको मधु देकर अतिथिसत्कार करती हैं। इनको
कभी जल पीतेभी देखा गया है। जब वह छत्तेमें मधु
व्यस्त रहती हैं तब प्रतिदिन सन्ध्याके तीन या चार बजे क्रम
दो चार चार मक्खियां आहार ढूढ़नेके लिये बाहर निक
और सन्ध्या होनेसे पहलेही सब लौट आती हैं। किसी
फूलका मधु पीकर मधु मक्खियां कभी कभी मतवाली हो
हैं। एक साहबने अमेरिकाके एक वैज्ञानिक पत्रमें लि
कि हमारे घरमें कई एक मिल्कवीड (Milk Weed) वृक्ष
के फूलों पर बहुधा मधु मक्खियां बैठा करती हैं। जरा
देखनेपर कुछ मक्खियां चञ्चल और कुछ जड़की तरह
मालूम होती हैं। परन्तु जो मक्खी जितनीही ज्यादा
फूलका रस पीती है उसकी शिथिलता उतनीही बढ़ती जा
उक्त पत्रके सम्पादकने इसमतका समर्थन किया था, इस
विदित होता है कि मनुष्य समाजकी भांति मक्षिका समा
मतवालोंका अभाव नहीं है। इन मतवाली मक्खियोंसे
कितना अनिष्ट होता है इसका अभी तक पता नहीं लगा
मक्खियां सफाईके लिये बहुत मशहूर हैं उनके घर
रास्तोंमें जराभी धूल नहीं; शरीरमें कुछ मैल नहीं होता। या
हैं कि हिन्दुस्थानी आदमियोंका शरीर जैसा साफ होता
घर नहीं, और अंगरेजोंका घर बहुत साफ और सजा धु
पर भी शरीर वैसा साफ नहीं होता। यह बात एकदम
होने परभी बिल्कुल झूठ नहीं है। जोहो, मक्खियोंक
और घर दोनों साफ होते हैं। कामकाजी किसी तरहका
या कूड़ा करकंट क्षणभरभी घरके पास नहीं रहने देतीं
उसे दूर फेंक आती हैं। मल मूत्रादि त्याग करना हो

छत्तेसे बाहर चली जाती हैं। जब कोई मक्खी पूरी अवस्थाको पाकर अन्डे से बाहर निकलती है तब उसके पास तीन कामकाजी आती हैं। पहली उसको पकड़कर छत्ते के बाहर लेजाती है, दूसरी उसके शरीरसे चमड़ेकी भिल्ली छुड़ादेती है और तीसरी उसका शरीर झाड़पोंछकर साफ कर देती है। अगर कोई शत्रु छत्ते में चला आवेतो मक्खियां डंक मारकर उसीदम उसकी जानले लेती हैं और उसकी लाश कहीं दूर फेंक आती हैं। अगर लाश भारी होनेके कारण उनसे न उठसके तो कामकाजी एक विचित्र उपाय काममें लाती हैं। शारीरिक विद्याके पण्डितोंका कथन है कि अगर कोई बाहिरी पदार्थ किसी कारणसे शरीरमें घुसजाय और किसी प्रकार बाहर न निकले तो शरीरके विचित्र नियमसे वह पदार्थ स्थान भेद से अस्थि उपास्थि या मांसके लोंदेसे ढक जाता है, ऐसा होनेसे उससे उसके आसपासके शारीरिक यंत्रादिको कुछ नुकसान नहीं पहुंचता। स्वभाव पण्डित मक्खियां यही उपाय करती हैं। अगर कोई घोंघा छत्तेमें घुसजाय तो कई मक्खियां मिलकर उसे मारडालती हैं और उसकी देह उठानेमें असमर्थ होकर उसमें अच्छीतरह पेड़का दूध लगादेती हैं। इसतरह मक्षिका समाज सड़े घोंघोंकी विषैली बदबूसे रक्षा पाती है। किन्तु अगर घोंघा प्राण भयसे अपना शरीर अपने खोखलेमें छिपाले तो मक्खियां उसका मुंह हत्तके रससे बन्द करदेती हैं इससे वह उसी में दम घुटकर मरजाता है। मधुमक्खियां बदबूसे बचनेके लिये कितना उपाय करती हैं। मक्षिका समाजमें मोटी तनखाह का कोई हेल्थ अफसर नहीं है और म्यूनिसिपलिटी है तिसपर भी छत्ते की सफाई और पवित्रता देखकर दांतोंमें उंगली काटना पड़ती है।

क्षुद्र मधुमक्षिकाके परिश्रम की बात सुनकर मोटी तोन्द वाले आलसी और पापी मनुष्योंका सिर लज्जासे नीचा होजाना चाहिये।

[illegible]

खोजमें कमसे कम दस बार छत्ते से निकलती हैं अगर वह औसत से हरबार पौन मीलतक जाती हैं तो हरेक मक्खी दसबार जाने आनेमें कमसे कम १५ मीलका रास्ता तय करती है। इन कीड़ों की बात तो अलग रही बहुतसे मनुष्योंकेलिये यह कम परिश्रम नहीं है।

मक्खियां नम्रस्वभाव होती हैं अधिक उत्तेजित हुए बिना किसीपर हमला नहीं करतीं। विशेषकर जब इनकी औलाद बढ़ती है और वह दल बांधने लगती हैं तब सब बड़ी शान्तिके साथ रहती हैं। भारतवर्षीय मक्खियोंके सुन्दर स्वभाव की प्रशंसा अनेक अङ्गरेजोंने भी की है। रिटामाइयने शिमलामें हिन्दुस्तानी मक्खियां पालीथीं और कप्तान सडइने पहाड़ी प्रदेशमें मक्षिकालय स्थापन कियाथा। इन दोनो साहबोंने हिन्दुस्तानी मधुमक्खियोंकी बड़ी प्रशंसा की है।

कोई कोई वस्तु मधुमक्खियों को बहुत पसन्द है और किसी किसीसे इनको बड़ी घृणा है। मीठे रङ्गकी चीज इनको बहुत पसन्द है। यह किसी किसी मनुष्यको तो छत्तेके पास नहीं फटकने देतीं और किसी किसीको मधु भण्डार लूट लेजानेपर भी कुछ नहीं बोलतीं। कोई कोई कहते हैं कि किसी किसी मनुष्यके शरीरसे ऐसी बू निकलती है कि वह उसे सह नहीं सकतीं। इसी लिये उन्हीं मनुष्यों पर उनका विशेष कोप देखाजाता है। डाक्टर बेवन और फिटुरियर साहब कहते हैं कि मांस और काफी खाने वाले आदमियोंसे मक्खियोंको बहुतद्वेष है। डाक्टर बेवनने देखा है दो भाइयोंमें एकको मक्खियां छत्तेके अपने पास आनेदेती थीं किन्तु दूसरेको देखतेही आक्रमण करतीं। कप्तान साहबके बागमें आठ मक्षिकालय थे हजारों मक्खियां वहां प्रति दिन आती जातीं इधरसे अनेक आदमी आते जाते पर सबको छोड़कर मधुमक्खियां केवल माइटराको ही डंक मारतीं। इससे अनुमान होता है कि वह बदबूसे बड़ी नाराज हैं। डिजर साहबने दोघ

करके देखा है कि मधुमक्खियां अपने विषके गन्धसे अत्यन्त उत्तेजित होजाती हैं। जराभी विषकी गन्ध पातेही हजारों कामकाजी मस्त होकर बाहर निकलती हैं सामने जिसको देखती हैं उसीको डंकमारती हैं और क्रमसे मरमें अशान्ति फैलजाती है।

विश्राम लेनेका नियम।

जीव जगतमें परिश्रमके बीचबीच में विश्राम लेना आवश्यक है। कोई जीव लगातार परिश्रम नहीं करसकता। मधुमक्खियां अन्यान्य जीवोंकी भांति समय समय सोती हैं। कामकाजी लगातार परिश्रमसे थक जानेपर घरमें आकर, पन्द्रह या बीस मिनट आराम करती है ऐसी निश्चल बनकर बैठजाती है कि उसके अङ्गभङ्ग से मालूम नहीं होता वह जीती है कि मरी। केवल सांस लेनेसे शरीरकी दोनों बगल कुछ सिकुड़ते और उभरते देखीजाती है; दो पहरही इनके विश्रामका समय है। निखट्टू नर अठारह अठारह और कभी कभी बीस बीस घण्टेतक चैनसे सोते हैं। कामकाजियों की तरह वह घरके भीतर नहीं जाते। इसीसे बाहर दीवारोंपर ही पड़े रहते हैं। रानी कभी कभी मर अंडोंके घरमें मस्तक और छाती रखकर देरतक सोती है उस समय कुछ कामकाजी मक्खियां पहरी और सहेली बनकर उसके चारोंओर बैठी रहती हैं और अपने अगले दोनों पैरोंसे रानीके पेटके खुलेहुए अंश को धीरे धीरे सहलाया करती हैं। रानीको सुलानेके लिये निःस्वार्थ कामकाजियों की यह सेवा देखकर किसको आनन्द नहीं होता?

सुसभ्य मनुष्य वायुमान यंत्र के (बारामिटर) पारेका चढ़ाव उतराव देखकर अगले दिन के हवा पानीके विषयकी कुछ बात जानलेते हैं। किन्तु मधुमक्खियां संस्कार वश बिना किसी यंत्रके आगामि दिनकी अवस्था अच्छीतरह जानजाती हैं। अगले दिन

दूर नहीं जातीं; छत्तेके पासके पेड़ोंमेंही रस लेती हैं। डाक्टर इवान्स कहते हैं कि एकदिन आकाश एकदम स्वच्छ और मेघशून्य था मगर एकभी मधुमक्खी मधुके लिये बाहर नहीं निकली। इससे उनके मनमें विस्मय और सन्देह हुआ वह एक टक आकाश की ओर देखते रहे। कुछ देरमें बादलोंके छोटे छोटे टुकड़े एक तरफसे आकर आकाशमें छागये। यह देखकर साहब बहादुरको बड़ा आश्चर्य हुआ। तबसे वह मधुमक्खिका के इस संस्कार को बराबर सच मानतेथे।

मनुष्योंकी भांति मक्खियां भी जरूरत पड़नेपर उपनि (*Coloney*) बसाती हैं। पहले कहागया है कि छत्तेमें ए अधिक रानी होनेपर मक्खिका समाज घड़ी भरके लिये भी शा पूर्वक नहीं रहसकती। कभी कभो दोनों रानियोंमें तुमुल संग्र उपस्थित होता है, कभी कभी कुछ मक्खियां पुरानी रानी साथसे अन्यत्र जाकर छत्ते लगाती हैं। बहुधा पुरानी रानी बसाई हुई नई बस्तीसे नई रानीको नई बस्ती पुराने छत्ते से अधि फासिलेपर होती है, कारण यह कि कुमारी रानीकी तरह पुरा रानी बहुत दूरतक नहीं उड़सकती। इन छत्तोंकी संख्या क और फलदार पेड़ोंकी संख्यानुसार न्यूनाधिक हुआ करती है नजदीक उपनिवेश बनाने योग्य मन मुआफिक जगह न मिले तो मक्खियां ऊंची पर्वत श्रेणी और बड़ी बड़ी नदियोंको लांघक सैकड़ों मील दूरतक चलीजाती हैं। दक्षिणमें यह कभी कभी नीलगिरि की आकाश चूमनेवाली चोटी लांघकर लगातार चा दस दिन तक उड़ती रहती हैं। कई किस्मकी मधुमक्खियां किसी किसी पक्षीकी भांति बारहों महीने एक जगह नहीं रहतीं भारत वर्षकी एक किस्मकी मधुमक्खियां ऐसीही हैं। यह ग्रीष्म कालमें समतल भूमि छोड़कर अन्यत्र चलीजाती हैं। और चार छायण महीनेमें वापस आती हैं। इसके सिवा मकरन्द पूर्ण कुसुम का अभाव होने से, मधुका छत्ता लुटजानेसे मधु पीकर 'मच्छर

खाली होजानेसे, अनेक शत्रुओं के आगमन से या अपनी संख्या अधिक बढ़ जानेसे मक्खियां स्थान बदल लेती हैं।

मक्खीका डंक।

मधुमक्खीके पास एकमात्र अस्त्र है। असहाय बच्चों और बड़े परिश्रमसे संग्रह किये हुए अमूल्य मधुकी रक्षाके लिये प्रकृति देवीसे उसको एक भीषण अस्त्र मिला है। इसी महा अस्त्र से वह अनेक शत्रुओंसे घिरी रहनेपर भी निरापद होकर जीवन बिताती है। अन्य शत्रुओं बात दूर रहे, मनुष्यकोभी एकाएक अपरिचित छत्तेके पास जानेका साहस नहीं होता। मधुमक्खियोंके इस महास्त्र को डंक कहते हैं। साधारण लोगोंका विश्वास है कि मक्खी कुत्ते बिल्ली आदि जानवरोंकी तरह शत्रुको दांतसे काटती है; किन्तु यह सरासर भूल है। यह किसीको काटती नहीं बहुत तंग होने पर शत्रुके शरीरमें डंक मारती है। डंक उसके पेटके पिछले हिस्सेके साथ होता है। यह परस्पर सटे हुए बालोंसे भी पतली दो सुइयां हैं। दोनों सुइयोंके ऊपर छोटे छोटे कांटे होते हैं। कांटे इतने छोटे और पतले होते हैं कि खुर्दबीन के बिना मालूम नहीं होते। और इन सब कांटोंका पिछला भाग मक्खीके शरीरकी तरफको मुड़ा होता है। डंक एक मजबूत कोषके भीतर होता है। डंकसे सटा हुआ विषका थैला है इस विषके थैलेके कारणही डंककी चोट विशेष कष्ट देती है। विष न होता तो केवल डंक किसी कामका न होता। आधुनिक वैज्ञानिकों ने स्थिर किया है कि [illegible] रहता है और इसीसे लगनेके [illegible] का कारण [illegible] विष उत्पन्न होता है। किन्तु मधु मक्खियां कोई विदेशी वस्तु नहीं खाती मधुही उनका मुख्य आहार है; इसीसे मधुमें विषका [illegible] मालूम होता है किन्तु मक्खीके [illegible] विष होता [illegible] है। इसका विष [illegible]

को खिला देनेसे थोड़ी देरमें उनकी मृत्यु होजाती है। मधु मक्खी के डंक मारतेही उसके विष कोषसे एक बूंद विष तुरन्त निकल कर घाव पर गिरता है। घावकी जगह देखतेही देखते सूज जाती है और घायल आदमी तकलीफसे छटपटाने लगता है।

मधु मक्खियोंने सन्तान पालन और मधु भाण्डार की रक्षाके लिये ही यह महास्त्र पाया है, अकारण जीवोंको कष्ट देनेके लिये उनको यह अस्त्र नहीं दिया गया है। इसीलिये वह बहुत तंग आये बिना किसीको डंक नहीं मारतीं। पहलेही कहा गया है कि डंकमें बहुत पतले २ पेटकी ओर मुड़े हुए कुछ कांटे होते हैं। यह पतले कांटे कभी कभी मधु मक्खीके ही सत्यानाशका कारण होजाते हैं क्योंकि जिसको वह डंक मारती है उसके शरीरसे धीरे धीरे डंक न निकालनेसे वह कांटे मांसमें घुस जाते हैं और डंक टूट जाता है। डंक टूट जानेसे उसकी उसी वक्त मृत्यु होजाती है। शायद इसीसे वह किसी पर एकाएक डंक नहीं चलाती जब वह कुसुम-काननमें इस फूलसे उस फूल पर जाकर मकरंद और पराग बटोरती है तब अगर कोई उसको छेड़ता भी वह मार उसको डंक मारकर बदला लेना नहीं चाहती। किन्तु छत्ते निकट कोई जान मार आजाय तब निस्तार नहीं; असंख्य मधु मक्खियां उसको डंक मारकर बहुत जल्द यमलोकको भेज देती हैं।

पहले कहा गया है कि निखट्टूमर के डंक नहीं होता; इसके डंक दरकार भी नहीं क्यों कि वह मधु भाण्डारकी रक्षा आदि कामोंमें कभी हाथ नहीं डालता। कामकाजियोंके डंक सीधे होते है; किन्तु रानीका डंक टेढ़ा और पैना होता है। कामकाजियोंके जीवनकी अपेक्षा रानीका जीवन कहीं अधिक मूल्यवान है इससे डंक मारनेमें कामकाजियोंकी अपेक्षा वह अधिक सावधानी रखती है। रानी अपने प्रतिद्वन्द्वीके सिवा और किसीको भी शायद ही डंक मारती है। मधुमक्खियां अगर मांसके किसी कोमल अंग

डंकमारे तो वह अंग बहुत सूज आता है और दर्दभी कुछ अधिक होता है। यह देखागया है कि पहलीबार मधुमक्षिका के डंक मारने से जितना दर्द उठता है कई बार डंक लगनेसे उतना दर्द नहीं मालूम होता। कोई, असावधानी या शहदके लोभसे छत्ते पर अचानक गिरपड़नेसे अथवा उसको जबरदस्ती तोड़नेकी चेष्टा करनेसे अक्सर विपदमें फसना पड़ता है। बहुत लोग दिनको छत्ता तोड़ने जाते हैं और मक्खियां उनपर हमलाकर प्राण लेलेती हैं। अनेक समय असावधानीसे छत्ते के ऊपर गिरकर अनेक भैंस, गदहे और घोड़ोंने प्राण खोये हैं। किन्तु सावधानी से धीरे धीरे हाथ चलाकर धीरे धीरे काम करनेसे विपदकी उतनी आशङ्का नहीं है। हाईवाइब कहते हैं कि—एक बार एक दल, मधुमक्खियों को किसी वृक्षकी डालीसे मधुमक्षिका-घरमें लेजानेके समय मेरी सहा: यताके लिये एक दासी साथ आईथी। उसने उरकेमारे सिर और कन्धा एक कपड़ेसे ढकलिया था। मक्खियों को पेड़की डालीसे अलग करते समय, अचानक रानी उस डरीहुई दासीके सिरपर बैठ गई और फिर सब मक्खियों ने धीरे धीरे कपड़ेके नीचे जाकर उस के सिर, मुंह और छाती को घेरलिया। यों मक्खियों से घिर कर दासी प्राण लेकर भागने को हुई; मैंने उसको खड़े रहने का हुक्मदिया और तुरन्त रानीको पहचानकर पकड़लिया और मधुमक्षिका गृहमें लेजाकर रखदिया; दो तीन मिनटमें ही सब मक्खियां उसके शरीरसे उड़कर रानीके निकट चलीगईं। दासीकी जान बची, उसके शरीरमें एकभी मक्खीने डंक नहींमारा। किन्तु यदि वह चुपचाप खड़ी न रहकर, भयसे हाथ पैर फेंकती इधर उधर दौड़ती तो उसकी जान कभी न बचती।

टालबेट साहबने लिखाहै कि १८२० ईस्वीमें कनाडा प्रदेशमें एक आदमीके बगीचेमें २० मधुमक्षिका गृह रखेगये थे। गर्मीके मौसिममें एकदिन किसी पड़ौसीका घोड़ा पासके मैदानमें चरता था। ...

थोड़ी देर में चहलकदमी करते करते उसने घ
उलटना था कि झुण्डकी झुण्ड मक्खियां निकल
डंक मारने लगीं। घोड़ेने यन्त्रणासे बेचैन होकर
मक्खियोंका और एक घर उलटदिया। उसमेंसेभी
निकलकर उसको डंक मारने लगीं। घोड़ा जमी
छटपटाने लगा और पांच मिनटके भीतर मरगया।

स्काटलैण्ड निवासी मङ्गोपार्क साहब अफरीका
बार मधुमक्खियोंसे सतायेगये थे। एकबार उनके कुछ
ढूंढ़ते ढूंढ़ते एक बड़े मधुके छत्तेके पास चलेगये। उ
था कि छत्ता तोड़कर शहद निकालनेमें कितना
ह जबरदस्ती मधुलेनेको मुस्तैद हुए। बस इनारो
क्खियां क्रोध से किचकिचाकर उनपर टूटपड़ीं।
लदुए गदहे और घोड़े चरतेथे, मधुमक्खियोंने
हमला किया। आदमी, घोड़े और गदहे बिकल
इधर उधर भागने लगे। किन्तु सकुशल कोई न गया। सब
बहुत घायल हुए। शामको मक्खियां जब कुछ शान्त हु
साहबके नौकर घोड़े और गदहोंको ढूंढ़ने लगे। बहुत
तालाश परभी तीन गदहोंका कुछ पता न मिला इसके सि
तीन दिनमें तीन गदहों और एक घोड़ेने तड़प तड़प कर
देदिये। इस प्रकार कभी कभी मनुष्य और इतर प्राणियां
या बेवकूफीके कारण बड़ी आफतमें फंस जाते हैं।

मधुमक्खिकाके डंक का दर्द और सूजन मिटानेके लिये तर
तरह की दवाइयां की जाती हैं और सब दवाइयों से थोड़ा बहुत
आराम भी होता है। अमोनिया, गोबर या तमाखू घावपर लगा
देने से अक्सर दर्द मिटजाता है। खसिया पर्वत के निवासी घा
पर पान लगाया करते हैं। दक्षिणियों की रायमें विशेषतः इमलीके
पत्तोंको चौगुने जलमें गर्मकर उसी जलसे

डंककी चोटकी एक-औषधि है; कोई कोई वैद्य कहते हैं कि सेंधा नमक शहदमें मिलाकर लगानेसे फायदा होता है। अमेरिका वालोंके मतमें देदेंका ख्याल न करके एकदम भूलजाना दर्द मिटानेकी अक्सीर दवा है।

सिविल एण्ड मिलीटरीगजटमें एक साहबने मधुमक्खीके विषसे अपने एक टट्टूके मरनेकी बात इस प्रकार लिखीथी-एकबार मैं सफरमें अपने निवास स्थानसे कई मील दूर चलगया वहां कई दृक्षोंके निचे एक तम्बू डाला। अचानक एकदिन मधुमक्खियों के एक भुण्डने मेरे तम्बूपर हमला किया। शायद आसपास के दृक्षोंपर दो एक मधुके छत्ते थे और वहींसे मक्खियां आई थीं। तम्बूमें दोघोड़ों और एक टट्टूपर उन्होंने भयानक रूपसे आक्रमण किया, टांगनके पेट पीठ और शायद जीभमेंभी डंक माराथा। एक घोड़ेके पिछले दो पैर इतने फूलगये कि उनको जरा हिलानेकी शक्ति न थी। मैं उनको छः मील दूर अपने घर लेगया वहां पहुंचतेही मैंने टांगनको करीब आधा सेर गरम शराब पिलाई। इससे उसको कुछ आराम मिला। किन्तु उसी दिन २ बजे उसको ज्वर आया; तब अदरकके रसमें गर्म शराब (बीयर) मिलाकर पिलाई और अच्छी तरह बिछौना करके उसपर उसको सुलाया। उसकी हालत धीरे धीरे बिगडने लगी और दर्द बढ़ने लगा। डंक मारनेके बादसे उसने कुछ नखाया। दूसरे दिन सन्ध्या के ६ बजे कुछदेर तड़पकर मरगया। शेष दो घोड़े अभीतक जीते हैं तथापि वह चार पांच दिन तक अच्छे नहीं हुए थे। अबभी वह काम करने योग्य नहीं हुए हैं। साहबने अपने टांगनकी मृत्युपर बड़ा विस्मय प्रगट कियाथा किन्तु बहुधा ऐसी घटना हुआ करती है; उदाहरण केलिये हम पहले मङ्गीपार्क साहब की बात लिख आये हैं।

मधुमक्खियोंकी लड़ाई।

दो या अधिक छत्ते पास पास होनेसे उनके निवासियोंमें कभी कभीतो बडी दोस्ती और कभी कभी विषम शत्रुता देखीजाती है। प्रायः बलवान मक्खियोंका दल बलहीन दल को हराकर उनका छत्ता लूट लेता है। इस विषयमें भी मधुमक्खियां मनुष्योंकी अपेक्षा अधिक दोषी नहीं है; आज दिनभी ज्ञान धर्म और सभ्यता का अभिमान करने वाला मनुष्य निर्विघ्न दूसरेका धन लूटनेमें पल भर भी देर नहीं करता तुच्छ मधुमक्खिका को धर्म ज्ञानभी नहीं है, विद्याभी नहीं है। जोहो कभी कभी भिन्न भिन्न छत्तोंकी मक्खियोंमें मित्रताभी देखीजाती है। किन्तु यह मित्रता अधिक दिन तक नही बनी रहती; अक्सर थोड़ेही दिनोंमें यह मित्रताही उनकी शत्रुताका प्रधान कारण होजाती है। मक्खियां छत्ता लूटने केलिये और उसपर दखल जमानेके लिये लड़ती हैं। अर्थात उनमें चङ्गेजखां और नेपोलियन दोनों प्रकारके वीर देखेजाते हैं; कोई दूसरेका धन लूटनेमेंही सन्तुष्ट है और कोई दूसरेके राज्यपर अपना अधिकार जमानेमें व्यग्र है। काफी भोजन और घर बनानेकी सामग्री मिलनेपर मक्खियां दूसरेका घर लूटने नहीं जातीं। किन्तु उनमेंसे कोई कोई दल दो एकबार लूट पाट करके सहजमें अधिक माल पाजानेपर लुटेरा बन जाता है। यह दल या मक्खियोंसे काम की तकलीफ नहीं करता। सहजमें अधिक लाभकी आशासे छत्तों की तलाशमें बन ठन भटका करता है। अपनेसे कमजोर छत्ता देखतेही सब मक्खियां मिलकर उसपर आक्रमण करती हैं और बल पूर्वक मधु और पराग लूटकर अपने छत्तोंमें छिपाती हैं। जब तक शरीरमें शक्ति मौजूद रहती है तबतक आक्रान्त मक्खियां लड़ाई करती हैं, और बड़ी बहादुरीसे लड़ती हैं शत्रुको सहजमें अपने घरमें घुसने नहीं देतीं। कोई किसी दल छत्तेके द्वार आक्रमणों छोटेसे दरवाजेपर भयानक घोरसंग्राम शुरू होता है। कभी

को भिल्लीं फाड़नेवाली भिनभिनाहट मे विपदवार्त्ता बड़ी तेजी से छत्तेके एक सिरेसे दूसरे सिरेतक फैलजाती है, जन्मभूमि की रक्षाके लिये सहस्रों मक्खियां दरवाजे पर निकल आती हैं, और शत्रु को घेर दौड़ती है विजयी मक्खियां विजित मक्खियों को खेंच कर अलग फेंक आती हैं।

१- मधुमक्खियोंकी युद्ध प्रणाली भी अत्यन्त आश्चर्य जनक है। रानियोंके द्वन्द युद्ध का विषय पहले कहागया है। कभी कभी भिन्न भिन्न छत्तोंकी दो कामकाजी मक्खियोंमेंभी द्वन्दयुद्ध होता है। किन्तु एक दल मक्खियां दूसरे किसी दलके छत्तेपर अधिकार करने जायें तो बहुधा दोनों दलोंमें साधारण युद्ध होता है। रोमर साहब ने मधुमक्खियोंका ऐसा एक युद्ध देखाथा। इसमें दोनों पक्षकी अनेक मक्खियां मारीगईं तथा घायल हुईं। दोपहर से संध्यातक यह लड़ाई हुईथी। यह युद्ध नियम पूर्वक हुआथा। जब दोनोंदल आमने सामने आयेतो हरेक योद्धा अपने बराबर का प्रतिद्वन्दी चुनकर उससे लड़ने लगा। देरतक मल्लयुद्ध होतारहा अन्तमें जयी मक्खियां अपने अपने दुश्मनोंकी लाशोंको दो पैरोंमें लटकाकर कुछ दूर लेगईं और फिर नीचे गिरादिया और आप सामने के चार पावोंपर उनके पास बैठकर पिछले दो पैरोंको रगड़ रगड़ कर आनन्द प्रगट करने लगीं। विलायत के एक अखबारमें मधु मक्खियों के निम्न लिखित भयानक युद्ध का विवरण प्रकाशित हुआथा। एक दल मधुमक्खियां एक नये मक्षिका गृहके निकट उड़ते उड़ते एकाएक उतरकर उसके ऊपर बैठगईं और उसको चारों ओरसे घेरलिया। थोड़ी देर बाद वह मक्षिकागृहके दरवाजे की तरफ बढ़ने लगीं और हजारों मक्खियां उसके भीतर घुसगईं पल भरमें भिनभिन शब्दसे युद्धकी घोषणा हुई; दोनों दलकी मक्खियां घरसे बाहर निकलकर आकाशमें उड़ने लगीं। आकाश मक्खियोंसे ढकगया मानो कहींसे एक भूरेरङ्गका मेघ अचानक आकर आकाश में छागया। आगे दोनों दलकी मक्खियोंमें

भीषण युद्ध आरम्भ हुआ। नीचेकी जमीन दोनों दलकी मरी और घायल मक्खियोंसे भरगई! बहुतदेर की लड़ाईके बाद एक दलकी मक्खियां विजय पाकर मामके छत्ते पर बैठकर विश्राम करने लगीं। फिर उस मधिका गृहपर दखल करके शान्त भावसे अपना काम करने लगीं। जब कोई मधिकादल दूसरेका छत्ता अधिकार करता है तो वह सबसे पहले छत्तेके दूधसे उस छत्तेकी मरम्मत करके अच्छीतरह साफ करलेता है। जबतक एक एक घर अच्छीतरह देखकर उसकी मरम्मत नहीं करलेतीं तबतक मक्खियां किसी नये छत्तेमें काम नहीं करतीं।

स्वजातीय शत्रुके सिवा भी मधुमक्खियों के अनेक शत्रु हैं साधारण कीड़ेसे लेकर मनुष्य तक अनेक जीव इनके दुश्मन हैं भौंरा, बर्रे, गिरगिट, मेड़क चूहा, चींटा, चींटी मधुमक्खी खाने वाली चिड़िया, भालू, मकड़ी और मनुष्य इनके प्रधान-शत्रु हैं। भौंरा और भिड़ सुबीता पातेही मधुमक्खीका पेट फाड़कर उसका मधु पीजाते हैं; गिरगिट और छिपकली छत्तेके पास जाकर चुप से बैठे रहते हैं, ज्योंही मधुमक्खी उनके पास आती है, त्यों उसे पकड़कर निगल जाते हैं यों एक छिपकली क्षण भरमें पांच सात मक्खियों को खाजाती है। मधुमक्खियां शायद-पहले इन दुश्मनोंको नहीं जानतीं नहीं तो वह भला ऐसे शत्रुको छत्ते पास फटकने क्यों देतीं ? चूहा मधुमक्खीके पास नहीं जाता किन्तु मौका पानेपर उसके अंडे शहद और छत्तेको खाजाता है। काले काले चींटे छत्तेमें घुसकर शहद और अंडोंको खाजाते हैं। लाल लाल चींटियां विशेष हानि नहीं पहुंचातीं; बल्कि समय समयपर वह झाड़ूदार का काम करती हैं। एक किस्मकी चिड़िया केवल मधुमक्खी खाकर जीती है। दक्षिण अफरीकाके हाटेन्टट देश में एक तरहकी छोटी चिड़िया होती है; उसको मधु बड़ा प्यारा है। किन्तु मधुमक्षिकाके भयसे यह उसके पास जानेका साहस नहीं करती। छत्ता देखते ही यह चिड़िया भालूको ढूंढने लगती है

और जहां पाती है चिल्लाते चिल्लाते उनको रास्ता बताकर छत्तेके पास लेजाती हैं। भालू छत्ता तोड़कर मधु पीने लगता है उस समय जो कुछ मधु गिरता है वह उसेही चाटकर अपनेको परम सुखी समझता है। भालुओंकी भांति यह मनुष्य कोभी छत्तेके पास लेजाती है। भालू अगर मधु पाजाय तो वह और कुछ खाना नहीं चाहता। मधुमक्खियां परमशत्रु भालूको छत्तेके पास देखतेही क्रोधसे अधीर होकर उसपर आक्रमण करती हैं और कभी कभी जबरदस्त भालूभी मधुमक्खियोंके विषसे व्याकुल हो मधु छोड़कर भाग जाता है। कीड़ोंमें बहेलिया रूपी मकडी छत्तेके निकट जाल फैलाकर चुपचाप उसके भीतर बैठी रहती है; कामकाजी मक्खियां आते जाते समय कभी कभी जालमें फंसजाती हैं; तब वह बाहर निकलनेके लिये कुछ देर तक खूब तड़फड़ाकर हैरान होजाती हैं तब धीरे धीरे आकर मकड़ी उन्हें पकड़के खाजाती है। मनुष्य जाति मधु और मोमके लिये बहुत पुराने जमानेसे मधुमक्खियोंसे शत्रुता करती आती है। इनसब शत्रुओंके सिवा कुछ ऐसे छोटे छोटे कीड़ेभी हैं जो मधुमक्खियोंसे शत्रुता करते हैं। इनमें कोई कोई मक्खी के शरीरमें चिपटकर उनको बहुत सताते हैं। एक तरह के कीड़े इनके अण्डोंके घरकी छतपर अपने अंडे छोड़ देते हैं; कुछ देरमें इन अण्डोंसे कीड़े उत्पन्न होकर मधु, मोम और पराग खाजाते हैं। और कभी कभी तो यह ऐसे जबरदस्त होजाते हैं कि मक्खियां इनके अत्याचारसे तंग आकर अपना छत्ता छोड़कर भाग जाती हैं और नया छत्ता लगानेको लाचार होती है। डेथस् हेड मथ नामका एक तरहका कीड़ा पहले रानीकी तरह एक प्रकार का शब्द करके मधुमक्खियों को मोहित करलेता है पीछे हजारों मक्खियोंके बीचसे होकर छत्तेमें घुस कर बेधड़क मधुका भांण्डार लूट लेता है। मक्खियां उसपर आक्रमण तो क्या करें उसके पास जानेका भी साहस नहीं करतीं।

मधु मक्खियोंकी साधारण लड़ाई और तुमुल युद्धका विषय कहागया। अब उनकी दुर्ग बनानेकी प्रणालीका वर्णन संक्षेपमें करेंगे। मधु मक्खियोंके साहस और वीरताकी बात कुछ कुछ कही गई है। असभ्य मनुष्य शत्रुके आक्रमणसे अपनी रक्षाके लिये किला बनाना नहीं जानता; पेड़ोंकी सघन डाली या पहाड़की गुफाही उसका प्रधान आश्रय है। मनुष्य जाति सभ्यताकी सर्वोच्च सीढ़ीपर चढ़े, बिना गढ़ अट्टाला आदि नहीं बनासकती। किन्तु मधु मक्षिकाका ज्ञान स्वाभाविक है, मनुष्य ज्ञानकी भांति सीखा हुआ नहीं है; इनमें सभ्यासभ्य नहीं हैं; सबका काम एक सा है। बहुत प्राचीन कालमें मधुमक्खी छत्ता बनाने, सन्तान पालने, मधु बटोरने और किला बनानेमें जैसी विद्या दिखाती थी आजभी ठीक वैसाही दिखातीहै। इसकी कुछभी उन्नति या अवनति नहीं हुई। जैसा सभ्य मनुष्य दूसरोंसे सीखेहुए ज्ञानके प्रभावसे जैसा काम करता है संस्कार वश मधुमक्षिका उससे कम विद्या नहीं प्रकाश करती। मक्खियां प्रबल शत्रुसे रक्षा पानेके लिये जिस कौशलसे किला बनाती हैं उसे देखकर दांतोंमें उंगली काटना पड़ती है। समर विद्यामें वह इस जमानेके मनुष्योंसे किसी बातमें कम नहीं हैं। जिस शत्रुको डंक मारकर नाश नहीं करसकतीं उसके आक्रमणसे बचनेके लिये वह प्राचीर आदिके द्वारा छत्तेके दरवाजेको दृढ़ और दुर्गम बनादेती हैं। स्वजातीय प्रबल शत्रुसेभी अपनी रक्षा के लिये उपाय करती हैं। शत्रुके डरसे वह कभी कभी छत्तेका दरवाजा मोम और पेड़के दूधसे बिलकुल बन्दकर देती हैं; सिर्फ अपने आने जानेके लिये कुछ छोटे छोटे छिद्र रखती हैं। छेदोंको इतना छोटा करदेती हैं कि दो मक्खियांभी एक साथ उसके भीतर नहीं जा सकतीं। डेथसहेडमथ नामक कीड़ेके हाथसे बचनेके लिये हिउबर साहबको मधुमक्खियोंने यह उपाय दिखायाथा।

इयम् हेड्मथ कीड़ेने जब मधुमक्खियों को तंग करना शुरू किया तब हिउबर साहबने उनकी लूटपाट रोकनेके लिये उनके घरोंके दरवाजे इतने छोटे कर दियेकि उनसे मधुमक्खियोंके आनेजानेमें कोई रुकावट न हुई मगर उनके प्रबल शत्रुके घुसनेका रास्ता एक दम बन्द होगया। इससे उस कीड़ेका कुछ वश न चाला किन्तु हिउबर साहबने भूलसे कुछ घरोंके दरवाजोंको छोटा नहीं किया। उन घरोंकी मधुमक्खियोंने स्वयं अपना दरवाजा छोटा कर लिया। उन्होंने पेडका दूध और मोम अन्दाजसे मिला-कर उससे दरवाजके आगे एक मजबूत दीवार बनाई दीवारसे दरवाजोंको अच्छी तरह बन्द करके उसमें कई छेद कर दिये। छेद इतने छोटेथे कि उसके भीतरसे एकसाथ सिर्फ दो मक्खियां आजा सकती थीं। इससे उनका जबरदस्त दुश्मन घरमें घुसने नहीं पाया। मक्खियां यह दीवार कभी ठीक दरवाजेपर, कभी कुछ पीछे और कभी सामने बनाती हैं। इनके इंजिनियर सदा एकसां किला नहीं बनाते जब जैसे किलेकी जरूरत पड़ती है तब वैसे किले बनाते हैं। कभी कभी छोटे छोटे छेद वाले सिर्फ एक दीवार बनाते हैं कभी समान अन्तर पर कई दीवारें पास पास बनाते हैं। दीवारोंके बीचकी गली इतनही तंग करते हैं कि दोसे अधिक मक्खियां कभी एक साथ नहीं आ जा सकतीं। दीवारोंमें छोटे छोटे दरवाजे बनाते हैं। दरवाजे ऐसे होते हैं कि एक सीधमें कोई तीन दरवाजे नहीं पड़ते। इसलिये छत्तेके अन्दर आनेके लिये एक द्वारसे दूसरे द्वारपर जाते समय मधुमक्खियोंको एक टेढ़े रास्तेसे जाना पड़ता है। जिन्होंने आज कलके आदमियों के बनाये किसी किलेका दरवाजा देखा है वह मधुमक्खियोंके बनाये किलेके टेढ़े रास्तेसे मनुष्योंके बनाये दुर्ग द्वारकी तुलना करनेपर जरूर आश्चर्य करेंगे। मक्खियां इन दीवारोंको कभी कभी दरदर और खम्भे सहित बनाती हैं। किन्तु दरदर और खम्भे इस तरह बनाती हैं कि एक दीवारका दरदर पासही

दूसरी दीवार के छेदके सामने पड़ता है इससे भीतर जानेका रास्ता टेढ़ा होजाता है। बहुत जरूरत पड़े बिना वह कभी किला नहीं बनातीं। और जिस शत्रुको डंकसे मार सकती हैं उसके डरसे भी कभी किला नहीं बनातीं। सजातीय प्रबल शत्रुके हाथसे बचने के लिये वह ऊपर लिखी रीतिसे किला बनाती हैं। मगर छेद इतना छोटा करती हैं कि सिर्फ एक कामकाजी उसके भीतरसे जासके और थोड़ीसी मक्खियां भीतर की तरफ संतरी बन कर तैनात रहें तो वह सहजमें जबरदस्त से जबरदस्त दुश्मनको भी हरा सकती हैं। पाठक! आपने सन् १८५७ के गदरका इतिहास पढ़ा है? आरामें अंगरेजोंने एक छोटेसे किलेमें रह कर किस कौशलसे बागी सिपाहियोंके हाथ से आत्मरक्षाकी थी वह याद है? मधुमक्खियां भी उसी तरह अपनी बनाई दीवारकी ओभलमें रहकर जबरदस्त शत्रुसे अपनी रक्षा करती हैं और अक्सर कामयाबभी होती हैं। जब मक्खियोंकी वंशवृद्धि होकर उनका एक एकदल जन्मभूमि छोड़ता है उस समय इस दीवारके रहनेसे जानेमें बहुत रुकावट पड़तीहै इसलिये वह उस समय दीवारको तोड़देती हैं और भारी विपद आये बिना फिर नहीं बनातीं।

मधुमक्षिकासे उपकार।

संसारमें सजीव पदार्थ हो चाहे निर्जीव-प्राणीही चाहे उद्भिद, छोटे छोटे कीड़ेहों या मोटे शरीर धारी जीव सब किसी न किसी उद्देश्यसे उत्पन्न कियेगये हैं। ऐसी कोई बुरी वस्तु नहीं बनीहै जिससे पृथिवीका कुछ उपकार न होताहो। सांपके विषसेभी कुछ न कुछ लाभ होता है। क्षुद्र मधुमक्षिकासे भी कम उपकार नहीं होता। मधु और मोम जितनी कामकी चीजें हैं वह किसीसे छिपी नहीं हैं। मधुकीसी मीठी वस्तु बहुत कम मिलती है, विशेष कर असभ्य जातियोंमें मधुही मुख्य मिठाई है। मोमभी अनेक कामोंमें आताहै। इसके सिवा मधुमक्खीसे पृथिवीका और एक भारी

उपकार होता है वह शायद सब लोगोंको विदित नहीं है। हम संक्षेपमें उसका वर्णन करते हैं।

पाठकोंको याद होगा कि मक्खी फूलसे पराग और मधु यही दो चीज़ें लेती हैं। मधुकी अधिक जरूरत पड़ने पर वह अधिक मीठे फूलपर जाती है और परागकी अधिक जरूरत पड़नेपर पराग वाले फूल पर जाती है। यहां एक बात कहना है कि जीवजन्तुओं की भांति उद्भिदोंमें भी स्त्री पुरुष होते हैं। किसी किसी वृक्षके हरेक फूलमें नरकेशर और स्त्री केशर होती है; और किसी वृक्षके किसी फूलमें केवल पुरुष केशर और किसीमें केवल स्त्री केशर होती है। इसके सिवा किसी वृक्षमें केवल पुरुष केशर वालाही फूल खिलता है और किसीमें केवल स्त्री केशर वाला है। इस बातके कहनेकी जरूरत नहीं है कि पुरुष केशरका पराग स्त्री फूलको रजसे मिले बिना वृक्षमें किसी प्रकार फल नहीं लग सकता। जिन पेड़ोंके फूलमें स्त्री और पुरुष दोनों प्रकारकी केशर होती है उनमें सहजमें फल लगनेकी सम्भावना है। क्योंकि इन फूलोंके बीचमें स्त्री केशर और उसके चारों ओर पुरुष केशर होती है। इससे धीमी हवा बहनेसे भी पुरुष केशरसे पराग निकालकर स्त्री केशरके ऊपर गिर जाती है। जिन वृक्षोंके जुदाजुदा फूलोंमें स्त्री और पुरुष केशर होती है उन सबको हवासे विशेष लाभ नहीं है वह मधु और पराग ढूंढने वाली चींटी, भौंरे तितली मधुमक्खी आदि कीड़ोंके द्वारा फलवान होते हैं। जब मक्खी आदि कीड़े मधु और परागके लिये एक फूलसे दूसरे फूलपर जाते हैं तब उनके पैरमें लगी हुई पुरुषरेणु स्त्री फूलपर झड़ जाती है इससे उसमें फल लगता है। किन्तु जिन पेड़ोंके फूल केवल स्त्री केशर वाले या केवल पुरुष केशर वाले होते हैं उन वृक्षोंको हवासे बहुधा कुछभी उपकार नहीं होता चींटियां चक्कर एकही वृक्षके फूलोंसे पराग लेती हैं, इससे उनमेंभी इन पेड़ोंको फलवान होनेमें कुछ ... ...ती।

मधुमक्खी और भौंरा आदि उड़ने वाले कीड़ोंसे ही उनकी रज एक वृक्षसे दूसरे वृक्ष तक पहुंचती है। और इसीसे उन वृक्षोंमें फल लगते हैं। लावक, स्प्रेङ्गेल आदि विद्वानों का कथन है कि पहले कहे हुए दो जाति के वृक्ष मधुमक्खी परिन्दे कीड़ों की सहायता बिना हवा या चींटी द्वारा फलवान होभी सकते हैं; किन्तु पीछे कहे हुए वृक्षोंमें उक्त कीड़ोंकी मदद बिना किसी तरह फल नहीं लग सकता। कौन नहीं कहेगाकि मधुमक्खीसे उद्भिद राज्यका भारी उपकार होता है? वृक्ष कीड़ों को मधु और परागका लोभ देकर इस तरह उनसे अपना काम कराते हैं।

मधुमक्षिका पालन।

सभ्यताके साथ मनुष्यका ज्ञान जितनाही बढ़ता है उतनाही वह अपने प्रयोजनीय पदार्थ की उन्नति करता है। वह अब किसी वस्तुकी स्वाभाविक अवस्था पर सन्तुष्ट नहीं है। बल्कि अपनी बुद्धि और ज्ञानसे वह सब विषयोंमें स्वभावकी सहायता करके अपनी सुख सामग्री बढ़ानेके लिये बराबर चेष्टा कर रहा है। वह खानेयोग्य पदार्थको रन्धन करके पाचन शक्तिकी सहायता करता है, रोगीको उपयुक्त औषधि खिलाकर नीरोग करनेके विषयमें स्वभावकी सहायता करता है; और अच्छे अच्छे खादसे फल फूलकी उसने कुछ बहुत उन्नतिकी है। कुछ दिनसे, मधु और मोमके लिये मनुष्यकी आंख मधुमक्खियों पर पड़ी है। मनुष्य अब थोड़ेसे जंगली मधु और मोम पर सन्तुष्ट नहीं है। सभ्य जगत यही उपाय निकालनेकी चेष्टामें है कि जिसमें मधुमक्खियां अल्प-समयमें अधिक मधु बटोर सकें। इस बातको बराबरका गिन छोड़ो है कि जिसमें मक्खियोंकोअद्भुत सताने पावे, उनको किसी प्रकारकी बीमारी नहो, वह खूब परिश्रम करने पावें, हर समय प्रचुर भोजन पह-चाने पावें और थोड़े समयमें अच्छा और अधिक मधु उत्पन्न

कर सकें। इसीसे आज काल अनेक देशोंमें मधुमक्खियां हिफा-ज़तसे पाली जाती हैं। वह अच्छे अच्छे घरोंमें रखी जाती हैं और अधिक मधु उत्पन्न करके पालकको परिश्रम का सौगुना फल देती हैं। अन्यान्य विद्याओंकी भांति मधुमक्खी पालने की विद्याका आदर आजकल युरोप और अमेरिका में खूब होरहा है। युरोपके लगभग सब देशों में मधुमक्खी पालीजाती है विशेष कर जर्मनी और इङ्गलैण्डमें इस विद्याकी अधिक उन्नति हुई है। इंगलैण्डमें बहुत लोग ऐसे हैं जो मक्खी पालकर केवल मधु, मोम छाते या मक्खीका टब बेचकर आनन्दसे जीविका निर्वाह करते हैं किसी किसीका मुख्य रोजगार मधुमक्खी पालने के लिये बक्सरी सामान बनाना और बेचना है। इंगलैण्डमें "ब्रिटिश बीकी पर्स एसोसियेशन" नामसे मधुमक्खी पालने वालोंकी एक प्रधान सभा है; जुदा जुदा स्थानोंमें उसकी औरभी कई शाखाएं हैं मक्खी पालनेकी रीति की उन्नति करनाही इनका उद्देश्य है। उक्त प्रधान सभासे "ब्रिटिश बीकीपर्स जरनल" नामका एक मासिक पत्र भी निकलता है। उसमें केवल मधुमक्खिका पालन सम्बन्धी लेखहोते हैं। पहले अमेरिकामें पालनेयोग्य मधुमक्खियां नहीं थीं; पीछे युरोपसे वहां लाईगई और फिर सारेदेशमें फैलगई। इस समय पृथिवीके सब देशोंकी अपेक्षा अमेरिका वालों ने अधिक मधुमक्खियां पाली हैं और इसमें सफलता प्राप्तकी है। अमेरिका में इनके पालनेका रोजगार इतना अधिक और आम होगया है कि लोगोंको मधुमक्खियोंसे तंग आकर कभी कभी अदालतकी शरणभी लेनीपडती है। हम "हेरिस बर्गटेलीग्राफ" नामक अख-बारसे एक खबर नकल करते हैं। वेस्टफियरटिपू नामक एक छोटे शहर के दो आदमियों के पास १२० छत्ते थे। एक बार गर्मीके मौसिम में मक्खियोंको काफी भोजन ... । मिला इससे वह बहुत क्रोधित हुईं। ... थे। एकाकी नहीं होताथा;

खिड़की से वह किसीतरह आती जाती। उस रास्तेमें जो आदमी आजाता मधुमक्खियां उसको डंक मारतीं। फल, अचार या कोई मीठी चीज बाहर रखनेसे पलभरमें झुंडकी झुंड मधुमक्खियां आकर उसे चटकर जातीं। कभी कभी एक एक मकान मक्खियों से भरकर कालेरंगका बनजाता। शहरके लोग यों कई महीनेतक तंग हुए अन्तमें सबने मिलकर मधुमक्खी पालनेवालोंके नाम अदालत में नालिश कीथी। अमेरिका में थोड़ेही दिनमें मधुमक्खिका की इतनी वंश वृद्धि और उसके पालनेकी इतनी उन्नति हुई है कि कि देखकर आश्चर्य होता है। जोहो अमेरिकामें सबकुछ सम्भव है, अमेरिकाकी बातें अद्भुत हैं। अब हमारे देश की ओर दृष्टि फेरीजाय, हमारे देशमें और और विषयोंकी भांति मधु मक्खीके सम्बन्धमें भी माल मसाले की कमी नहीं है, केवल कारीगरोंकी कमी पाईजाती है। मधुमक्खियां भारतमें सर्वत्र देखीजाती हैं। जल वायु भी इनके अनुकूल हैं; तब भारतमें मधुमक्खी पालनेमें क्योंनहीं सफलता प्राप्त होगी?

अलीपुर में डगलस साहब, शिलाङ्गमें रीटा साहब, पहाड़ देशमें हंटर साहब और टाड साहब को छोड़कर भारत में अब और किसी ने वैज्ञानिक उपायसे मधुमक्खी नहीं पाली। मगर डगलस साहबके मुंहसे सुना है कि बङ्गालमें कहीं कहीं दो एक देशी वैज्ञानिक नियमसे मधुमक्खी पालते हैं। जोहो, वैज्ञानिक उपाय से मक्खिका पालन इस देशमें अबभी उचित रीतिसे जारी नहीं हुआ यह बात सत्य है और खेद की है। अतएव अब अधिक विलम्ब करना ठीक नहीं है। वैज्ञानिक उपायसे मधुमक्खी पालने की रीति सर्वसाधारण को सुगमतासे बताकर उन्हें इसके लिये उत्साहित करनाही हमारा उद्देश्य है। यहां यह भी कह देना आवश्यक है कि इनके पालनेसे धन लाभके सिवा इनके आचार व्यवहार स्वभावादि देखकर चित्तको जो आनन्द मिलता है वह आनन्द पालने वाले के सिवा और कोई अनुभव नहीं कर

सकता। इस भारतके मक्खिका पालन, जंगली छत्तोंके लूटने और मधु निकालनेकी बात संक्षेपमें कहकर आगे वैज्ञानिक उपायसे मधुमक्षिका पालनेके विषय को सरल भाषामें पाठकों को बतानेकी चेष्टा करेंगे।

भारतमें मक्खी पालने और मधु निकालने की रीति।

उद्भिद विद्याके पंडित लोग कहते हैं कि बङ्गालमें साल में दस महीने मधुमक्षिका के मधु और पराग संग्रह के उपयोगी फूल खिलते हैं केवल पौष और माघ महीनेमें ऐसे फूलोंका अभाव होता है। इससे मक्खी पालनेमें कुछ अड़चन पड़नेका खटका नहीं है। उक्त दो महीनोंमें मक्खियां संग्रह किये हुए मधुके जरिये या बनावटी उपायसे सहजमें पाली जासकती हैं। बङ्गालके अनेक स्थानोंके निवासी मधुमक्षिका पालते हैं। सुना जाता है कि यहां हांड़ोमें मधुमक्खी रखी जाती है मगर हमने कभी नहीं देखी। एक बङ्गाली बाबूने "ष्टेटसमेन" पत्रमें लिखाथा कि घरमें कलस्तरमें खिड़की पर और कभी कभी घरकी ठाकुरबाड़ी में देवताकी चौकीके नीचे मक्खियां बड़े बड़े छत्ते लगाती हैं। यह बहुत सीधी होती हैं कभी किसीको नहीं सताती। शहद जाड़े के सिवा प्रायः सब मौसिममें पायाजाता है। उसके संग्रह करनेका ढंग यह है कि किसी लकड़ीका एक हिस्सा आगमें जलाकर मधुके छत्तेके निकट कुछ देरतक इसतरह रखते हैं कि उसका धुआं छत्तेमें लगे। मक्खियां धीरे धीरे वहांसे हटजाती हैं, किन्तु उड़कर भाग नहीं जातीं। उनके जरा हट जानेपर मधुके घरमें एक छेदकरके उसके नीचे एक बर्तन रख देते हैं, रस चूकर बर्तनमें जमा होता है। यों हरबार एक डेढ़ सेर शहद मिलजाता है। मक्खियां इतनी चालाक होती हैं कि छेद करके मधु निकालनेके समय थोड़ी थोड़ी देरमें नये नये छेद किये बिना काम नहीं होता। वह छेदके पास आकर चारों ओर इसतरह उसपर मोम चिपका देती हैं कि इससे ज़्यादा रस नहीं गिरने पाता। ...

राव् कहते हैं कि कलकत्तेके नीमतला मुहल्लेके एक ज
जमींदारो पूर्व बङ्गालमें है; इस जमींदारीको मालगुजार
हिस्सा कमल वनके मधुसे अदाहोता है। सुन्दरवनसे
जंगली शहद आता है। यहांके शहद निकालने वा
चढ़ाई करते समय शरीरमें लहसुनका रस मललेते हैं।
बूसे घबरा कर मक्खियां भाग जाती हैं और लूट
विघ्न नहीं डालतीं। कोई कोई हाथमें तुलसी दलका
छत्तेके पास जाते हैं। इसकी परीक्षा हमनेकी है।
सुगन्धि से मुग्धहोकर हो चाहे किसी कारण से हो
नहीं मारतीं।

आसामके खसिया और जयन्तिया पहाड़के निव
कोटरमें मधुमक्खी पालते हैं। उसकामुंह घास या ति
हैं। साढ़े तीनफुट मोटी वृक्षकीजड़ मिलजाय त
काम लेते हैं। जङ्गली छत्तेपर दखल करने के
खसिया वासी आदमी एक साथ जाते हैं। मक्
बचने के लिये वह थोड़ी अदरक चबा लेते हैं।
जंगली मक्खियोंका झुण्ड पकड़ना चाहते हैं तो
पड़क कर एक बाल या सूतके डोरेमें एक लकड़ीसे
तब सब मक्खियां रानीके पास आकर एकत्र होजा
उस लकड़ी में रखकर घर लेआते हैं और कुछदि
हालतमें ही रखते हैं। वह लोग उनके अण्डोंको
बड़े प्रेमसे खाते हैं!

रंगून निवासी मधुके लिये जंगलमें जानेके प
तरह सरसों का तेल और प्याजका रस लगाते हैं
खोखली लकड़ीके दोनों तरफ चमड़ा लपेट
पालते हैं। तिनासरम स्थानमें मक्खियां अप
डालोंपर छत्ते लगाती हैं। इन छत्तोंसे मधु निक
... यह उपाय करते हैं पहले पेड़को धुंए

ाट डालते हैं, कभी कभी हाथके सहारेके लिये पेड़से कुछदूर
ास गाड़ देते हैं फिर एक आदमी एक मशाल, एक बांसकी टोकरी
जिसके छेद गोंदसे खूब बन्द करदेते हैं) एक रस्सी और एक तेज
ाकू लेकर धीरे धीरे पेड़ पर चढ़ता है। जलती हुई मशाल
ामने करके पेड़की एक डालीसे दूसरी डालीपर जाकर वह धीरे
रे छत्तेके पास पहुंचता है। उसके पहुंचने पर मधुमक्खियां
चानक भारी बला सिरपर देखकर भयसे छत्ता छोड़ भाग जाती
। कितनीही मक्खियां मशालकी आगमें पड़कर जलजाती हैं
इतनी मशालके धुएंसे बेहोश होकर जमीनपर गिर पड़ती हैं।
ाकी इस प्रकार हमला करनेसे सब जमीनपर गिरकर मरजाती हैं।
ामें करनेसे कुछ मक्खियां आकाशकी ओर उड़कर किसी
ह अपनी जान बचाती हैं। तब निर्दय लुटेरा टोकरी को रस्सी
बांधकर किसी डालीमें लटका देताहै और छत्तेको चाकूसे टुकड़े
कड़े करके उसमें फेंकता जाता है। जब टोकरी भरजाती है तब
है उतारकर साथियोंके हाथोंतक पहुंचा देता है। मनुष्यमें कितनी
र्दयता और स्वार्थ भराहुआ है! अपने थोड़ेसे फायदेके लिये
रेकी जान लेनेमें वह जरा भी नहीं हिचकता।

भारतदेशके निवासी घरके पास मक्खीका झुण्ड आने या छत्ता
ानेसे बड़ा अपशकुन समझते हैं। किन्तु अंगरेज लोग मधु-
क्खियों का झुण्ड आने पर उसे नीचे उतारनेके लिये ढोल
ा कनस्तरा खूब जोरसे बजाते हैं। दोनों जातियोंमें कितना
ान्तर है! जो हो, अंगरेजभी इस विषयमें कुसंस्कारसे खाली
ाहीं हैं। अनेक अंगरेजोंको यह दृढ़ विश्वास है कि अगर कोई
क्खी पालनेवाला मरजाय और उसकी खबर किसी तरह मधु-
रके उसकी मधुमक्खियों को न दीजाय तोसब मक्खियां
ग मरजाती हैं।

जहांतक हम जानते हैं इस प्रदेशमें मधुमक्खी पालनेका
ाज नहीं है पास लोग कहते हैं कि यहां इनके पालनेसे कुछ

फायदा नहीं क्योंकि उधर फूलका मौसिम बहुत कम है। खोज परीक्षा किये बिना कोई बात साफ नहीं कही जासकती। दुक्षिण भारत के निवासियों को इधर ध्यान देना चाहिये।

नेपाली लेपचा और भुटिया लोग पेगूटंग निवासियोंकी भांति खोखली लकड़ीके दोनों तरफ चमड़ा लपेटकर उसमें मक्खी पालते हैं। दारजिलङ्गमें कृष्ण पक्षकी अन्धेरी रातमें छत्तेसे मधु निकाला जाता है ०

भारत वर्षका स्वर्ग कश्मीरदेश मधुमक्खी पालनेके लिये बहुत प्रसिद्ध है। कश्मीरके बराबर भारतके अन्य किसी देशमें बहुतायत से मक्खियां नहीं पाली जातीं। पीढ़ी दरपीढ़ी पालेजाने के कारण वहांकी मक्खियोंका स्वभाव बहुत सीधा होगया है। वहां का शहदभी शुद्ध निर्मल और बहुत मीठा होता है। शहद इस दर्जे रातमें होता है कि वहांके निवासी उसको छोड़कर चीनी या और कोई मीठी चीज काममें नहीं लाते। कश्मीरके लोग आम तौरपर मधुमक्खी पालते हैं। हरेक मकान में दस बारह छत्ते होते हैं। कश्मीरी लोग मकान बनाते समय हरेक घरकी दीवारमें १४ इंच व्यासके और २ फुट गहरे दो एक छेद कर देते हैं; छेदोंके भीतर की ओर मट्टी या चूना सुर्खीसे अच्छी तरह पोतदेते हैं और उनको

० मधुसंग्रह के समयके विषयमें भारतवर्ष में दो अलग अलग मत हैं। कुछ लोग कहते हैं कि मधुमक्खियां पूर्णिमाके दिन सब मधु खाजाती हैं इसलिये पूर्णिमासे दो एक दिन पहलेही मधु ले लेना चाहिये। और किसी किसी प्रदेशके लोगोंकी रायमें अमावस्या से दो एकदिन पहले मधु लेलेना चाहिये, क्योंकि अमावस्या को वह उनका सब मधु चटकर जाती हैं। इसमें कोई सचाई है या नहीं हम नहीं कह सकते, क्योंकि मधु इस प्रकार मोममें बन्द करदेने पर बिना मदद पड़े बिना मक्खियां उसका दरवाजा फिर नहीं खोलतीं। तथापि हम यहभी नहीं कह सकते कि यह खयाल बिलकुल गलत है।

क चपटे खपरेल से इस तरह बन्द कर देते हैं कि जब चाहें व सहजमें खोल सकते हैं। यही सब छेद कश्मीरकी धुमक्खियों के घर हैं। जब इन घरोंसे शहद निकालना होता है व मकानका मालिक एक हाथमें सुलगते हुए तिनके कर दूसरे हाथसे वह खपरेल अलग कर देता है र वह आग गढ़े के मुंह पर लेजाता है। मधुमक्खियां धुंआं सहकर छत्ता तोड़ ऊपरको उड़ जाती हैं। कभी कभी अधिक से बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ती हैं। घरवाला निर्विघ्न हद निकालकर खपरैल को फिर जहांका तहां लगादेता है। क्खियां धीरे धीरे शान्त होकर फिर पुराने घरमें लौट आती हैं र पहलेकी तरह अपने काममें लगती हैं। इस प्रकार कश्मीरी ग एकदल से एक या कई बार शहद पाते हैं। कश्मीर में ादन इंगलैण्ड आदि देशोंकी भांति जंगलसे पकड़कर लाया ता है।

पंजाबमें मधुमक्खी पालीजाती है। जाड़ेके मौसिममें पंजाबी ग इसको चीनी और सत्तू या आटा खानेको देते हैं। बेया नदी किनारेके गांवोंमें खोखली लकड़ियां मक्खियोंके घरके मर्में आती हैं। और भरपूर आहारकी सुबीतेके लिये बीच बीच इनको एक जगहसे दूसरी जगह लेजाया करते हैं।

सुना है कि मध्यप्रदेशमें मक्खी पालनेका बिलकुल रिवाज नहीं । वहां शहद बिलकुल जंगल से आता है। नागपुर में भी नहीं पालीजाती। मलघाट (मधुघाट) नामक बनमें शहद रातसे होता है। चांदा जिलेमें सबेरे छत्तेमें धुआं देकर मधु कालते हैं। पश्चिम भारतमें बहुत बढ़ियां मधु जंगली छत्तोंमे रातसे आता है। किन्तु छत्ते बड़े बीहड़ स्थानमें होते हैं। इससे बड़ी मुशकिल से मिलता है।

कुर्ग प्रदेशमें मधुमक्खी पाली

मिलता है उसका

द्वारा पैदा होता है। कुर्ग देशके निवासी माघ या फाल्गुन महीने में एक हांडी के भीतर अच्छीतरह मोम और मधु लपेटकर और उसके तलेमें कई छोटे छोटे छेद करके उसको उलटे मुंह जंगलमें रख आते हैं। कोई दस बारह दिन में मधुमक्खियां आकर उसके भीतर छत्ता बनाना शुरू करती हैं। तब वहां वाले उस हांड़ीको रातको घरपर लाकर उचित स्थानमें रखदेते हैं। जेठ वैशाखमें मक्खियां खूब मधु बटोरती हैं। तब पालनेवाले अन्धेरे में हांड़ी को कुछ ऊंची करके उसके भीतर धुआं देते हैं। मक्खियां घबरा कर ऊपरके छेदोंकी राहसे जंगलको भागती हैं। उनको रोकनेके लिये हांड़ीके ऊपर एक और हांडी रखदेते हैं धुआं देनेसे वह कभी कभी ऊपरकी हांड़ीमें जाकर छिपती हैं किन्तु अक्सर भाग जाती हैं।

मैसोर राज्यमें भी मधुमक्खी पालीजाती है। यहां भादोंका महीना मधु संग्रह करनेका समय है। मैसोर निवासी शरीर पर एक कम्बल ओढ़कर मधु निकालते हैं किन्तु मक्खियोंको एकदम भिखारी न बनाकर उनके लिये कुछ मधु छोड़ देते हैं। मैसोर वाले पुराने घड़े या हांड़ीमें बाहरकी तरफ धुआं देकर उसे काला करते हैं, फिर उसके भीतर मधु लपेटकर, उसमें छोटे छोटे छेद करते हैं और उस बर्तनका मुंह मोटे कपड़ेसे बांधकर जंगलमें रख आते हैं। जब मक्खियां उसमें आकर छत्ता बनाने लगती हैं तब उसे घर उठालाते हैं। मधु लेनेकी दरकार होती है तब बर्तन को खोलकर भीतर कुछ धुआं देकर मक्खियों को अलग करते हैं। यहांकी मक्खियां बहुत सीधी होती हैं और इनका मधु बहुत बढ़िया होता है।

दक्षिण भारतमें कुर्ग और मैसोरके सिवा और कहीं मधु मक्खियां पाली नहीं जातीं। एक प्रकार ऊंची चोटी पहाड़ोंकी चोटियों पहाड़के आसपास या पेड़की ऊंची चोटीपर छत्ता बनाती हैं। ये दक्षिण दक्षिण को उसके बचनेके लिये बहुधा पहाड़ चोटियों

पूर्वमें छत्ते बनाती हैं। असभ्य जातियां एक तरहकी लतासे बनी सीढ़ीके द्वारा पहाड़की चोटीसे बीस पचीस हाथ नीचे बने छत्तेके निकट आकर छुरी और मशालकी सहायता से उसको लूटती हैं। अमावस्या की रातके नौ बजेके बादही छत्तेपर अधिकार करने का सबसे अच्छा अवसर है। सोई हुई मक्खियां अचानक जलती मशाल देखकर चौंक उठती हैं और किंकर्तव्य विमूढ़ होकर छत्ता छोड़ इधर उधर भनभनाती भागती हैं। हजारों मक्खियां पहाड़, जमीन और आसपास के आदमियों पर गिरती हैं किन्तु बेचारी उस समय भी जबतक घायल नहीं होतीं उन लुटेरोंको कुछ नुकसान नहीं पहुंचातीं ; पासमें नदी हो तो बेशुमार मक्खियां और अंडे उसमें गिरकर मछली आदि जलचरोंके पेटमें जाते हैं। त्रिचनापलीके निवासी पहाड़के ऊपर से खांचेमें रखकर एक आदमीको नीचे लटका देते हैं। निलोरके निवासी छत्ते को तोड़ते नहीं ; मधु भाण्डार के ऊपर दो चार छेद करके नीचे एक बर्तन रखदेते हैं। कड़ापा, कर्नूल आदि स्थानोंके निवासी ऊंचे पहाड़से शहद लेनेके लिये नये बांसकी एक सीढ़ी बनाते हैं। कर्नूलमें एक विचित्र रिवाज है ; जो आदमी छत्ता तोड़ने जाय, उसका साला या बहनोई उसके पास खड़ा रहकर पहरा देता है।

पाठकोंको विदित होगया कि हिमालय प्रदेश, कश्मीर और कुर्ग प्रदेशमें मधुमक्खी पालनेका रिवाज कमरतसे जारी है। इसके सिवा बङ्गाल, पंजाब, सेनोर और खसिया पहाड़ पर कुछ कुछ मक्खियां पाली जाती हैं ; किन्तु कश्मीर या कुर्ग प्रदेशमें जिस ढङ्गसे वह पालीजाती हैं उसको ठीक मधुमक्षिका पालन नहीं कह सकते। मक्खियोंका दल घरमें लाकर एक हांडीके भीतर या दीवारके गढ़ेमें रख छोड़ना और मधु लेनेके समय धुआं देकर मधु मक्खियों को भगादेना मधुमक्षिका पालन नहीं कहलाता। आजकल जर्मन और अमेरिकन लोग जिस उत्तम रीतिसे मक्खी

पालते हैं वही रीति अवलम्बन करना चाहिये। भारतवर्ष के मधुम-
क्षिका पालकों का अपनी मक्खियोंपर केवल यही इख़तियार है कि
वह जब चाहते हैं उनको यां मारकर, भगाकर या धुएंसे बदहवास
करके मधु लेलेते हैं। किन्तु वैज्ञानिक रीतिसे मक्खी पालनेवालों
का मधुमक्खियोंके ऊपर पूरापूरा इख़तियार है वह जबचाहें इनको
जराभी कष्ट न देकर जरूरतके मुवाफिक मधु ले सकते हैं, बेरोकटोक
उनको विचित्र कारवाई अपनी आंखसे देखकर विशेष आनन्द पा
सकते हैं। एक दल मक्खियोंको चाहें तो कई दलोंमें बांट
सकते हैं, जरूरतके मुताबिक रानीसे राजकुमारी वाला
अण्डा उत्पन्न करा सकते हैं अथवा उस अंडेका घर काटकर
रानीका अण्डा देना बन्द करा सकते हैं! इतनाही कहना काफी
होगा कि आज कल के वैज्ञानिक मधुमक्षिकापालकों का मधु
छत्तेकी हरेक कोठरी और हरेक मक्खीपर पूरा पूरा अधिकार
रहता है। तिस परभी वह गंवार और अशिक्षितोंकी तरह मक्खि
योंको जराभी कष्ट नहीं देते। मधुमक्षिका पालनकी उन्नति होनेसे
सिर्फ यही नहीं हुआ है कि मधुमक्खियोंके ऊपर आदमियोंका
इख़्तियार बढ़ा है और पालनेके विषयमें जानकारी अधिक हुई है,
वरंच कह सकते हैं इनका सताना बिलकुल छूटगया है। पाठकोंने
पढ़ा है किभारतवर्षमें जहां जहां मक्खियां पालीजाती हैं प्रायःउन
संस्थानोंमें उनको बहुत सताया जाता है। और जंगली मधु
संग्रहके समय तो हजारों निरीह परिश्रमी जीवोंको रातके वक्त
उनके बटोरे हुए मधुसे वंचित करके, घरसे निकालकर धुएंसे
बेहोश करते हैं और आगमें जलादेते हैं। यों हरसाल कितनीही
बेचारी मधुमक्खियों की अकाल मृत्यु होती है। इसलिये यों
देशोंमें अबतक मधुमक्खियों से बड़ा निर्दय बर्ताव कियाजाता
था। डाक्टर बेवनने लिखाहै कि पहले इङ्गलैण्ड में दिहाती
आमतूर छत्तेसे मधु निकालते समय निर्दयी आमया एक गड्ढेमें
को दो चार दियासलाई जलाकर मक्खीके घरको उलटकर उस

रखदेताथा और कोई मक्खी भागने न पावे इसकेलिये चारों तरफसे मट्टी बटोर कर उसे अच्छीतरह बन्द करदेता था फिर ऊपरसे छत्ते को एक दोबार हिला देता। इससे सब मक्खियां गढ़ेमें गिर पड़तीं और वह आदमी छत्ते को वहांसे अलग कर गढ़ा बन्द कर देता। इसतरह पालक पिता अपनी पालिता मक्खियोंको जीते जी कब्र देकर उनका उद्धार करता! किन्तु धन्य है विज्ञानको जिसने मधुमक्खियोंको मनुष्योंके इस अत्याचारसे बचाया। दूसरे भागमें इस वैज्ञानिक रीति और उसकी आवश्यकीय सामग्रियोंका वर्णन करेंगे।

॥ इति ॥

निवेदन।

यह प्रबन्ध बङ्गभाषाके एक बहुत पुराने मासिकपत्रसे करके अनुवाद किया गया है। इसके असली लेखकका बाबू कालीकृष्ण बसाक बी॰ ए॰ हैं। आपने अलीपुरके मधुमक्षिका-पालक डगलस साहबकी बनाई पुस्तकोंके सहारे लिखा था। मैंने हिन्दी पाठकोंके मनोरञ्जनके लिये इसका तर करके पुस्तक रूपमें प्रस्तुत किया है। मोटाईके कारण पुस्तक आकार बड़ा न होने पर भी दो भाग करना पड़ा है।

इस पुस्तकमें जो कुछ है वह पाठक पढ़ही चुके दूसरे भा इसका शेष वर्णन होगा। हिन्दीमें प्राणी विद्याकी कोई पु नहीं देखी जाती और न इस ढङ्गकी पोथी लिखनेका रिवाज इससे मधुमक्षिका हिन्दीमें अपने ढङ्गकी पहली पुस्तक कही सकती है। जो हो, यदि इससे पाठकोंको कुछ आनन्द मिला तो मैं अपना परिश्रम सफल समझूँगा।

अनुवादक।

३८८८ २

आप पहिनो और अपने प्रेमियों को पहिनाओ

॥ श्रीः ॥

RAJNITIBHOOSHAN

॥ राजनीति भूषण ॥

सजि बहु भूषण अङ्ग नृप, शोभा लहत अपार।
राजनीति भूषण पहिन, लखहु नीति को सार ॥

जिसको
राजा, महाराजा और समस्त देश हितैषी सज्जनोंके
विनोदार्थ

पण्डित रामदीन,

(जसवन्तनगर जिला इटावा निवासी)
हिन्दी मास्टर महाराजा स्कूल किशनगढ़ ने बनाकर
"डायमन्ड जुबिलीप्रेस" कानपुर में प्रकाशित कराया

प्रथम वार १०००
दिसम्बर सन् १८९८ ई०

समर्पण

श्रीमान् !

यह तो हम भली प्रकार जानते हैं कि ऐसे २ रत्न पर आभूषण श्रीमान् ने आज तक सैकड़ों पहिन डाले होंगे, परंतु तोभी आज हम श्रीमान् को यह एक नये ढङ्ग का राजनीति भूषण और पहिनाते हैं यह भी श्रीमान् के विशाल हृदय में पड़ाहुआ कुछ न कुछ शोभा अवश्य देगाही इस हेतु इसे भी ग्रहणकर अपने सुकुमार शरीर को अलंकृत करें।

श्रीमान् का हितैषी
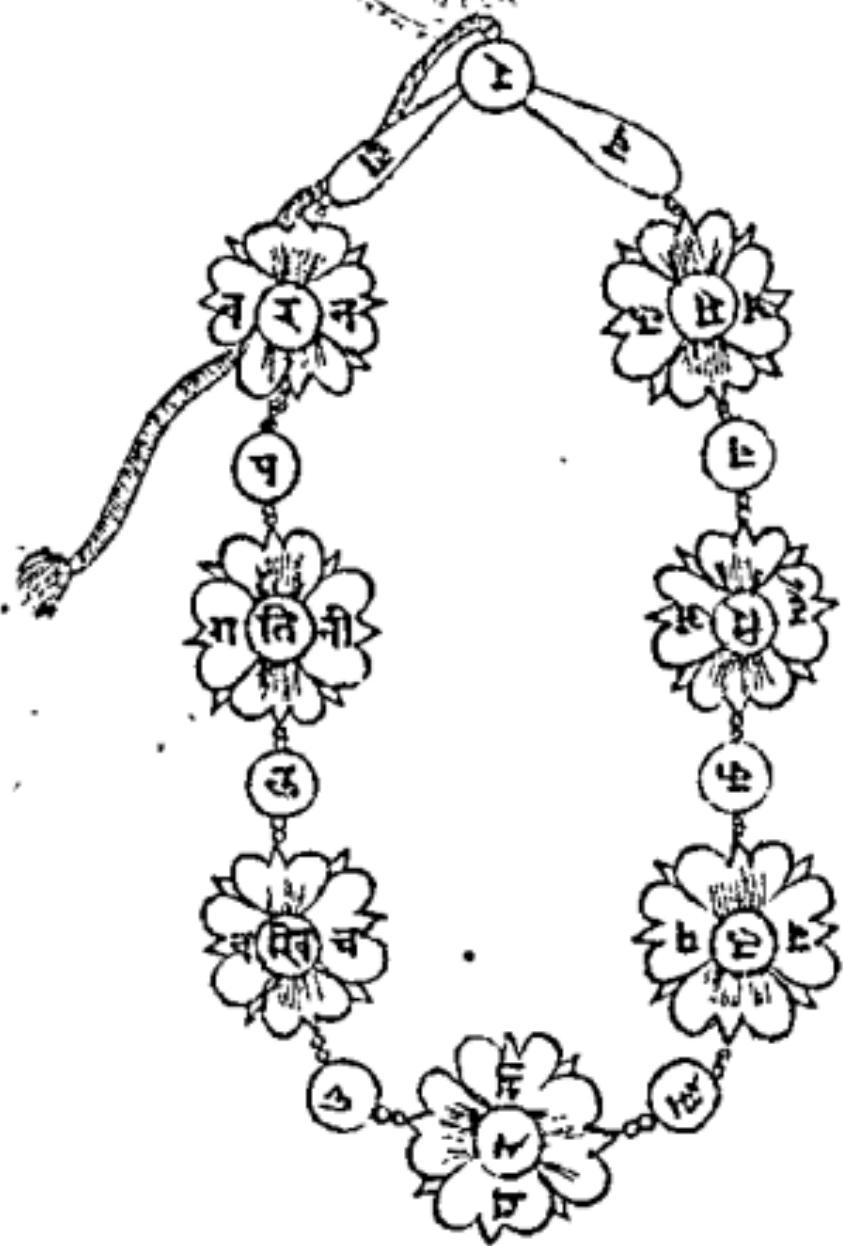
रामदीन

वर नरपति गति नीति लखि, चखि चखि उर धरमा
छल बल पल करि दरि अरि, नस अस लस बर हार

॥ ओ३म् ॥

॥ राजनीति भूषण ॥

॥ दोहा ॥

वन्दि अखण्ड अनन्त प्रभु, धरि विट्ठल को ध्यान ।
राजनीति भूषण रचौं, छमहु चूक मतिमान ॥१॥
नाना भूषण जब सजत, निज तनकों है मोद ।
यहूकों तब धारि हिय, लखहु विनोद प्रमोद ॥२॥
नाना भूषण रत्न सों, भूषित हो महाराज ।
राजनीति भूषण तऊ, पहिनो सहित समाज ॥३॥
भूषण अमित बनाय नृप, द्रव्य करो बरवाद ।
हारि हिये फिर किन चखहु, या भूषण को स्वाद ॥४॥
राजनीति वर आभरण, पहिनहु भूप उजास ।
उरहु खिलावहु हिय कमल, करहु सुनीति प्रकास ॥५॥
कारज दा नृप के सरैं, जाके चतुर प्रधान ।
लङ्का जीतो राम ज्यों, ले अङ्गद हनुमान ॥६॥

दण्ड दिये तें खलन कों. राजमान अधिकाय।
रावनादि को मारि ज्यों. यश लीन्हों रघुराय ॥७॥
तजत भूप वरवस्तु भल. प्रजहि प्रसन्न न देखि।
ज्यों रघुवर सीता तजी, लोक लाज अवरेखि ॥८॥
शत्रु विपक्षी जननि कों. राजा करत सहाय।
दियो विभीषण राम ज्यों, लङ्काधीश बनाय ॥९॥
भूप आपदा में फँसत; चोखो वस्तु निहारि।
खोई सीता राम ज्यों. सुवरन को मृग मारि ॥१०॥
कबहुंक नृप अपनी गरज; करहिं अधर्म अकाज।
ज्यों सीता सन्देश हित; वालि हत्यो रघुराज ॥११॥
ओछे जन के सङ्ग रहि; नृप ठकुराई जात।
गोप गोपिकन सङ्ग हरि; डोल्ये माखन खात ॥१२॥
अनुचित उचित जो नृप करैं; नाम धरैं नहिं कोय।
रुक्मनि कों हरि ले भगे; बुरो कहै नहिं कोय ॥१३॥
जासों जोर न चलिसकै; तासों करो न रारि।
गई प्रतिष्ठा रुक्म को; जब लिय बांधि मुरारि ॥१४॥
भावीवस अपयश लगत. चतुर भूप को आप।
झूठो मणि चोरो लगो. जैसे यादव राय ॥१५॥
निज अपयश मेटति नृपति. बहु विधि यत्न लगाय।
ज्यों जग यह कीरति लई. कृष्ण चन्द मणि लाय ॥१६॥
सवल शत्रु को मारिये. छल बल युक्ति लगाय।
कालयवन को ज्यों हत्यो. गुफा पैठि यदुराय ॥१७॥

६ से ११ तक का इतिहास रामायण में स्पष्ट है।

लखि अधर्म मारैं नृपति. सम्बन्धी किन होय।
कृष्ण पछाड़यो कंस को, जानत यह सब कोय ॥१८॥
छलयश धर्म अधर्म सब. करिये अवसर पाय।
राजा वलिको हरि छल्यो. वामन रूप बनाय ॥१९॥
मान महातम सब घटत. करत याचना भूप॥
बलि पै याचत ज्यों भये. श्रीपति वामन रूप ॥२०॥
वचन तजहिं नहिं भूपवर. तजहिं मान बरु देश।
एक वचन हित ज्यों तज्यो. मान पुत्र अवधेश ॥२१॥
नारिनि को विश्वास करि. राजा लहैं कलेश।
राम लखन अरु सीयकों. बन पठयो अवधेश ॥२२॥
अरिके सन्मुख नृप चतुर. अधरम सोचत नाहिं।
जीते दम्भ फरेब ज्यों, पारथ भारत माहिं ॥२३॥
अति अभिमान जुनृप करत. बहु कलेश जग लेत।
दुर्योधन अति मान ते, मरयौ कुटुम्ब समेत ॥२४॥
भभिन रूप धरि छल करत, सवल शत्रु सँग भूप।
जरासंध को पाण्डु सुत, छल्यो विप्र के रूप ॥२५॥
काहू को उपहास लखि. हँसत न भूप प्रवीन।
एक हँसी के कारने. पाण्डु भये सब दीन ॥२६॥
विषम भोग अधरम जुआ, नृप को करत विनास।
नल की गति जानत सबै, पाण्डु तनय वनवास ॥२७॥

१८ से २० तक का इतिहास महाभारत में है।
२१, २२ की कथा सर्वत्र प्रसिद्ध है (रामायण में देखो)
२३ से २७ तक की कथा महाभारत में है।

अति सबही की है बुरो, करियो ना नृप कोय।
ज्यों बलिनें अति दानतें, दियो राज निज खोय ॥२८॥
अति उदारता नृपन की, क्योंकर बरने कोय।
जैसे बलि हरिचन्द ने, सर्वसु दीन्हों खोय ॥२९
भूप वचन पलटैं नहीं, चाहे सर्वसु जाय।
वचन हेतु हरिचन्द ज्यों, बिके डोम घर आय ॥३०॥
समुझि बूझि के दीजियो, दुष्ट जननि अधिकार।
भूप परीक्षत ठगि गये, ज्यों कलियुग के द्वार ॥३१॥
महत जननि के शापकों, नृप नहिं सकत छुड़ाय।
नृङ्गी ऋषि को शाप ज्यों, हट्यो न तनक हटाय ॥३२॥
भेद भाव रखि नृपति सों, विगरि जात युवराज।
उग्रसेन सों रारि करि, कंस गमायो राज ॥३३॥
राजा निज मन की करैं, कोऊ कहो हजार।
एक न रावन सों चली, रहे विभीषण हार ॥३४॥
नष्ट होत वे नृप सकुल, विधवत करहिं न दण्ड।
हिरनाकुश कंसादि ज्यों, राजा मरे मचण्ड ॥३५॥
राजा है जे अति करैं, कुल आचार विहाय।
हिरनाकुश दसकन्ध ज्यों, उनको राज नसाय ॥३६॥
बैर करे पछितात हैं, निवल सबल के साथ।
सभा मांहि शिशुपाल ज्यों, मरो कृष्ण के हाथ ॥३७॥

२८, २९, ३० की कथा सर्वत्र प्रसिद्ध ही है।
३१ से ३३ तक की कथा स्पष्ट महाभारत में है।
३३ और ३७ की कथा महाभारत में है।

फूट ऊपजे राज की, निहचै होत विनाश।
फूटि विभीषण ज्यों कियो, रावण को कुल नाश॥३८॥
नाहिंभलो विधिकरि सको, नृप करियो सो काज।
चाप उठाइ न * नृप सके, ज्यों उति जनक समाज॥३९॥
कबहुं हानि निज नृपकरैं. वृथा रोकि युवराज।
हिरनाकुश प्रहलाद सम, ज्यों निज कियो अकाज॥४०॥
जुआ जुवेलहिं नृप परे, तो दुख लहैं अपार।
राज खोइ बहु दुख सहे. नल ज्यों चोपरि हार॥४१॥
है अपमानित सचिवहू, बुरो करत नृप साथ।
नाश कियो शकटार ज्यों, नन्द वंश इक साथ॥४२॥
बुधजन को अपमान करि, राजहु जात नसाय।
भाद पीच चाणक्य कों, ज्यों नृप नन्द उठाय॥४३॥
कबहुंक सेवक छल करत, नृप सुनियो धरि ध्यान।
ज्यों विषकन्या नन्द सँग. दे वपकें पकवान॥४४॥
आपुस में दुइ सबल नृप, लड़िभिड़ि करत अकाज।
पृथीराज जयचन्द ज्यों, अपनो खोयो राज॥४५॥
निरहि भूप पतोजि कै, मेम पात्र को घात।
मरो अलाउद्दीन ज्यों, अलादीन के हात॥४६॥

* रावनादि बड़े२ राजा।
३४, ३५, ३६, ३८, ३९, ४० और ४१ की कथा प्रसिद्ध है।
४२ से ४४ तक का इतिहास मुद्राराक्षस नाटक में देखो ४५ और ४६ का इतिहास आनरबल डाक्टर हण्टर साहब के इतिहास दूसरा खण्ड में देखो।

* चित न लगत हरिभक्त नृप, राजभपरामिन पाय।
घसे नागरी दास ज्यों, वृन्दावन में जाय ॥४७॥
निजमण निज गौरव रखैं. यहु दुख महि भूपाल।
है राना चित्तोर यश. विदित जगत में हाल ॥४८॥

* कृष्णगढ़ के भूत पूर्व महाराजा सावन्तसिंहजी उपनाम नागरीदासजी संवत् १८१४ द्वतीअ आश्विन शुक्ल १२ को राज्य के समस्त सुखों से मुंह मोड़ अपने कुंवर सरदारसिंहजी को युवराज बना श्रीवृन्दावन चले गये थे हरि प्रेम में निमग्न हो समस्त राज्य सुख आपको जैसे फीके जचने लगे थे वो भाव आपके इन दोहों से कैसा टपकता है।

जहां कलह तहँ सुख नहीं. कलह सुखन को मूल।
सबल कलह इक राज में. राज कलह को मूल॥
मेरे या मन मूढ तैं. डरत रहत हौं हाय।
वृन्दावन की ओर तैं. मति कबहूं फिरि जाय॥
लेत न सुख हरि भक्त कौ. सकल सुखनि कौ सार।
कहा भयो नृपहू भये, ढोवत जग बेगार॥
और भौन देखौं न अब. देखूं वृन्दा भौन।
हरि सों सुधरो चाहिये. गबही बिगरै क्यौंन॥
ब्रज में है है कहत दिन. कितै दिये लै खोय।
अबकैं अबकैं कहतही. वह अबकं कब होय॥
राज घटे बढे देत हरि. दिन में लाख करोर।
पै काहू को नाहि वै खींचत अपनी ओर॥

४८ चित्तोड़केवीरराणाओंकावीरत्वराजस्थानादितवारीखों

कबहुं शत्रु सँग छल करत, राजा युक्ति लगाय।
सेवाजी नृप ने हत्यो, अफजल हाथ मिलाय ॥४९॥
नृप सों लखि अपनी गरज, करत दगा युवराज।
शाहजहाँ बन्दी कियो, ज्यों औरँग ले राज ॥५०॥
प्रभु पद रति रखि भक्त नृप, शोभा लहत अनूप।
दीक्षित भूप जवान को, लखो जगतमें रूप ॥५१॥
बुरे आचरण छाँड़ि नृप, औरनि देत छुड़ाय।
नृप रामानुज देव ज्यों, दिय मद पान हटाय ॥५२॥
अनुगति को मेटहिं नृपति, करहिं सुरीति प्रचार।
* ज्यों प्रताप मरु देश में, किये अनेक सुधार ॥५३॥
समय समय नृप निज जननि, देत यथोचित मान।
ज्यौं रानी विक्टोरिया, करैं खिताब प्रदान ॥५४॥

---

(४९) इसका इतिहास दक्षिण देश के महावीर सेवाजी महाराज के जीवनचरित्र में पढ़ो।

(५०)-इसकी कथा आनरबल डाक्टर हण्टर साहबके इतिहास दूसरे खण्ड में स्पष्ट है।

(५१)-कृष्णगढ़के वर्तमान महाराजा शार्दूलसिंह जी (जी० सी० आई० ई०) के लघुभ्राता महाराज जवानसिंहजी

(५२)-रीवां के वर्तमान महाराजा व्यंकट रमण रामानुज प्रसाद सिंहजू देव जी० सी० एस० आई०

* जोधपुर के परलोक वासी महाराजा जशवन्तसिंह जी जी० सी० एस आई० के लघुभ्राता महाराज कर्नलसर प्रताप सिंहजी, जी० सी० एस० आई एल० एल० डी

बड़े भूप के दूत कों, छेड़ि लहहिं दुख कूप।
रजोदृष्ट को अन्न ज्यौं, बिगरत राज अनूप ॥५४॥
क्रोध यथोचित चाहिये, नृप में नीको सोय।
न्यूनाधिक ज्यौं लौन तें, भोजन ठीक न होय ॥५६॥
प्रजा सबहू दुख लहैं, निर्बल नृप के सङ्ग।
मर्दन खण्डन तीय सँग, ज्यौं कुच अधर सुअङ्ग ॥५७॥
प्रजा भलाई नित करहिं, दुख सहि सहि भूपाल।
ज्यौं सब के उपकार कों, मार सहैं घरियाल ॥५८॥
प्रजा भलाई नृप करहिं, तदपि प्रजा भय खात।
* प्लेग निवारक छापसों, ज्यौं जन रहे डरात ॥५९॥
पण्डित जन के मध्य में, मूरख नृप को बात।
ज्यौं कोयल कलगान में, कागा बोल सुहात ॥६०
धीरे धीरे श्रम करत, कठिन काज है जात।
रस रस पानी पाइ ज्यौं, सरिता सर लहरात ॥६१
राजा तजहिं न चाल कुल, नीच तुरत इतराँय।
ज्यौं समुद्र इक रस रहैं, नदी तोरि तट जाँय ॥६
हित करि नृप अपनो समुझि, वचन ताड़ना देत।

* जब संवत् १९५४ और १९५५ में प्लेग अर्थात् मह के फैलने पर अँगरेजी सर्कार ने महामारी से पीड़ित स्थानाम हाफकिन साहब के टीका का रिवाज दिया और प्रत्येक स्टे शन पर महामारी निवारणार्थ डाक्टरोंको रखकर क्वारेण्टा यन आदि प्रयन्ध किये, तब प्रजा ने भयभीत होकर अपनी मूर्खता वश बड़ा असन्तोष प्रकट किया था।

पढ़िये हित शिशु ज्यों पिता, त्योंही होत सचेत ॥६३॥
लरैं नहीं नृप तऊ चढ़त, सैना अमित सनाथ ।
धरैं नाहीं अवनि पैं; तदपि धन घहराय ॥६४॥
मन्त्री होइ सुजान तो, बिगरो भूप बनाय ।
टूटे भूषन कनक ज्यों, सोनी लेत बनाय ॥६५॥
पाछे कारज कीजिये, प्रथमहिं यतन विचार ।
युगल हाथ सें तैर कैं, लहत उदधि को पार ॥६६॥
राज रूप सर में उठैं, मद को कठिन तरङ्ग ।
नीति नाव चढ़ि पार है, मन्त्री खेवट सङ्ग ॥६७॥
परे रहैं बेसुधि सदा, करैं सुरा नित पान ।
ऐसे मदमाते नृपति, हैं पाषान समान ॥६८॥
मन्त्री रोकहिं पाप तें, तो शठ नृप अनखात ।
जैसे हित कर औषधी, रोगी देखि घिनात ॥६९॥
नीति निपुण नृपके निकट, मीत कूट खुलि जाय ।
ज्यों मराल के निकट ही, छीर नीर अलगाय ॥७०॥
कंचन संगति पाइ ज्यों, मानिक छवि अधिकाय ।
त्यों बुध सचिव समाज सें, नृप शोभा बढ़िजाय ॥७१॥
नीति निपुण राजानि के, कहवे वचन सुहात ।
ज्यों केसर की कटुकता, भरो करैं मन सात ॥७२॥
निर्बल नृप तें सबल नृप, वस्तु लीनि ले जात ।
ज्यों पक्षार शिकार कों, श्वान झपट लै खात ॥७३॥
दूर दूर पै वस्तु लखि, सकत न चित ठहराय ।
छनि मणि धरो सर्प ज्यों, जावे सकल बलाय ॥७४॥

शत्रु वर्ग कौं हित समुझि, भूप करैं निर्मूल ।
फसल भलाई लखि कृषक, रखहिं न तृणको मूल ॥७५॥
राजा पीड़ित होत हैं, परजा को दुख देखि ।
मन को पीड़ा ज्यौं अमित, तनको दुख अवरेखि ॥७६॥
विपति कालको पायहू, राजा नहिं घबरात ।
बन्धनहू में ज्यौं परयो, सिंह नहीं भय खात ॥७७॥
राज काज कौं नृप चतुर, नित प्रति देखत आप ।
जैसे पुत्रनि को चलन, लखत सदा मा बाप ॥७८॥
राज वही जा राज में, प्रजा बसें सुख पाय ।
पुत्र वही सुख देहिं जो, मित्र जो करहिं सहाय ॥७९॥
नृपहू को दूषन लगे, खोटो संगति पाइ ।
जुआ मध्य ज्यौं सुजन को, पुलिस बांधि ले जाइ ॥८०॥
सचिव बुरे रखिये नहीं, राखि न कीजिय बात ।
जैसे गये बँबूल बन, छिदैं कण्ट कन.गात ॥८१॥
कष्ट परेहू सूर नृप, लेवत सुयश उजास ।
अग्नि माहिं चन्दन जरै, फैलै तऊ सुवास ॥८२॥
राज पाइ विद्या बिना, शोभा देत न भूप ।
बैठो काग पलाश पै, होय न हंस स्वरूप ॥८३॥
दुष्ट नृपति सम्मुख कहा, पण्डित जन को मान ।
भगरन के कठ गान कौं, जैसे भैंस अजान ॥८४॥
बुरो न होवै नृप चतुर, प्यार करो किन कोय ।
सहस बार खाटी करै, खांड न खाटी होय ॥८५॥
अन्याई राजानि कौं, करो गुहारै कौन ।

करो कौनहू यत्न पै, रुकै न चलतो पौन ॥८६॥
समय दशा कुल देखि के, करो सकल व्यवहार।
तै सिय दीजै पीठ तब, जैसो बहै बयार ॥८७॥
सचिव वैद्य गुरु गुप्तचर, प्रिय बोलहिं नृप त्रास।
राज देह अरु धर्म धन, तो सबही को नास ॥८८॥
बिनहिं याचना नृप बड़े, सब की पूरैं आश।
को याचत है सूर कौं, घर घर करत प्रकाश ॥८९॥
चतुर नृपति पाकर समय, करत प्रजा उपकार।
ज्यौं वर्षा ऋतु पाइकर, बादल वृष्टि अपार ॥९०॥
संकटहू में नृप बड़े, पर की पूरे आश।
ज्यौं रवि परि बदरानि में, करैं अँधेरो नाश ॥९१॥
निन्दा करैं जु दुष्ट जन, नृप को घटै न मान।
नहिं अल्प धहिरे कहैं, भगवन के फल गान ॥९२॥
अति लालच जे नृप करैं, ते इक दिन पछितात।
आमिष लालच मीन ज्यौं, कण्टक कण्ठ छिदात ॥९३॥
अति सोभा नृप पाइ कै, सेवक करहिं न कान।
जहँ सोभा कुतवाल ज्यौं, करत प्रजा मन मान ॥९४॥
राजा को नहिं फबत है, कियो नीच को साथ।
सुधा सुरा भाषे जगत, लखि कलाल के हाथ ॥९५॥
राजा जस संगति करै, तैसोइ पकड़ै ढङ्ग।
जैसे वस्त्र सफेद पै, चढ़त सकलही रङ्ग ॥९६॥
अरि सौं प्रीति न नृप करत, लाख कहौ किन कोय।
जैसे पावक नीर को, कबहू साथ न होय ॥९७॥

राजा के प्रिय वचन तें, परजा को दुख जाय।
जैसें शोतल नीर तें, पय उफान मिटि जाय॥९८
वैभव शाली नृपति कों, नीकै सकत न देखि।
जैसे घूर प्रकाश कों, मिचत आंख अब रोखि॥९९
बिन विद्या सोहत नहीं. राजा रूप निधान।
गन्धहोन ज्यों नहिं फबत. टेसू फूल जइान॥१००
नृप की उन्नति तें सदा. परजा उन्नति होय.।
कमल बढ़ै संग नोर के. जानत यह सब कोय॥१०
अपराधो कौं नृपति जो. घोर दण्ड नहिं देत।
तो निर्बल जन सबल भय. सुख निद्रा नहिं लेत॥१०
बुरे भले नृप के अछत. प्रजा वर्ग भय खात।
ज्यौं माटी के पुरुष भय. बन पशु खेत न जात॥१०
जहँ सुनोति तहँ, धर्म है. अघ अनीति के ठौंव।
होत न वापी वाटिका. ज्यौं वानरियन गांव॥१०
अरि लघुहू न विरोधिये. निहचै करै बिगार।
रजहू माथे पर चढ़त. देखो ठोकर मार॥१०
देशकाल लखि नृप चतुर, छांड़ि चलैं निज चाल
सब जग ज्यौं टेढ़्यो फिरै, बांबो सूधो व्याल॥
दुष्ट न छांड़त दुष्टता, रहि राजनि के सङ्ग
निज गुण कौं बदले न ज्यौं, हींगकपूर प्रसंग॥१०
करैं अकारज आपनो, राजा प्रजहिं सताय
पाइ कुल्हाड़ी मूढ़ ज्यौं, मारत अपने पाय॥१
सुख दुख में राजा चतुर, चलत एकसो चाल

सिन्धुर हैं ज्यौं एक रस, वरषा ग्रीषम काल ॥१०९
महो समपर द्रव्य कों, जननी ज्यौं परदार।
मान सदृश सबकों नृपति, देखत एक विचार ॥११०॥
होत भले दरबार में, भले भलोही बात।
मान सरोवर हंस ज्यौं, मोती चुगि चुगि खात ॥१११॥
सत्य न्याव नृप जो करै, तो परजा अधिकाय।
पावस ऋतु कों पाइ ज्यौं, उपजततरु समुदाय ॥११२॥
राजा मेघ समान है, परजा को आधार।
मेघ विना कछु रहि सकै, नृप विनु परै न पार ११३॥
राजा की श्री हीन लखि, मन्त्री जात पराय।
जैसे बासी फूल कों, मधुकर छुवत न आय ॥११४
वृथा दर्काहें नहिं भूप धर, बोलहिं अवसर पाय।
जैसे बोयो समय को, बीज वृथा नहिं जाय ॥११५॥
करत निरन्तर चतुर नृप, राज काज मन लाय।
ज्यौं चकोर शशि को सदा, देखै दोड़ि लगाय ॥११६॥
दुष्ट जननि के सङ्गरहि, राजा बचत न साफ।
ज्यौं चोरन के सङ्गरहि, बांधे जात सराफ ॥११७॥
शत्रु रक्षक त्यागि कैं, राजा सुयश न लेत॥
ज्यौं भूसी से अलग है अन्न न उपज खेत ॥११८॥
मूरख को जहँ मान बहु, अरु पण्डित उपहास।
ऐसे राज अबूझ में, बुध जन रहत उदास ॥११९॥
यत्नहू में शत्रु लखि, राजा निकट न जात।
परे बैंद मृगराज सों, जैसे सकल डरात ॥१२०

राजा जिहिं को पीठ पै, तिहिं को सकै सताय ।
धर्यो दीप कण्डोल ज्यौं, सकत न पवन बुझाय ॥१२१॥
निज जन को रक्षा करत, राजा यत्न विचार ।
मरन न दैवै गोट ज्यौं, चौपरि चतुर खिलार ॥१२२॥
राजा शूर अशूर मैं, अन्तर नहीं लखात ।
क्षमा वीरता धूर्तता. इन सौं जाने जात ॥१२३॥
भीतर में नृप को दशा. सोचनोय किन होय ।
पै ऊपर के ठाठ से, मर्म न जानै कोय ॥१२४॥
विपति परेहु चतुर नृप. तनकु न होत अधोर ।
ज्यौं परवत डोले नहीं, के तो चलो समोर ॥१२५॥
नृपति वही जो विनु कहे, करै प्रजा हित काम ।
ज्यौं पलकैं विनही कहे, नैननि देहिं विराम ॥१२६॥
अनमाने के सङ्ग रहि. विसरि जाय नृप नीति ।
ज्यौं मधु को घृत सङ्ग तैं, गुणहोवे विपरीति ॥१२७॥
पलटत नाहीं बात वह. नृप जो आप क़दन्द ।
निकसि न पीछे बड़ि सकत, ज्यौंगयन्द के दन्त ॥१२८॥
प्रजा वर्ग को हित समुझि. कर लेवे भूपाल ।
ज्यौं महि थोरो अन्नले. बहु उपजावे माल ॥१२९॥
मर्म बात को खोलि नृप. पुनि पाछे पछितात ।
भेद लगत वन माहिं ज्यौं, केहरि मारे जात ॥१३०॥
राजा चैन न पावहीं, चतुर सचिव करि दूर ।
बिन जल लीन्हों कूप कौं माटो पायर * पूर ॥१३१॥

* भरकर ।

चोर साहु को देत ना, जो नृप दण्ड इनाम ।
तिन्हैं भृत्य गन अस गिनैं, पति नपुंस ज्यौं बाम ॥१३२॥
शक्ति हीन नृप कौं समुझि, पर जाहू इठलात ।
निर्धन सौं गनिका कबहुं, सीधे करत न बात ॥१३३॥
जो जिहि कारज में कुशल, सो तिहि करत निशङ्क ।
कागद पै असि नोक तैं, लिखे न जावैं अङ्क ॥१३४॥
बुद्धिहीन लखि नृपति को, बुधजन दूर पलान ।
जैसे निष्फल वृक्ष कौं, खग विहङ्ग तजि जात ॥१३५॥
छोटेको निहिं बिसरिये, सुनो बात महराज ।
परे सुई को काम जब, असि सौं सरै न काज ॥१३६॥
दुष्ट जनन के सङ्ग में, राजा सोहत नाहिं ।
ज्यों मराल सोहत नहीं, काग मण्डली माहिं ॥१३७॥
मूरख जनकी बात सुनि, राजा नाहिं रिसात ।
ज्यों सुनि शब्द सियार को, सिंह नहीं अनखात ॥१३८॥
पण्डित को उपदेश वर, सन्मुख मूढ़ महीप ।
भूषणभूषित वर तिया, जैसे अन्ध समीप ॥१३९॥
जैसे जल लै कूप ते, सींचत कृषक जमीन ।
त्योंहि निज जन को सदा, पालहिं भूप प्रवीन ॥१४०॥
अति अनीति सौं जे नृपति, कर लेवैं अधिकाय ।
नदी तीर के वृक्ष सम, ते नृप जात नसाय ॥१४१॥
कारज जैसो सोचिये, जस होवे औचान ।
ज्यों सियार मानै बड़ा, सिंह हनन को बात ॥१४२॥
पुरुष दुष्ट या देश में, जहां न राजा होय ।

रवि को जहां मकाश नहिं, दीप मकाशित होय ॥१४३॥
कारज को आरम्भ करि, राजा लेत विचार।
उलटी सूधी चाल को, जैसे चतुर खिलार ॥१४४
वैरी को न फौजिये, दूर रहो भय खाय।
ज्यों शीतल अरु तप्त जल, दवै अग्नि बुझाय ॥१४
राजा जो अनुगति करै. परजो कार्य जाय।
रक्षक जो भक्षक बनै, तौ फिर कवन उपाय ॥१
करन चहो जा काजको, प्रथमहिं लेहु विचार
ऊंट न जावै यतन सों, ज्यों चूहा बिलद्वर ॥१४७॥
निबल सबल के पसतैं, ददत बदत बदिजोत।
पाछे बहु दुख सहत हैं. ज्यों जलमैंगजळमात ॥१४८॥
राज मान बहु पाइकै. गुन बिनु बड़ो न कोय।
कंचन को घट होय कंऊ. गुन. बिन लहै न तोय ॥१४९॥
तत्त्व बात को लेत लखि, राजा यत्न लगाय।
दधि सों ज्यों जन लेतहैं, माखन को अलगाय ॥१५०॥
नीच चलैं नृप को निदरि. तो नहिं नृपति रिसात।
ज्यों भूंपत लखि स्वानकों, गजपति जात सिहात ॥१५१
राजा लघु सङ्गति करै, तो होवै परिहास।
ज्यों कागन के सङ्ग में, राजहंस उपहास ॥१५२
संपति में इक कृपणनृप. नहिं पूरहिं पर आस।
पावस ऋतु में नहिं फले, जैसे एक जवास ॥१
इङ्गित अरु आकार तैं, जानि। लेत नृप बात
कहत मृगको मर्म ज्यों. देखि चौकने पात ॥१

सहि कलेशहू नृप बड़े, निज जनकों सुख देत।
निज आश्रित के तापकों, ज्यों तरुवर हरिलेत १५५॥
राजा ही अन्याय करि, डारैं करको मार।
परजा तो कासों कहैं, वाको अत्याचार ॥१५६॥
दुष्ट वचन वेधैं नहीं, क्षमा ढाल जा पास।
जोर अग्नि को कह चलै, जहां न हो तृण घास ॥१५७॥
बुरो कहेतें खलन के, राजा बुरो न होत।
कह उलूक जो तम लखे, रविके होत उदोत ॥१५८॥
राजा सोई धन्य है, शशि समान जो होय।
रवि को कहा सराहिये, तपै जु उड़गन खोय ॥१५९॥
भूमण्डल कों जीतिहू, राजा नाहिं सिरात।
सकल वस्तु कों जारि ज्यों, पावक नाहिं अघात ॥१६०॥
कष्ट परे हू शूर, नृप, करहिं न ओछो काज।
वन्धनहू में घास ज्यों, खावहिं नहिं मृगराज ॥१६१॥
नृप जो चाहत सो करत, रुकत न रोंकहिं कोय।
* गज मेरक सों नहिं रुकैं, हस्ती मस्ती होय ॥१६२॥
विन देखे दिया नसै, और तँबोली पान।
त्योंहीं नृप को राजहू, निहचै बिगरो जान ॥१६३॥
नहिं विवेक जा राज में, तहां सहैं दुख सब।
ज्यों अधर्म पुर इक बंध्यो, * साधू विन अपराध ॥१६४॥
मिष पादी खल जनन सों, राजाहू ठगि जात।

* महावत

* इसकीकथा,बाबूहरिश्चंद्र रचित अंधेर नगरीनाटकमें देखो

ज्यों बीना को मधुर सुर, सुनि मृग मारे जात ॥१६५॥
निज गुण नृप छाड़त नहीं, खोटो पाइ प्रसङ्ग ।
चन्दन तजै न गन्ध ज्यों, लपटें रहत भुजङ्ग ॥१६६॥
नीति निपुण नृप राज में, दुष्ट नष्टह्वै जात ।
बरषा ऋतु को पाइ ज्यों, सूखि जवास नसात ॥१६७॥
प्रीति करो नृप बैर करि, हैहै तो इहि भाय ।
गुन तोरे जोरे बहुरि, दोय गैंठि परिजाय ॥१६८॥
निज शत्रुन को जब हतैं, नृप वैभव तब होय ।
रवि को होत प्रकाश ज्यों, प्रथम अँधेरो खोय ॥१६९
सैना रक्षक नृपति ज्यों, नृप रक्षक त्यों सैन ।
नयन सहाई पलक अरु, पलक सहाई नैन ॥१७०
राजनि के रहि सङ्ग में, रंकहु धनपति होय ।
ज्यों पारस के सङ्ग तें, लोहा कञ्चन होय ॥१७...
मन्त्री नृपति न छाड़िये, जब लगि मिलै न और ।
बिनु पग रोपे आगिलो, दूजो धरो न दौर ॥१७१॥
चतुर नृपति निरनय करै, साँच झूठ बिलगाय ।
राजहंस पय ज्यों पियै, छोर नीर बलगाय ॥१७२॥
थोरे उन्नति हानि है, नहिं होवै अकुलाय ।
रस रस ज्यों जल बिन्दु सों, गाढो घट भरिजाय ॥१७३॥
नीतिनिदान राजानि को, सुयश जात यों फैल ।
निर्मल जल के ऊपरैं, पसरि जात ज्यों तैल ॥१७४॥
कोटि जतन ज्यों नृप करै, त्यों भगाय है जात ।
टूटे पर भूषन बनत, ज्यों हँसे पनि जात ॥१७६॥

कहा भूप निज राज में, चलै न जाकी बात।
भयो कहा कोतवाल है, चोरनि देखि पलात ॥१७७॥
भृत्य अनीति करैं तदपि, राजा को बदनाम।
भगै सैन रनभूमि ज्यौं, होत नृपति को नाम ॥१७७॥
विपति परे नृप के जियत, क्लेश न पावै कोय।
तौ लगि जरै न दूध ज्यौं, जो लगि पानी होय ॥१७९॥
अति अनीति लखि नृपति की, प्रजा समूह रिसाहिं।
पाथर मारैं नरनि ज्यौं, मधुमक्खी उड़ि खाहिं ॥१८०॥
आदि अन्त फल सोचि के, कारज करिये दौरि।
सिकता देइ न तेल ज्यौं, कोल्हू माँहि मरोरि ॥१८१॥
जो बल पौरुष ना करै, वा नृप को भय नाहिं।
ज्यौं माटीके बाघ सों, लघु बालक न डराहिं ॥१८२॥
हठी नृपन के सङ्ग में, सचिवन बात चलैन।
जैसे चोखो तीरहू, पाथर माहिं विधैन ॥१८३॥
नृपति भलो तौ सब भलो, भलो न वा बिन कोय।
नृप गढ़ टूटे ज्यौं नगर, बारह बाटो होय ॥१८४॥
नृप समान देखत सबै, पक्षपात करि दूर।
घर घर करै प्रकाश ज्यौं, भेद भाव तजि सूर ॥१८५॥
सदा राज ना थिर रहै, सदा न जीवैं कोय।
सदा न जोबन ही रहे, सदा न पून्यौं होय ॥१८६॥
यदपि भूप हितको करै, तदपि प्रजा भय खाय।
* गोदन वारो देखि जन, बालक लेत लुकाय ॥१८७॥

* वैक्सिन नेशन (टीका) लगाने वाला

अरि सों प्रीति न नृप करत, लाख कहौ किन कोय।
जैसे पावक नीर को, कबहुँक साथ न होय ॥१८८॥
जे कम हिम्मत नृपति हैं, तहाँ न निबहै टेक।
काचे घट में नीर ज्यौं, नहिं ठहरत छिन एक ॥१८८॥
राजा जो अजुगति करै, नाम धरै नहिं कोय।
ज्यौं शिवकी लखि नग्नता, बुरो कहै नहिं कोय ॥१९०॥
राजा और बड़ेन की, ईश्वर करत सहाय।
घर घर टुकड़ा कारने, ज्यों गयन्द नहिं जाय ॥१९१॥
अति अजान नृपके सुढिग, चलत न युक्ति मयान।
असिविद्या जाने न ज्यौं, तिहिं ढिगकहा कृपान ॥१९२॥
आछे नृप के राज में, खल जन को उपहास।
प्रगटे ज्योति दिनेश की, ज्यौं खद्योत प्रकाश ॥१९३॥
जो मलीन नृप रहत तौं, करै प्रजा अपमान।
नर को रूप कुरूप लखि, जैसे भूंकत स्वान ॥१९४॥
क्षुद्र लोग मिलि बल करैं, तो नृप नाहिं डराहिं।
कहुँ स्यारन के झुण्ड सन, केहरि मारे जाहिं ॥१९५॥
नीति निपुण राजानि को, कह करि सकै कुसङ्ग।
जैसे कालो कामरो, चढ़त न दूजो रङ्ग ॥१९६॥
चमर छत्र यह ठाठ सों, राजा जानें जात।
तुरई भोंपू अरु घना, लखि ज्यों कहत बरात ॥१९७॥
ज्यौं निज सों राजा ठगत, त्यों परसों न ठगन्त।
दीप शिखा पै ज्यौं शलभ, अपने आप पड़न्त ॥१९८॥
लघु जन अवसर पाइकै, यह पहुंचावत हान।

ज्यों लघु कोरो शुण्ड घुस, लेवैं गज के प्रान ॥१९९॥
राजा राज करैं सही, और लेत सुख भोग ।
पण्डा माल उड़ावहीं, हरी वासना जोग ॥२००॥
अनुगति करहिं न भूप घर, भले राजहू जाय ।
कै हंसा मोती चुगै, कै भूखो मरिजाय ॥२०१॥
अवसर बीते नृप चतुर, करत न सोच विचार ।
सुधा काम आवै न तब, जब यम लेवै मार ॥२०२॥
सुयश लहैं जग में बड़े, लघु जन करहिं सुकाम ।
सैना लड़ि भिड़ि गढ़ लहै, होत भूप को नाम ॥२०३॥
शिशुहू खेलहिं खेल वह, जिहि कुल जो अभ्यास ।
वणिक पुत्र * तोला तुला, नृपसुत नीति प्रकास ॥२०४॥
सार्व भौम को राज लहि, राजा नाहिं अघात ।
घृतकों पावक पाइज्यौं, अधिकअधिक अधिकात ॥२०५॥
राज मान बहु बुद्धि बल, नसत समय कों पाय ।
जैसे सूर प्रकाश हू, सन्ध्या को मिटि जाय ॥२०६॥
बाँके नृप को राज में, अधिक दिव दवा होय ।
जस दुतिया के चाँद कों, सीस नवै सब कोय ॥२०७॥
कै सम सों कै सबल सों, राजा ठानत रारि ।
जीतैं तो कीरति लहैं, अपयश लहैं न हारि ॥२०८॥
बैर अकारन भूप जो, करहिं निबल के सङ्ग ।
जीते पै अपयश लहैं, हारे महिमा भङ्ग ॥२०९॥
कहा भयो नरपति भये, जो नहिं चलै सुचाल ।

---

* बांट और तराजू

सुन्दर फूल अफीम ज्यौं, भरे विषम विष ज्वाल ॥२१०॥
बुद्धि हीन नृप के सु ढिग, चतुर सचिव अरु दास।
जैसे दर्पण फवत है, धरो अन्ध के पास ॥२११॥
नहिं पछितावें नृप चतुर, हार जीत जो होय।
घटै बढ़ै शशि की कला, जानत यह सब कोय ॥२१२॥
बढ़न न दीजो शत्रु को, दीजो मूल नसाय।
बढ़त बढ़त लघु रोग ज्यौं, अधिक २ गरुआय ॥२१३॥
लहैं मान अरु सम्पदा, निज उद्योग नरेश।
परे गुफा मृगराज मुँह, मृग नहिं करत प्रवेश ॥२१४॥
आनि घटै जो विपति तब, प्रथमहिं करौ उपाय।
अग्नि लगे जब घर कुँआ, क्योंकर सकत खुदाय ॥२१५॥
पण्डित अरु गजराज कौं, मनभर देवें भूप।
ओस बिचारी कह करे, तृषा मिटावहिं कूप ॥२१६॥
बुधजन ढिग राजा लसत, नीच नीच के पास।
जैसे हस्ती राज गृह, खर कुम्हार के वास ॥२१७॥
चतुर नृपति निज सङ्ग में, बहुतनि लेत निभाय।
ज्यौं गाड़ी बड़ रेल की, अञ्जन इक ले जाय ॥२१८॥
बुद्धि हीन जानें न नृप, राजनीति को सार।
केहरि की ज्यौं पात्र कौ, जानत नाहिं सियार ॥२१९॥
ऊपर की शोभा लखै, काम परे सुधि जाय।
कांचे रङ्ग को रूप ज्यौं, धूप माहिं उड़ि जाय ॥२२०॥
भलो बुरो नृप जो करत, प्रजा देत सब जान।
मद्दा मिरचा जीभ ज्यौं, तुरत देत पहिचान ॥२२१॥

बिना सिखाये नृप चतुर, सीखहिं कुल की रीति।
निकरत ज्यों कच्छप तनय, जलपै फिरत अभीत २२२॥
व्यसन विषय आसक्त नृप, नसत आपदा पाय।
दीप शिखा पै मोहबस, सलभ गिरत जिमि आय २२३॥
सज्जित सैना शस्त्र लखि, सकै न शत्रु सताय।
सहजहिं बेर न तोरियत, कण्टक को भय खाय ॥२२४॥
परजा से कर लेत नृप, परजहिं देत लुटाय।
भाफ रूप जल खींच रवि, ज्यों देवै बरसाय ॥२२५॥
नृप के ओछे सङ्ग कौं, लघुमति सक न छुड़ाय।
कमल नाल के तन्तुसों, किमि गज बांध्यो जाय ॥२२६॥
लखि अकाज मुखिया पकरि, दण्ड देत नृप सूर।
राहु ग्रसै शशि सूर कौं, अरु उडगन सौं दूर ॥२२७॥
मर्म बात को राखि जिय, राजा खोलत नाहिं।
अपनी सम्पति सूम ज्यों, गाड़ि घरै महि माहिं ॥२२८॥
कारज चोखो नृप करै, प्रजा लखहिं नुकसान।
* जन संख्याज्यों होतलखि, लखतअकाजअजान२२९
तनक तनक धन लेत नृप, दैयत सों कर द्वार।
काटि करै तरु एकसे, जैसे माला कार ॥२३०॥
घटत घटत नृप राजहो, रहैं सु जीव अनेक।
उडगन ज्यों के त्यों रहैं, घटै बढ़ै शशि एक ॥२३१॥
अति सूधो नृप कौं समुझि, शत्रु लगावहिं घात।
जैसे बन तैं सरल तरु, काटि काटि ले जात ॥२३२॥

* मर्दुम शुमारी

दुखहू में नहिं होत हैं, नृप मन में भय भीत।
जैसे बन्धन माहिं बँधि, केहरि रहैं अभीत ॥२३३॥
अगुआ राजा होय तो, चलत सकल हरषाहिं।
ज्यौं गाड़ी बहु रेल की, अञ्जन के सँग जाहिं ॥२३४॥
गुन वारे को देत नृप, बहु सम्पति अरु मान।
बिनु गुन नीर पताल तें, कियो काढ़ि को पान ॥२३५॥
धरौ पाँव ज्यौं आँखि सों, महि की ओर निहार।
त्योंहीं सब कारज करो, मन में सोचि विचारि ॥२३६॥
ज्यौं इक इक जल बिन्दु करि, खाली घट भरिजात।
त्योंहीं विद्या धर्म धन, रस रस सों अधिकात ॥२३७॥
समय समय पर नृप चतुर, सब कों देत चिताय।
साठि मिनट पै ज्यौं घड़ी, घण्टा देत बजाय ॥२३८॥
चतुर नृपति देखत सदा, निज जन कों इक सार।
तरुवर छाया ज्यौं करैं, सब पै एक प्रकार ॥२३९॥
राजनि के संसर्ग तें, बने न सब धनवान।
होत न स्वांती बूंद ज्यौं, मुक्ता सकल जहान ॥२४०॥
दुष्ट जननि के सङ्ग परि, राजा चतुर नसात।
जैसे सूखे काठ सँग, गीलो तक जरि जात ॥२४१॥
विजय पायहू भूप बर, गर्भित तनक न होत।
ज्यौं तरुवर फलफूल लहि, महि झुकि नीचे होत ॥२४२॥
कठिन काज आरम्भ करि, नृपको ध्यान लगन्त।
ज्यौं साधक साधन विषै, गाढ़ो चित्त धरन्त ॥२४३॥
छोटे जनहूं तें कहूं नृप को शोभा होय।

उड़गनबिच ज्यों शशिफबै, रबिसँग लसैन सोय ॥२४४॥
राजा को अपमान सुनि, दुख पावै सब कोय।
राहु ग्रसित रवि देखि ज्यौं, सबको चिन्ता होय ॥२४५॥
सुधरे बिगरहो राजहू, आछे नृप कौं पाय।
अधिक लौन ज्यौं दारि को, नीबूरस मिटिजाय ॥२४६॥
नीच सङ्ग परि नृप चलत, गुण कुल रीति बिहाय।
सरिताजल जलनिधि गिरत, ज्यौं खारो हैजाय ॥२४७॥
वेद घरे को दण्ड तो, भोगत सकल नरेश।
राहु ग्रसै पाकर समय, ज्यौं शशि और दिनेश ॥२४८॥
सभासदन सौं मेल रखि, राजा लहत अनन्द।
तृण समूह को जोरि ज्यौं, बांधे जात गयन्द ॥२४९॥
कृपा करत आछे नृपति, नीचति पैहू आहिं।
करहिं उजालो सूर शशि, चण्डालहु घर माहिं ॥२५०॥
ऊपर सौं हित की कहत, भीतर चहत विनाश।
ऐसे दुष्ट प्रधान को, राजा रखहिं न पास ॥२५१॥
निज रैयत को नृप ठगैं, मजा भलो क्यों होय।
जो हकीम जी छल करैं, क्योंकर जीवै कोय ॥२५२॥
प्रिय बादी लखि शत्रुकों, करहिं प्रतीत न भूप।
ज्यौं शीतल अङ्गारहू, काली करत सरूप ॥२५३॥
नीके नृपके चित्त कौं, सकत न क्रोध डुलाय।
फूँस अग्नि ज्यौं जलधि कौं, सकै न नेकु तपाय ॥२५४॥
नृप अरिकों दृढ़ सन्धि करि, सकत न पास बिठाय।
ज्यौं पावक अति उष्ण जल, तेऊ देत बुझाय ॥२५५॥

परे विपति में भूप कों, भूप करैं उद्धार।
डूब्यो गजपति कीच तें, ज्यौं गज लावैं पार ॥२५६॥
अन होनी नहिं करि सकत, राजहु द्रव्य लगाय।
थल ऊपर ज्यों नाव कों, सकत न कोर चलाय ॥२५७॥
भूप बिगारत भूप कों, सैना अमित चढ़ाय।
ज्यौं अति वेग समीर चलि, ऊंचे वृक्ष गिराय ॥२५८॥
राजा के इक कोपही, निज जीवन आधार।
सफरी को बिनु नीर ज्यौं, मरत न लागै बार ॥२५९॥
नष्ट भ्रष्ट नृप को करै, मादक वस्तु शराब।
वृद्ध अवस्था ज्यौं करै, योवन सकल खराब ॥२६०॥
कठिन काज धीरज रखै, मन्त्री वही कहात।
सन्निपात में वैद्य की, जैसे बुद्धि लखात ॥२६१॥
निज गढ़ तें नृप निकरि कैं, यों दुर्बल ह्वै जात।
ज्यौं केहरि बन तें निकरि, डोलैं थल भय खात ॥२६२॥
नृप उत्साहित सैन रन, जूझे सिंह समान।
निज स्वामी ढिग स्वान ज्यौं, होवै शेर समान ॥२६३॥
सुनि रन डङ्का नाद कों, कायर नृप घबराय।
सुनिसुनि तोप अवाज कों, ज्यौं मयूर बिबियाय २६४॥
नीति जौनसी जहँ चले, तहँ सो चलै नरेश।
टेढ़ो कहुँ सीधो चलै, निज हित लागि फनेश ॥२६५॥
यथा योग राजा मिलन, सबसों अवसर पाय।
ज्यौं मकार शशि सूरको, घर घर पहुँचन आय ॥२६६॥
ऊंच नीच सब नृप करन, औ सुपर्ण मित्र धार।

ज्यौं दुकाल में क्षुधित नर, शाक पात ले खात ॥२६७॥
अति अद्भुत अति काम की, वस्तु राज घर आहिं।
सिन्धु माहिं मुक्ता मिलत, सरिता सरन लखाहिं॥२६८॥
नृप को औगुन रत रहत, बुरो कहत नहिं कोय।
भङ्ग धतूरा चरस तैं, शिव यश न्यून न होय ॥२६९॥
ज्यौं जलमें सँग काठ के, बहुत न होत निबाह।
त्योंहीं सँग राजानि के, जानो मजा उछाह ॥२७०॥
नृप के मीठे वचन तैं, धीरज सब कों होय।
निकरत दूध उफान ज्यौं, बैठत डारत तोय ॥२७१॥
दुष्ट न छाड़त दुष्टता, नृप रहियो हुशियार।
विषधर विष छाँड़त नहीं, केतो करौ सुप्यार ॥२७२॥
बहुत निबल मिलि बल करैं, तो नृप कहा बसाय।
ज्यौं टिड्डी दल सामने, युक्ति न कृपक चलाय ॥२७३॥
अति कलेश बहु निबल जन, नृपको भय नहिं खात।
ज्यौं दुकाल में क्षुधित नर, अन्न लूटि ले खात ॥२७४॥
नीचहु राजनि सङ्ग रहि, सुधरहिं संशय नाहिं।
सुधरे दिगरो नीर ज्यौं, गङ्गाजल के माहिं ॥२७५॥
होहिं राज सेवक चतुर, पै नृप बिन सब हीन।
ज्यों निशि तारा शशि रहत, रविबिनु दमनहि छीन २७६
सैना सज्जित नृपति कों, सकहिं न शूर सताय।
जाके छतना शीस ज्यौं, सकत न शूर तपाय ॥२७७॥
मूरख नृप के चित्त में, नेकु न बात थिरात।
जैसे पोले बांस में, फूँक न छिन ठहरात ॥२७८॥

राजनीति की रीतिकों, का जानैं नृप कूर।
जैसे रति के स्वाद तें, रहैं जु हिजरा दूर॥२७९॥
नृप प्रताप तें देश में, दुष्ट नष्ट ह्वै जात।
जैसे सूर प्रकाश लखि, कुहर समूह नसात॥२८०॥
धीर्यवान नृप चतुर चित, सकत न दुष्ट चलाय।
ज्यौं आँधी अति वेग की, सकै न शैल डुलाय॥२८१॥
देखत के सीधे नृपति, अवसर चूकत नाहिं।
ज्यौं बक करि दृढ़ मौन व्रत, मीन गहैं जलमाहिं॥२८२॥
नीति चलत बिगरे तऊ, राजा बुरो बर्जन।
ज्यौं सवार घोड़ा चढ़त, पड़ते बुरो कहैं न॥२८३॥
करत काज कछु नृप चतुर, सबकों देत चिताय।
जैसे गाड़ी रेल की, सीटी प्रथम बजाय॥२८४॥
लाभ प्रजा से नृप चहो, परजहिं रखो अघाय।
दूध दुहैं ज्यौं भैंस को, बाँटा प्रथम खिलाय॥२८५॥
अतिशय मधुरे नृप भये, लहिहो दुखभर पूर।
जैसे ईख मिठास बस, ह्वै कोल्हू में चूर॥२८६॥
ज्यौं माता प्रिय पुत्र कों, राखे सदा दुलार।
त्योंहीं रखत प्रवीन नृप, प्रजा वर्ग पर प्यार॥२८७॥
बिना यातना चोर ठग, साँची बात कहैं न।
ज्यौं धौंसा बिनु मार के, तनक अवाज करैं न॥२८८॥
नृप भृत्यनि की भूल तें, उठहिं राज उत्पात।
ज्यौं असावधानी निरखि, अग्नि ह्वै भिड़िजात॥२८९॥
अपने अपने समय पर, सब को लागे जोर।

विजय उलूकरु काककी, तम उजियारे ओर ॥२९०॥
निश्चय हारत भूप करि, अधिक वली सों युद्ध ।
जैसे मेघ न चलि सकैं, कबहूँ पवन विरुद्ध ॥२९१॥
अति कलेश लहि नृप प्रजा, ह्वै स्वतन्त्र कढ़ि जाय ।
ज्यौं कड़ाव अति गर्म ह्वै, दूध उफन वहिजाय ॥२९२॥
इन लच्छन पहिचानिये, राजा धीर अधीर ।
इक चुप नहिं दरबार में, अरु लुंचन की भीर ॥२९३॥
रोकत मृत्यनि भूप धर, अत्याचार निहारि ।
ज्यौं कुचाल तैं सारथी, हयकौं चाबुक मारि ॥२९४॥
मन्त्री होंय प्रवीन तो, विगरी लेहि सुधारि ।
निकरत दूध उफान जल, ज्यौं रसोइया डारि ॥२९५॥
नीच सङ्गतैं भूप को, राजमान सव जाय ।
चाँदी गन्धक सङ्ग ज्यौं, श्याम वरन ह्वैजाय ॥२९६॥
प्रजा वर्ग वस आपने, राखत भूप प्रवीन ।
पुतली पर की सव कला, ज्यौं अञ्जन आधीन ॥२९७॥
नृप के ओछे काज लखि, प्रजा वर्ग शरमात ।
गौं को विष्टा खात लखि, ज्यौं सव लोग घिनात २९८॥
विना तेज के भूप को, नेकहु त्रास न होय ।
बुझो अगनि अङ्गार ज्यौं, आनि गहै सव कोय २९९॥स
देशकाल व्यवहार लखि, राजा करत सुधार ।
तैसो वदलै चाल घन, जैसी वहै बयार ॥३००॥

॥ सोरठा ॥

रच्यो ग्रन्थ सुख साज, मारवाड़ मधि कृष्णगढ़ ।

राजस्थान सुराज, तहां नृपति वर राठ वर ॥३
शार्दूल महाराज. जी० सी० आई० ई० लसत।
मदन सिंह युवराज. मनहुँ मदन तनु धरि फवत ॥३०
नीति निपुण श्री युक्त. सचिव श्याम सुन्दर सुघर।
बी० ए० पदसों जुक्त, राव बहादुर करि प्रगट ॥३
* वृन्द वंश अवतंस. कविवर तहँ जयलाल द्विज।
कविता करत प्रशंस. मेरे पर राखत कृपा ॥३०
राजनीति को सार. रामदीन द्विज यह रच्यो।
शुद्धा शुद्ध विचार. पढ़ि पढ़ि नृप आनँद लहौ ३०
विमल होय मति मन्द. राजनीति भूषण पढ़ें।
नृप लहिहैं आनन्द. नित प्रति याको पाठ करि ॥३०
रामदीन को धाम. * जमन्नगर याको कहत।
जिला इटावा नाम. पश्चिम उत्तर देश पर ॥३०७
है पूरब की ओर. नगर अकबराबाद के।
पसिमक मील सुठौर. जमन्नगर कसबा सुघर ॥३०८
* पक्ष मान ग्रह चन्द्र, सम्वत भादौं मास सित।
पाँचैं तिथि दिन चन्द्र, राजनीति भूषण प्रगट ॥३०९

---

* वृन्द विनोद सतसई के रचियता प्रसिद्धकवि वृन्द
* जमन्नगर को जमुनन्न नगर भी कहते हैं।
* पक्ष. मान. ग्रह. चन्द्र. इन अङ्कों को उलटे पढ़ि
२ ५ ९ १
सम्वत् १९५२ विक्रमी जानो ॥
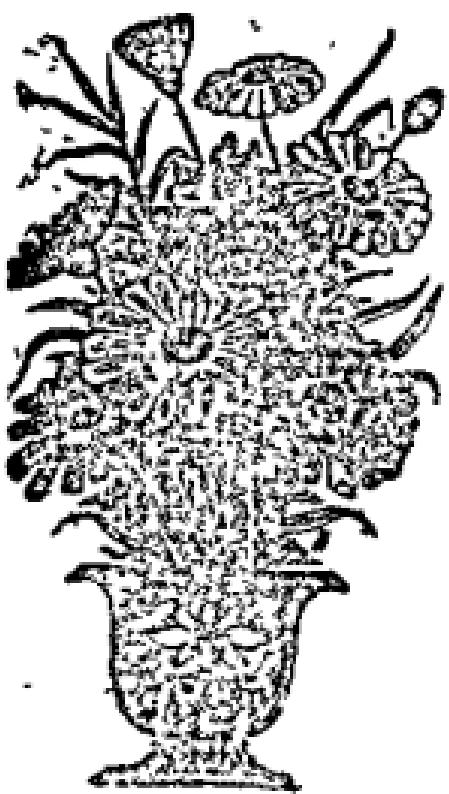
॥ शुद्धाशुद्ध पत्र ॥

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
८	१८	अरुग	अरु
१०	६	परागो	परां
११	२०	परुट	परां
१२	४	आरोहि	आरोहि
१३	७	सिन्धुर	सिन्धु ऐं
१३	१३	पारो	पोसो
१३	१५	उरन	उरने
१४	३	पर जाहू	परान हू
१५	१०	को	कौ
१६	९	द्वर	द्वार
१७	१६	रुक	हकै
१९	२१	तद्पि	तदपि
२०	८	कर	करै
२०	५	घर	घरै
२५	१२	नीचति	नीचनि
२७	३	सरन	सर न

इनके सिवाय दीर्घ इकारादि मात्रा व अनुस्वार कहीं २ कम उठे हैं पाठक वृन्द उनको भी सुधार कर पढ़ें ॥

पण्डित रामदीन.

श्री १०८ श्रीस्वामी विशुद्धानन्दजी महाराज सर्व शास्त्र वेद पुराण के वेत्ता ने सनातन धर्म्मानुयायियों के हितार्थ रच करके भोग मोक्ष, धर्म्म, का प्रचार करने के वास्ते रचा

—oo§oo—

और

लाला सन्तक मल्ल वा लाला ज्योति मल्ल ने अपना द्रव्य लगाकर सनातन धर्म्मी सज्जनों को हितार्थ बिना मूल्य वितीर्ण किए

—oo§oo—

संवत् १९६५ विक्रमी

लाहौर

द्राप साहिब मुन्शी गुलाब सिंह एंड सन्स के प्रेस मुफीद-आम नामक यन्त्रालय मुद्रित किया

भूमिका

श्रीरामोविजयतेतराम्

विदित हो सर्व सज्जनों सत्संगियों सद् गृहस्थों को कि इस
ार असार पारावारादिश्य में परमेश्वर ने जीवों के उधारार्थ
शास्त्र पुराण रचना करके भोग मोक्ष वास्ते धर्म्म का प्रचार
ा परंच विषयानुरागी जीव ज्ञान ध्यान भजन में प्रीति ना
ी भये तब परमात्मा ने शंकर नारदादि द्वारा संगीत विद्या का
ार किया जिसकर बहुत से जीवों को भोग मोक्ष की प्राप्ति
सो संगीत विद्या इस भारत भूमि में बहुत प्रसिद्ध युगोयुगां-
से चला आता है जैसी पुरुषों की चित्त की वृत्ति संगीत से
ाग्र होती है वैसा और कोई दूसरा साधन से नहीं होता है
कलि का कर्म्म व्यास पराशरादि भगवत् यश गान करना
कथन सर्व धर्मोपरि कहा है इस लिये परमेश्वर के प्रसन्नार्थ
जीवों को सुगम रीति से बोधार्थ भक्ति प्रकाशक नाम ग्रन्थ
न विद्या में श्री १०८ श्री स्वामी विशुद्धानन्द जी सर्व शास्त्र
ुराण के वेत्ता ने सनातन धर्मानुसार सनातन धर्मानुयाइयों
ंथ रचना किया है जिसको देखने से सज्जनों को धर्म कर्म बोध
आहलादका जनक होगा तिसको फीरोज़पुर निवासी लाला
मल्ल जोतिमल्ल ने अपना पैसा लगाकर छापेखाने में छपाकर
र्थ प्रचार किया है जिसका हक ग्रन्थकर्ता स्वाधीन रक्खा
ालिये यह ग्रंथ अलौकिक दृष्टान्त दार्ष्टान्त संयुक्त सज्जनों को
लायक है बहुत लिखना फ़ज़ूल है किन्तु एक दफे सारा आदि
कर अन्तपर्यन्त देखनेसे मालूम होगा विशेषणालम् ओम् शम्॥

श्रीस्वामी विशुद्धानन्द जी ॥

॥ श्रीगणेशायनमः ॥

श्रीसच्चिदानन्दमूर्तयेनमः

—०—०—

भक्तिप्रकाश ।

जै जै जै सुखधाम राम जै जै जो परावर ।
जै वसुधाधिप लोकनाथ चहुं श्रुति सु उजागर ॥
जै महेश मनसरसिंह सगुण निधि बुद्धि नागर ।
जै कृतज्ञ सर्वज्ञ वेद वपु करुणा सागर ॥
जै कृपालु असरण शरण हरणभार भुवितन किये ।
शरण विशुद्धानन्द जन राम वास चाहत हिये ॥ १ ॥
जै अदोष सुखसार पार जग निगम पुकारे ।
जै अखण्ड श्रुति ज्ञान गम्य मय विच भव पारे ॥
जै अनादि अनवद्य हेतु बिन हेतु सभन को ।
सतचेतन सुख रूप भूप सुर चाह लभन को ॥
जगव्यापक जल मधुर इव जेहि स्वरूप मुनि मन दिये ।
शरण विशुद्धानन्द जन राम वास चाहत हिये ॥ २ ॥
जेहि संकल्प समग्र विश्व भासत चिद्घनमें ।
जिमि संकल्प विकार नारि जन भास स्वप्न में ॥
निज शक्ति प्रतिबिम्ब आपु द्रष्टा वपुधारी ।
जागृत स्वप्न सुषोप्ति भोग लखि विकल पुकारी ॥
विम्ब रूप पहिचान बिनु भ्रमत धाइ पुन देह लिये ।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ ३ ॥
जै गणेश रवि शशि महेश अज हरि वपुधारी ।
जै सुरेश सुर असुर नाग नर खग बनचारी ॥

जै समीर नभ तेज धारि भुवि भय सो खरारी।
जै पिशाच बेताल प्रेत पशु नग तरु नारी॥
जै अनन्त सब शक्ति मय नाम रूप जेहि सन्त गाये।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ ४ ॥

जै अनीह विभु एक रूप सत चित सुखसारी।
शक्ति अनन्त अभेद ब्रह्म जिमि धुप तुमारी॥
रज सत तम अजराम शम्भु त्रैगुण वपुधारी।
करत भरन जगहरत वेद पथ पालत भारी॥
एक रूप बहुरूप धारि ओत पोत सब पालि लिये।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ ५ ॥

किये अनीति जब रावणादि खल वसुधा तल में।
धरा विकल अरु सुर समेत गइ हरि ओरे थल में।
कीन्ह अरज बहु भांति दीन्ह वर तिनहि खरारी॥
जनि डरपहु सुधि हरब भार हम होइ वपुधारी।
सोइ राम अवधेश सुत भरत लखन रिपु दवन लिये।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ ६ ॥

करि विनोद रस बाल दीन्ह सुख मातु पिता को।
मुनि कारज हित हनेउ सगोस सुकेतु सुता को॥
गौतम नारि उधारि पार सरियाम नगर को।
जाइ जनकपुर चापखंड महि शान्त हरषो॥
सिय विवाह पहुंचन अवध सुत संजन पुर वास किये।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ ७ ॥

पिता वचन तजि राज राम सिया लखन समेता।
चले विपिन मुर हेतु भगत करि सबहि अचेता॥
मिलि निषाद रघुनाथ जाइ जल देखि नहाये।
बाल्मीक मिलि चित्रकूट हरि सिय तिन साथ॥
सुनि सुमन्त मुख अवधपति तजि तन स्वर्ग सो धाम लिये।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ ८ ॥

भरत क्रिया करि पितु समाज लै बन को सिधाये ।
केवट संग प्रयाग पार हरि लखि सुख पाए ॥
विनय भक्ति युत निति संग मुनि बन्धु मनाए ।
राम पादुका पाइ तोषयुत अवध सो आए ॥
राज चलावन सचिव मुनि आपु पांवरी चित दिये ।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ ९ ॥
भेटि अत्रि मुनि बधि विराधे कुम्भज सिर नाए ।
करि पवित्र दण्डका विलोकि मुनि दुःखित जनाए ॥
गीध मीत्र करि लखि सुपंचवटी कृतवासा ।
लखन प्रश्न सुनि कहत ज्ञान जेहि भ्रम निवासा ॥
सुपनेखा भाषि भइ करि कुरूप तेहि भेज दिये ।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ १० ॥
खरदूषण दल देखि राम रण हनि सुख पाए ।
सुनि रावण मारीच कपट मृग हरि पह आए ॥
चले राम सिया बैन पाइ मृग हेतु हनन को ।
लखन राखि तहां बहु प्रकार कहि ज्ञान वचन को ॥
प्रगटत दुरत सो जान प्रभु हने राम शर कोप किये ।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ ११ ॥
सुनि मारीच पुकार हाय हिय लखन सिधाए ।
लखि एकान्त दशशीश धारि वपु यती होइ आए ॥
चले जात संग जनक जात प्रभु खग रण मारी ।
लखि भुधर कपिराज आपु भूषण पट डारी ।
राम विरह दुख मन जदा दुःखित लंक सिया वास किये ।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ १२ ॥
फिरि खोजत हरि नारि गज इव जहां तहां बन में ।
मह बेमन मन पूछि बिकल हरि भए छिन छिन में ॥
मानि गीध दे हनि कबन्ध शबरी हरि मारे ।
चाहि विवेक भै भक्ति राम परम पद धारे ।

मिलि नारद सतसंग करि शोक युक्त सिय चित दिये।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ १३ ॥
मारुत सुत मिलि मित्र की रवति करि हरषाए।
बालि मारि सुग्रीव राज दै गिरि पर छाए॥
लखन प्रश्न कहि क्रिया योग हरि शोक जनाए।
कपि सम्मत मिलि यूथ यूथ सिया खोजन धाए॥
विवर योगिनि मिलि चले सागर तट सब चित दिये।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ १४ ॥
कहत परस्पर दुःखित यान कपि पार गवन को।
मिला गीद्ध सुग्र खबर पाइ सिय लंक भवन को॥
सुनि विराग मय वचन ताहि सन तजि तन भासा।
करत विचार मो पार जान हित नहिं पति पासा॥
जामवन्त मुख वचन सुनि हनुमान हट गवन किये।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ १५ ॥
चलत मारुति राम राखि हिय गरजत भारी।
सुरसा मिलत सुभीति सिंही का जल में संहारी।
सागर पार मो द्वार लंक हाँन नगर सिधाए।
गृह गृह खोजत भवन मिलता कपि सिय पाए॥
राम सन्देस सुनाइ कपि गगन मुद्रिका प्राण दिये।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ १६ ॥
सिय प्रबोध फल हेतु बाग गये पवन कुमारा।
हनि रक्षक सब मोर लाइ फल अछै मारा॥
मेघनाद गत बन्धु जानि कपि बाँधि लै आए।
बसन तेल करि पाणि लंकपति आगि लगाए।
जारि नगर सिय भेंट दै सिन्धु पार कपि आइ गये।
द्धानन्द० ॥ १७ ॥
न प्रभु पाइ राम पद शीश नवाए।
य सिय दुःखित नाहि बिनु देह नवाए।

सुनि हरखित हरि चले संग कपि कटक समेता।
सेतु सिन्धु मह बन्धि थापि शिव जो सुख देता॥
उतरि कटक लंका निकट शास सुवेला चल किए।
शरण विशुद्धानन्द०॥ १८॥
सर्व निति मय राम दूत पठए तेहि काला।
सभा मध्य दसशीस मान मथि फिर कपि ज्वाला।
प्रथम दिवस कपि कटक घारि करि घेरत लंका।
पाइ रजायस यातुधानु भिरे बुधि रण बंका॥
जै रघुवर दस बदन कहि लड़त चाह दो जै लिये।
शरण विशुद्धानन्द०॥ १९॥
कुम्भकरण दससीस बन्धु जो सागर बल में।
हत लंकापति सैन देखि आवत करि दल में॥
लगे बिकल कपि असुर मार लखि जह तह भागे।
बिकल देखि निज सैन राम धरि धनु भए आगे॥
रण खेलाइ बहु सर हने राम ताहि निज पद दिए।
शरण विशुद्धानन्द०॥ २०॥
मेघनाद रण प्रबल बुद्धि बल बहु करि जूझत।
हते लखन तेहि रण प्रचार रवि शशि नहि सूझत॥
सुत बिलोक बध धीर शोक करि धीरज कीन्हा।
तजि आसा तन मिलन राम सनमुख सर लीन्हा॥
लड़त राम रण हिय धीर मारि ताहि हरि रुप किये।
शरण विशुद्धानन्द०॥ २१॥
राज विभीषण देइ लंक सिय सोधि सो हरषे।
चढ़ि पुष्पक चले सैन संग सुर सुमन सो बरषे॥
विजय बात मधु कहत राज तीरथ पद पाए।
जानि अवधि निज बन्धु हेतु हनुमान पठाए॥
मिलि पुरजन सानुज भरत मिले आइ गुरु संग लिये।
शरण विशुद्धानन्द०॥ २२॥

सुदिन देखि गुरु राम पाट अभिषेक सो कीन्हा।
राम राज बसि प्रजा सकल अतिशय सुख कीन्हा॥
तिहु पुर जै जै राम राज सुर नर मुनि गाए।
करि परितोष समाज समन रघुनाथ पठाए॥
त्रिविध ताप ते रहित होइ प्रजा वेद पथ पालि जीयें।
शरण विशुद्धानन्द० ॥ २३॥
सुयश राम जन सुखद स्वादु निगमागम गावें।
कहत शम्भु अज शेष शारदा पार ना पावें॥
किमि बरणे कवि जन्तु जासु जश जन सुखदाई।
करि प्रबन्ध अटपट सुबैन सउपत रघुराई॥
सरयू किनारे खल दल दलन सुयश राम जन चित दियें।
शरण विशुद्धानन्द जन राम वास चाहत हियें॥ २४॥
मगन तीन गुरु महिय नगन लघु त्रै अहिगाए।
भगन आदि गुरु चन्द यगन लघु आदि जलाए॥
जगन मध्य गुरु सूर्य वन्हि लघु बीच रगन को।
सगन अन्त गुरु पवनतगन लघु अन्त गगन को॥
चारि आदि शुभदा सुखद अन्त चारि दुखदा किय।
शरण विशुधानन्द जन राम वास चाहत हिय॥ २५॥

श्रीसच्चिदानन्दमूर्तयेनमः।

भक्ति प्रकाशक

गणेश जीका भजन।

गणपति मंगल मोदक दानी।
न्दनीय शुभ शंभु पुत्र, जग प्रियतम मातु भवानी॥ १॥
क रदन सुख सदन कदन, दुःख अष्ट सिद्ध युत जानी।
म्बोदर गज वदन विनायक, विदित सकल गुण खानी॥ २॥
पा कटाक्ष चहत सुर जाकद, प्रथम पूज्य गणमानी।
हि तजि कुशल चहै नर खर, सम काहे नहीं शुभ हानी॥ ३॥
भकर कारक अशुभ संहारक, तारक जन श्रुति वानी।
पा विनय विवेक ज्ञान युत, हरि यश रस नितसानी॥ ४॥
हि सेवत मूकहु पण्डित, है अज्ञहु आतम ज्ञानी।
हि सन चहत विशुद्धानन्द, हरि यश हिय गहि वनुपानी॥ ५॥ १

सूर्य के भजन।

उदित दिवाकर जो जग सुख कारी है।
तन आनन्द धन जीव कह चक्षुधन, विश्व चक्र चालनकी देव
धारी है॥ १॥
म माया जग रुप बोध हित, देवभूप निज रुप धूप जल जग में
ारी है॥ २॥
ग याग आप ताप दान पुजा पुण्य पाप, देश काल धर्म आँम
ने विचारी है॥ ३॥
या के अरोग योग प्रास मोक्ष स्वर्ग, भोग भाग्य द्रव्य युत अर्थ
जे नर नारी है॥ ४॥
को निरोग हिय चाहे वास लिय पिय, पूरण विशुद्धानन्द करन
ारी है॥ ५॥ १॥

दिन मणि दिन कर दीन हित कारी।
तोहि समान जग नहि द्वितीया, कोउ प्रगट जीव उपकारी ॥ १॥
तव स्वरूप सुख सत चेतन, विभूव्यापक नित्य तमारी।
करत भरत जग हरत शक्ति युत, अज हरि शिव तनुधारी ॥२॥
देश काल क्रिया कर कारक, तारक जन असुरारी।
सकल जीव कह एक चक्षु तुम, दुःख सुख सब ही निहारी ॥ ३॥
निज प्रकाश आतम हित बोधत, रहत असंग खचारी।
ताते तीन लोक तेहि पूजत, फल सब देत विचारी ॥ ४॥
करत विभाग दिवा निशि को नित, पोसत सोखत वारी।
तोषत भक्त चिद्घनानन्द, तेहि जाचत हिय मे मुरारी ॥ ५ ॥ २॥

दुर्गाजीके भजन।

दुर्गेदुर्गति नाशन हारी।
चिदानन्द अर्धंग वास नित, सुनगण पति सुख कारी ॥ १॥
तव रज सत तम मह प्रति, बिम्बित अजहरि शिव तनु धारी।
करत भरत पुनि हरत विश्व कहि, जिमि दिन कर सोका तमारी ॥२
मधुकैटभ महिषासुर मर्दन, सुंभ निसुंभ संहारी।
रक्त बीज पुनि चंड मुंड लै, अमित दनुज रण मारी ॥ ३ ॥
तव प्रण सदा भक्त कर रक्षा, खल कर मूल उखारी।
अष्टायुद्ध युत नैन तीन जग विचरहु सिंह सवारी ॥ ४ ॥
तोहि न सेवै सुन युग जग, जो नर सो नास्तिक खल भारी।
तव पद रसिक चिद्घनानद, नित पूरवहु आस हमारी ५। ३।
सुनु जननी गिर राज कुमारी।
चिदानंद शिव कह वल्लभ, तू तोहि प्रियतम त्रिपुरारी ॥ १॥
नाम रूप जग जीव ईश तुम, तोहि मह कहै श्रुति चारी।
यदा योग कारज करने हित, भंव पुरुष वपु नारी ॥ २ ॥
जब जन रसिक चरण तव पद्म, तोहि पालहु जिम महतारी।
मम मन नहि मय दिन पूजित होइ, मय सुख देहु खरारी ॥ ३॥

भज हरि शिव तन नाम गहि नित मद करनि भर
हरनि ममाभिकं ॥ ३ ॥

सज्जन को शाम नाम जगकद पुरे भास नव दीन न
पुलिन भयानेकं ॥ ४ ॥

भारत हरणि जन तारण विशुद्धानंद चाहे पादकंज, मानु
सुपदानोके ॥ ५ ॥ ॥ ५ ॥

खेमटा ।

देखो दुर्गा को गति दुःख हरण सुनो ।
अलख अगोचर पुरुष निरंजन, ताको प्रकट किया शब्दके धुनि ॥१॥
भज हरि शिव पांच जो जो महतभासो सब शक्ति कर वेदको गुनि ॥२॥
देव दुःखित जब २ असुरन ते, तब २ नाश किये खलन चुनी ॥ ३ ॥
अम्बिका भवानी काली चण्डी, सिवशारद नाम अनेक तन वासादुनी॥
जाके स्वरूप विच जग जल मृग सम, देखा विशुद्धानन्द तामें मुनी॥५॥६

एकताला ।

जै जै जग जननी जनक नंदिनी जानकी ।
करुणा निधान सुजान राघव, ताहि वल्लभ प्राण की ॥ १ ॥
...नन्द, घन सत पुरुष चेतन, ताहि अभिन्न विहार की ।
...ग उदय रक्षा प्रलय छन, सोइ कहत वेद प्रधान की ॥ २ ॥
...इ जीव ईश्वर नाम रूप, विभाग करि परिणाम की ।
... चरण रज निधि ध्यान लावत, ताहि पालत मानकी ॥ ३ ॥
... वृत्ति ब्रह्माकार करि जोहि, जानि हरि सुत आप की ।
... कृपा सो लेश क्लेश नासत, जानि जन भवताप की ॥ ४ ॥
...तु करुणा सिन्धु अवगुण, जानि विशुद्धानन्द की ।
...कंज पद अनुराग जाचत, समझ अब मानकी ...

भजन।

जनक कुमारी सुनु अरज हमारी।
प्रभु सर्वज्ञ राम वल्लभ तोहि, तेहि तुम प्राण पियारी ॥ १ ॥
जगत जननी जगपालक घालक, रहित समस्त विकारी।
तारन भक्त संहारन खल कहं, रूप अमित तुम धारि ॥ २ ॥
तव परिणाम जीव जग ईश्वर, नाम रूप विभिचारी।
तोहि समझे विनु विकल जन्तु, जग तै तव हमसो हमारी ॥ ३ ॥
स्वच्छन्द नपुंसक नारि पुरुष जग, त्रिविध रहित सुखसारी।
जद विवेक नहिं होत मूढ़ मन, तोहि समझत खल नारी ॥ ४ ॥
तत्स्वरूप अभेद राम तव, भेद कहत सो सुसारी।
दास विज्ञान विशुद्धानन्द हित, पालहु शरण तुम्हारी ॥ ५ ॥ ८ ॥

भजन।

जननी जनकजा जो जन सुखदानी।
प्रभु अनीह महाराज राम कह, वसहु सदा महारानी ॥ १ ॥
चिदाकास मह चित्तरूप होइ, रचहु विश्व गुण खानी।
जा राम घन अज शारद धुनि, शिव वनिता सो भवानी ॥ २ ॥
तव पद आस किए जग जो जन, भये भूप सुर ज्ञानी।
विमुख तोहि दुःख भोगत भव मह, बाल जरा जो जवानी ॥ ३ ॥
जहाँ रज तम तुम तहाँ बन्धन नित, सत्व सुखद की निशानी।
तव विलास मह भोग मोक्ष जग, निरत वेद मुनि ध्यानी ॥ ४ ॥
नहिं तुम नारि पुरुष न नपुंसक, चिति संज्ञा श्रुतिमानी।
करि अरज विशुद्धानन्द कर मानहु, निज पहिचानी ॥ ५ ॥ ९ ॥

खेमटा ।

जागु जग जननि जनक जीके नंदनी ॥ १ ॥
अलख अपार गति कहि न सकत श्रुति स्ववस विहार सत
चित सुख संगिनी ॥ २ ॥
रज तम भाव जहां बन्ध दुःख निद्रा तहां शुद्ध सत्व जागि
सो मुक्ति सुख साधनी ॥ ३ ॥
खलन को घालक जो जन कह पालक सो रामचन्द्र चन्द्र मुख
भासे जिमि चन्दनी ॥ ४ ॥
सेवे बिनु कोई तव पार नहि पावें भव करत विशुद्धानन्द
पाद कंज वन्दनी ॥ ५ ॥ १० ॥

—००ॐ००—

श्री शिवजी के भजन ।

भजुमन शम्भु सदा अविनाशी ।
चिदानन्द घन पूरन सब मैं, निज इच्छा जगवासी ॥ १ ॥
जो अज एक अनन्त शक्ति युत चरत चराचर राशी ।
मदन श्याम मनमथ हित जन कह, सो अर्द्धंग नियामी ॥ २ ॥
जग वैराग हेतु सुख त्यागत, मारत मार जो रहत उदासी ।
ग वनिता भव भोग मोक्ष हित, जो जागत मरघासी ॥ ३ ॥
ान ध्यान रत निज मानस, सुख लिहु पर बुद्धि प्रकासी ।
व पद भाव बिना भव पारन, होत भ्रमत चौरासी ॥ ४ ॥
ी उदार शंकर सम जन कह, त्यों मुक्ति हित काशी ।
दि इच्छार विशुद्धानन्द भजि, कटत बढ़त यम फांसी ॥ ५ ॥ १६ ॥

भजन ।

सुनु गिरिजापति गरज हमारे ।
राम भक्ति दायक जग लायक, नहि कोउ सरिस तुम्हारे ॥ १ ॥
जाते होत निजातम सुख नित, भव विराग भवपारे ।
सोन होत तव पद सेवा, बिनु को भवपार उतारे ॥ २ ॥
तेहि सुख बाधक भव दुःख साधक, मन कलोल कमारे ।
पुनि पुनि जन्म मरण दुःख सुख नहीं, यमपुर विकल पधारे ॥ ३ ॥
जिन्ह को भोग मोक्ष हित भव मह, विधि नहीं अंक सवारे ।
तव पद आस अमित जग सुख करि, सत चित सुख सो सिधारे ।४।
आशुतोष तव नाम उमावर, खर सुर शरण निहारे ।
तेहि दरबार विशुद्धानन्द, नित आरत विकल पुकारे ॥ ५ ॥ २ ॥

भजन ।

हर तुम सम जग को उपकारी ।
महिमा अगम अपार नाथ तव, निशि दिन वेद पुकारी ॥ १ ॥
तव संकल्प जीव जग भासत, तेहि रक्षा हितकारी ।
जाते भोग मोक्ष पावे जन, दासव पुत्रै तुम धारी ॥ २ ॥
जरत सुरासुर गरल पान किय, हते त्रिपुर औ सुरारी ।
संखचूर पुनि प्रबल जलन्धर, रणभूमि हमा प्रचारी ॥ ३ ॥
जो सेवक अर्चक तव पद जग, ताके मुख उजियारी ।
रावण बाण बलि भस्मासुर तेउ दोउ लोक सवारी ॥ ४ ॥
रघुवर स्वामि सखा सेवक, जेहि गिरिजा प्राण पियारी ।
तेहि सन चहत विशुद्धानन्द, नित मम उर बसत खरारी ॥५॥ ३ ॥

टुमरी ।

भव भय हरण करण सुख भव चित्त भय पद भय जन भव अनुरागे हैं ॥ १ ॥

भय संग में विभूति भय अंग में विभूति भय भाय गुन भावुक में भय नित जागे हैं ॥ २ ॥

दोष युत शीस सरि गंग की तरंग लोल शशि भाल बाल जाल भयसे विरागे हैं ॥ ३ ॥

नाग छाल नाग काल कुण्डल जनेउ माल उर नर नेत्र तीन नागी संग नागे हैं ॥ ४ ॥

नन्दी को सवार भय पार नहीं घर द्वार सेवत विशुद्धानन्द भय राग भागे हैं ॥ ५ ॥ ४ ॥

ठुमरी ।

हरना अज्ञान हर हरि जी के मित्रवर हरि सम हरे हरे आक जो चबाते हैं ॥ १ ॥

नन्दी के सवार तन छार नहि घर द्वार गौरी अंग संग भंग को जो खाते हैं ॥ २ ॥

भोगते विलास कैलाश वास वट तर गिरिजा की मीठी बात सुनि मुसकाते हैं ॥ ३ ॥

काल कृत त्रास नास भक्तन को पाले पास आपु अहि अरि देखि नाग भागे जाते हैं ॥ ४ ॥

योगी निजमात साथ नाचत डमरु हाथ ताहि को विशुद्धानन्द यश नित गाते हैं ॥ ५ ॥ ५ ॥

खेमटा ।

भजु भोलानाथ शरण सुख दायक ॥
जो अज सत चेतन सुख निर्गुण सोई सगुण वपु धायक ॥ १ ॥
व्याल कपाल सीसकर शोभित वाम गौरी खल घायक ॥ २ ॥
ब्रह्मादिक सुर असुर नाग नर जासु सबही यश गायक ॥ ३ ॥
जाहि सेवत जग भोग मोक्ष नर सुलभ सकल जन जायक ॥ ४ ॥
ताहि दरबार पुकार विशुद्धानन्द सेवत चरण सभ लायक ॥ ५ ॥ ६ ॥

होली।

आज चले शिव ब्याहन गौरी।
, रूप अनूप जो शंकर व्यापक विश्व रहोरी।
सोइ कैलास वास सुरहित तनुरूप उदार धरोरी।
निगम यह बात भनोरी ॥ १ ॥
फागुण फाग भाग सुभ कारक हरि अज चित ठहरोरी।
गौरी गिरीश समागममोदक ताने साज सजोरी।
चलेसुर देखन होरी ॥२॥
कुन्डल कान व्याल उर नर शिर पन्नग मौर धरोरी।
नैनतीन उपवीत भुजंगम सुरसरि शीश बहोरी।
माल शशि बाल बसोरी ॥ ३ ॥
चढ़ि शिव बैल भस्म तन कर मह डमरु त्रिशूल गहोरी।
पिसाच प्रेत सुर संग मिलि नितत गान करोरी।
तहा आसे धूम मचोरी ॥ ४ ॥
मृदंग शंख आनक धुनि निठुर शोर करोरी।
स्वरूप विशुद्धानन्द लखि जाचत यही करोरी ॥
समोरी ॥ ५ ॥ ७ ॥

होली।

आज गौरी कर ब्याह सुनोरी।
साज शिव शंकर हिमगिर द्वार खरोरी।
सखीय समाज संग लै मैना परीक्षन हेत चलोरी।
कनक कर थार भरोरी ॥ १ ॥
बैल सवार द्वार पन्नग युत शिव कह देखि डरोरी।
कांपत अंग संग नहि सूझत भागि भवन पैठोरी ॥
सभै मिलि सोच करोरी ॥ २ ॥
गौरी अभाग तोर घर बाउर व्याल कपाल धरोरी।
अति सुकुमारि कुमारी गौरी मोरी हर संग कैसे बसोरी ॥
जियत नहि ब्याह करोरी ॥ ३ ॥

सुनि दुःख नारद हिमगिरि गौने सुन्दर तोष दियोरी।
जगत जनक शिव गौरी जननी यह हर संग गौरी रहोरी।
युगे युग वेद भनोरी ॥ ४ ॥

शुभ दिन शुभ घरी लगन सोहावन हर गौरी ब्याह भयोरी।
अति उत्साह विशुद्धानन्द लखि दुन्दुभी नाक हनोरी।
सुमन सुर वृष्ट करोरी॥ ५ ॥ ८ ॥

होली।

भानु सोभ शिव मण्डप जोरी।
ब्रह्मा अनादि शक्ति युत शंकर कनक पीठ बैठोरी।
जगदम्बा जग जनक जानी सुर करत प्रणाम निहोरी॥
मुनिन गण वेद भनोरी॥ १।

विधि युत हवन पूजि गणपति गिरि कुश जल पानि गहोरी।
दंर मंगल समर्पि गुणा शिव विनय करत कर जोरी।
मगन सुधि नाहि रहोरी ॥ २ ॥

अगम अगोचर सकल कला तुम कहत निगम मौं थकोरी।
केहि भांति कन कीर सकौ हर जो जग व्यापि बसोरी।
दुरत जेहि ध्याइ करोरी। ३ ॥

आज अमंगल मंगल कारक शुचि रुचि मानि धरोरी।
[illegible] विचारि गौरी हरमो कहं भांति सुबरा बहुभोरी।
बहुं धन भाग भयोरी ॥ ४ ॥

नायक सकल महानायक जेहि छन आनन्द मंगल होरी।
ताल मृदंग विशुद्धानन्द धुनि सुनि हिय चाह बढ़ोरी।
हरन भव बन्धन तोरी ॥ ५ ॥ ९ ॥

होली।

ऐसी संग में कैसी भलाई।
हिमिगिरि पुर वनिता युथ मिलिकर मंगल गान सोहाई।
तरुण अरुण पंकज कर पद जेहि शीश मुख स्तन कठिनाई।
कहत शिव सन मुसकाई॥ १॥
हे हर मातु पिता कुल घर तोहि नहि संग जाति जो भाई।
तब कत व्याह करन हित मम पुर आये भूत सहाई।
गौरी कर जात गवाई॥ २॥
व्याल कपाल माल उर धर तन छाँर जो प्रीति लगाई।
तब वनिता संग काम सहज सुख केहि विधि हिय ठहराई।
कहहु द्विज की चतुराई॥ ३॥
भाग अभाग गौरी कर तोहि संग घर घर अलख जगाई।
सेज कुशासन भूमि वसन तरु त्वच नग भवन बनाई।
कहु केहि विधि सुख पाई॥ ४॥
कहत वचन निरखत छबि शिव कह जाहु भवन सुरराई।
योग वियाह चिदानन्द जग गौरी रहि है घर माई।
तोहि संग ना अब जाई॥ ५॥ १०॥

होली का खेमटा।

देखो होरी के समाज साज भोला के संघट।
सुरसरि शीश सोभे शशि बाल भाल लोभे बदन मयंक शु
डमरू की रट॥ १॥
कुण्डल श्रवण व्याल उर नर शिर माल गौरी मगन वाम अं
में लपट॥ २॥
योगिनी जमात साथ शोभित कपाल हाथ नाचत पिशा
प्रेत भैरो सुभट॥ ३॥
आपु शिव चिदाकाश जन मन पुरे आस जाचत ...
हिय हरि झट॥ ४॥ ११॥

भजनावली रामायण बालकाण्ड ।

भजन ।

सुनु मन जो निज चहसि भलाई ।
तब कल्लोल लोल गति आपन तजि भजु राम सुखदाई ॥ १ ॥
कीट जाल इव रचि रचना ते परसि मध्य तेहि आई ।
ईश जीव जग भोग रोग बल नरक स्वर्ग समुदाई ॥ २ ॥
नाना ज्ञान स्वपन जामित ते सुक हित सकल बनाई ।
तेहि मह विकल सहत दारुण दुःख तदपि विवेक न पाई ॥ ३ ॥
सुख स्वरूप चेतन सत अभिमत कारुनीक रघुराई ।
तेहि भजि लीन होसि कारण निज गमना गमन चुकाई ॥ ४ ॥
इस नवसत सम्वत पंचापन पंच असाढ़ सोहाई ।
सरयू किनार बिन्दुद्यानन्द यह हरि सनमुख हित गाई ॥ ५ ॥ १ ॥

भजन ।

सुनु मन हरि यश तुम हो सुनाओं ।
यह संसार असार पार हित देखन और मनाओं ॥ १ ॥
जो अज सत चेतन सुख व्यापक सो पद तुमही जनाओं ।
जेहि जाने भव ताप त्रिविध ताजि निर्मल तोहि बनाओं ॥ २ ॥
तेरे मलिन मलिन जग भासत शुद्ध ते शुद्ध तनाओं ।
सो न होय बिनु हरि यश जागे जेहि तेहि भक्त गनाओं ॥ ३ ॥
ताते रघुवर जन्म कर्म यश ता संग चित्त सनाओं ।
जाको कहत सुनत सम्मुखत हिय आवा गवन हनाओं ॥ ४ ॥
अगुण सगुण दोउ रूप राम कर ज्ञान ध्यान जन नाओं ।
सरयू किनार बिन्दुद्यानन्द मन यह उपदेश सुनाओं ॥ ५ ॥ २ ॥

भजन ।

के यश सुनु मन मेरे ।
विषय ज्वर नासत बल पूरण तन तेरे ॥ १ ॥
शक्ति अनन्त युक्त जो चेतन सोई ईश्वर जग केरे ।
तेहि संकल्प प्रकट पालन जग नासनु होत घनेरे ॥ २ ॥
अब बल रावणादि कर जग में किये अनीत बहुतेरे ।
विप्र साधु सुर भुगा निन्दन मारत राक्षस चेरे ॥ ३ ॥
तेहि ते विकल धरा सुर संग होइ कहा विपन विधि नेरे ।
सब सुर सिद्ध छोर निधि हरि कह किये अरज भुति ठेरे ॥ ४ ॥
भये प्रसन्न राम घर दीन्हा जनि डरपहु मम हेरे ।
गावत भार चिनुदानन्द भूपालय जन को सवेरे ॥ ५ ॥ ३ ॥

भजन ।

हरि के जनम जन मन सुख आवे ।
जाको कहत सुनत समुमत हिय अभय परम पद पावे ॥ १ ॥
जग विख्यात नाम नृप दशरथ जेहि गुण कहि न सिरावे ।
जाको नारि तीन जग भीतर पट तर योग न आवे ॥ २ ॥
सो अपुत्र निज कर लखि गुरुसन कहि मुनि यज्ञ करावे ।
धूमकेतु हवि देइ राज कर सो त्रै नारि खिलावे ॥ ३ ॥
ताते भये गर्भ सुत तीनों दसे मास नियरावे ।
कौशिल्या के राम केकई भरत सो सुत जनमावे ॥ ४ ॥
नाम सुमित्रा लखन शत्रुघन नवमी चैत सोहावे ।
शुभ मह मध्य चिनुदानन्द रवि जाचक मंगल गावे ॥ ५ ॥ ४ ॥

भजन ।

हरि के विलास बाल जन सुखदाई ।
चिदानन्द संदोह देह धरि शिशिन भए रघुराई ॥ १ ॥

अंशन सहित प्रकट हरि जब घर जहां तहां बजत बधाई।
गुरु आज्ञा जातक विधि करि नृप वस्तु अनेक लुटाई॥ २॥
रति मद मोचन अंग साज सजि सुत युत चली लुगाई।
बन्दनवार पताका तोरण घर २ कलश सजाई॥ ३॥
जाचक सकल अजाचक होरहे अवध आनन्द अधिकाई।
ब्रह्मानन्द मगन मुनि इव सब दिवस न जात जनाई॥ ४॥
गगन मगन सुर दुन्दभी बाजत रहे भुवन यश छाई।
जाचक दीन विशुद्धानन्द तहां अपनी गरज सुनाई॥ ५॥ ५॥

भजन।

हरि के अगम गति कहि नहि जाई।
जब मन गति पावत वह पद कहं बहुरि जगत नहि आई॥ १॥
पाद कंज नख मणि गण सम जेहि अंगुली अधिक लगाई।
जानु भानु उरु कटि भूषणयुत केहरी छबि लजाई॥ २॥
नाभ गम्भीर उदर बर रेखा उर आयत छबि छाई।
घन सम तन शशि बदन बाहु छबि करिकल कर ठहराई॥ ३॥
दाड़िम दशन बसन दामिन दुति चिबुक अधर अरुणाई।
कुण्डल लोल कपोल करण तक गरदन कच कुटिलाई॥ ४॥
नाम कीन्ह गुरु राम भरत तेहि लखन दमन रिपु आई।
सुत युत सुखी विशुद्धानन्द नृप निज हित सुयश सुनाई॥५॥६॥

चैत।

चैत के महिनवा राम धइले नर कर तनवा। होराम।
ब्रह्म अनामय बेद पुकारत मुनि जेहि करेले मननवा॥ १॥
नवमीं तिथि मधु मास सोहावन मंगल कर्क लगनवा॥ २॥
मध्य दिवस अभिजित सित पक्षम नभ झर लागेले सुमनवा॥ ३॥
जग निवास प्रकट हरि नृप घर सुर सभ हने ले निसनवा॥ ४॥
रूप अनूप विशुद्धानन्द लखि मन वच गहे ले चरणवा॥ ५॥७॥

चैत ।

अवध नगर भइल सोरवा । हो राम । राम के प्रकट सुनि ।।
सुन मागध बन्दिजन गायक बोलत कुल बेवहरवा ॥ १ ॥
गजगामिनि वनिता युथ मिलि सब चलिभई लोगोद लेबे छोरवा॥२॥
मृग मद कुम्कुम केशर रस बहु बहि चले पुर चहु ओरवा ॥ ३ ॥
मंगल गान निशान धुनि घर २ नाचत पिकमानी मोरवा ।। ४ ॥
कंत बसंत विशुद्धानन्द लखि त्याग दे ले मै मारे तोरवा ॥ ५॥७ ॥
भोर भइले भूपके ढुथरवा अवध नगरवा ॥

भजन ।

विलसत हरि नृप अजिर विहारी ।
ताग तीन तन नाग नाम तब जब अस रूप निहारी ॥ १ ॥
भाल विभूषण अंग संग सजि जननी रचा संवारी ।
कवि उछंग पालन हालन शशि मुख चुम्बन महतारी ॥ २ ॥
कभी पुर कर खेलत आंगन लिये साथ सहचारी ।
बाल केल रति भोजन हित नहि आत सुजननी पुकारी ॥ ३ ॥
निज छाया लखि नाचत गावत धावत देकर तारी ।
पिता गोद दधि ओदन परि हर हसत चलत किलकारी ॥ ४ ॥
तेहि सुख मगन अवधवासी जेहि मुनि शिवादि अधिकारी ।
तेहि सुख हेतु विशुद्धानन्द हित जाचत अज असुरारी ॥ ५ ॥ ८ ॥

ठुमरी ।

ललित ललाम लघु पाद कंज भुज दोउ ललकि ललकि लखे लोल मन तन की ॥ १ ॥

बदन मयंक सुचि दाड़िम दशन राचि तड़ित बसन तन छवि हर मनकी ॥ २ ॥

अधर अरुण अति कुण्डल कपोल बोल बल बल सुनि ताप जाय जिय जनकी ॥ ३ ॥

शोभित विशाल भाल खेलत समाज बाल भरथ लखन
लिये शत्रुहन की ॥ ४ ॥
नुपुर किंकिणी धुनि सुनि मुनि मन मोहे चाहे भव
विशुद्धानन्द मनकी ॥ ५ ॥ ९ ॥

भजन।

प्रभु के सुयश जन मन सुखदानी।
तबी विपति भाग जब जन कहं जय हरि गहे धनु पानी ॥ १ ॥
करन छेद मुण्डन विधि विधवन किये जनेउ गुरु ज्ञानी।
विद्या पठन स्वल्प काल किये यद्यपि हरि सब जानी ॥ २ ॥
नित प्रति प्रतिकाल उठि रघुवर सुत्र संध्या रतिमानी।
भाल त्रिपुण्ड जाप त्रिपद्दा कर पूजन शिव सुख खानी ॥ ३ ॥
जात विपिन मृग या हित जन संग मारि देखावत भानी।
जनक जननी गुरु पूजन मानत सुनत कथा सुपुरानी ॥ ४ ॥
बाल सखा मिलि भोजन शुक पिक सबहि सुनावत बानी।
तेहि रस मगन विशुद्धानन्द नित होत दुःखद कर हानी ॥ ५

भजन

हरि यश विमल श्रवन जग माहीं।
स पियूष रस भोजि थका मन मिला अन्त कछु नाहीं ॥ १ ॥
ल विनोद करत कछु बीते मगन लोग पुर आहीं।
वामित्र करन कारज हित गयेउ नृपति पुर पाहीं ॥ २ ॥
खबर गुरु राय सहित मिलि मुनि आसन हरषाहीं।
कुशल क्षेम कहि बोले तब हित कछु करौं नाहीं ॥ ३ ॥
राम लखन मोहि दीजे असुर दुःखद जिमि आहीं।
राघरो लाभ सुनत कह पालहु कुल के जो राहीं ॥ ४ ॥
शिष्ठ बहु युक्ति राय कीर जिमि सन्देह नसाहीं।
बिशुद्धानंद मुनि चलत जनन कर ग्राहीं ॥ ५ ॥ १८ ॥

भजन ।

चलत लषण हरि मुनिवर आगे ।
कर सर धनुष तूण कटि धरवर लषण मनोहर लागे ॥ १ ॥
चले जात मुनि वास कीन्ह मग हरि लखि अति अनुरागे ।
दै विद्या तेहि दोन्ह कृपा करि प्यास क्षुधा जेहि भागे ॥ २ ॥
जाते मग विच हते तारिका मख रक्षा हित जागे ।
हति सुबाहु मारीच सिन्धुतट सर करि निज हित त्यागे ॥ ३ ॥
मुनि मख राखि कन्द मूल भाखि बोले मुनि रस पागे ।
कन्या हित एक यज्ञ जनकपुर भूप बहुत कल हागे ॥ ४ ॥
सुनत सुयश तब भूपति मानहि रिपु भागहि पद नागे ।
पूरण होइ विशुद्धानन्द मन दैहे विधि तेहि मागे ॥ ५ ॥ १२ ॥

भजन ।

चलत लषण मुनि संग रघुराई ।
मारग जात शिला एक देखि हरि पूछत मुनि सकुचाई ॥ १ ॥
काको आश्रम केहि कारण नहि जन्तु रहत मुनिराई ।
सुनि मुनि बोले सुनहु राम तुम गौतम नारि यहि ठाई ॥ २ ॥
नाम अहिल्या इन्द्र संग किये तेहि ते शिला तन पाई ।
करहु उधार सुनत सो शिला सुघर भई तनु दिव्य सोहाई ॥ ३ ॥
पूजि राम बहु भाप येद मत पति पह जाइ सुनाई ।
चलत राम सुरसरि लखि पूछत कहे मुनि जाहि विधि आई ॥ ४ ॥
सुरसरि पार पार होइ मग पथि जनक नगर नियराई ।
मुनि आगमन विशुद्धानन्द सुनि पूजि जनक हरषाई ॥ ५ ॥ १३ ॥

ठुमरी ।

पूछत जनक राम लषण को घांव लखि कहो मुनि आप ।
इत होइ आये हैं ॥ १ ॥

भानुवंश उदित विदित भलि भान्ति जग दशरथ सुत हम यह
हित लाये हैं ॥ २ ॥

राक्षस को मारि मगु नारी को उद्धारी सुनि सियाको विवाहवे
को तव पुर आये हैं ॥ ३ ॥

शंकर को दण्ड लाओ राम को देखाओ मेरे सिया को विचार
घर विधि ने बनाये हैं ॥ ४ ॥

साखि यह बात सुनि हिय में करत गुनि कथही विशुद्धानन्द
मंगल जो गाये हैं ॥ ५ ॥ १४ ॥

भजन ।

सुनहु सुमन हरि जय जिमि पाई।
देश देश कर भूप सुभट बहु धनुष तोरन हित आई ॥ १ ॥
लगे उठावन उठत धनुष नहिं छल बल कर चतुराई ।
थकित निशासन भूप भये सब बल बुद्धि तेज गवाई ॥ २ ॥
जा धनु टुटा उठा नो दुःखित भये पुरजन लोग लुगाई ।
विश्वामित्र पाइ अनुशासन उठि हरि धनुष चढ़ाई ॥ ३ ॥
हर को दण्ड खण्ड महि डारन गुनि धुनि मुनि हरषाई ।
जै धुनि मंगल होत सकल पुर देव सुमन झरिलाई ॥ ४ ॥
परशुराम परितोष विविध विधि सिया जयमाल लगाई ।
पठवा पत्र विशुद्धानन्द सद जहां दशरथ नर पाई ॥ ५ ॥ १५ ॥

ठुमरी ।

दशरथ पायं पाति बांचि के तुराये छानि राम की बरात
चलो सब सों जनाये हैं ॥ १ ॥

भाँति दल चले जानि साथ में विशाल पानि मुनिगण बेद गाई
देव को मनाये हैं ॥ २ ॥

बाजन विविध बाजे हाथी घोड़ा दल साजे करे छैल अंग भाई
बाराम बजाये हैं ॥ ३ ॥

एहि विधि भगु राजे कौतुक बिराजे नट भाट सुत वन्दीगण
वंश यश गाये हैं ॥ ४ ॥

जनक के द्वार आये सुनि जनवास पाये मुदित विद्युद्धानन्द
नगर लोग धाये हैं ॥ ५ ॥ १६ ॥

भजन।

सुनु मन सुयश ब्याह रघुबर के ।
जाके श्रवण दुरित भय भागत जिमि तम दिन मणि करके ॥ १ ॥
जय सुन समाचार सुनि दशरथ सजि आये नृप घरके।
लगन सुमंगल लखि वशिष्ठ तहां धरत कलश मणि भरके ॥ २ ॥
विधि युत हवन वेद धुनि पुनि करि धरे जनक जल करके।
कुश कन्या रघुनाथ हाथ दे मिलन मुदित तन धरके ॥ ३ ॥
जनक अनुज कन्या सी भरत कह लषण दमन रिपु नरके।
करि विवाह चारौं सुत युत नृप पूजे सुर वर हरके ॥ ४ ॥
यथा योग्य सन्मान दान करि मिलत नृपति दोउ तरके।
भति उत्साह विशुद्धानन्द हरि चले सखो संग कोह वरके ॥ ५ ॥ १७

भजन।

आनिले जनक जा रमण रउरि रिति के ॥ १ ॥
नहि रउरे जात पांति भाइ न जननी तात कुल वंश गोत्र नाहि
धर्म कर्म नीति के ॥ २ ॥
खान पान रस स्वाद हासन विलास धार शाक फल मेवु
मैं रीसक अजाति के ॥ ३ ॥
रउरे सम नर जग प्रीति रीति ताके संग राजन के घर मे
कहाँ चाल घाती के ॥ ४ ॥
सालिय सहेली संग पूछत जनकपुर आयन ...
रउरे पर प्रीति के ॥ ५ ॥ १८ ॥

होली।

आज लखा जो की देखो न हारी।
सतचित आनन्द रूप अनूप जो घट २ व्याप रहोरी।
नेति नेति करि बेद पुकारत मुनि मन हंस बसोरी
शुद्ध जिन भाव करोरी ॥ १ ॥
सोई सुर भूप भूप भूपन शिर नर तन चाह धरोरी।
सुर नर मुनि जग तारन कारण प्रकट अवध भयोरी।
तहां सुर नाक रचोरी ॥ २॥
बाल केलि करि मुनि यज्ञ रक्षक मग मुनि नारि उधरोरी।
जाइ जनकपुर तोरि धनुष हरि व्याही जनक किशोरी।
भूषन कर मान मरोरी ॥ ३ ॥
सखिया सेयान सप्त नव सजि सजि मंडप मह ठहरोरी।
कनक ललित पिचकारी भरि भरि हरि मुख डारत गोरी।
राम जनि मानो निहोरी ॥ ४।
सिया सकुचाई बदन हरि देखति सखियन सान दियोरी।
रूप अनूप विशुद्धानन्द यह फिर नहि हाथ लगोरी।
सुफल कर नयन करोरी ॥ ५ ॥ १९ ॥

होली।

रघुबर जो की बात सुनोरी।
सखिया प्रधान जनकपुर घर घर एक उपदेश करोरी।
जो मन नैन सुफल चाहहु तुम तब कत बैठि रहोरी।
समय पुनि नाहि बनोरी ॥ १ ॥
जो अज सतचेतन सुख व्यापक कौशलपुर प्रगटोरी।
मुनि मख राखि साखि शंकर सोई ममपुर पाप धरोरी।
धनुष जिन तोड़ दियोरी ॥ २ ॥

श्याम किशोर जो मोर पक्ष युत गौर अनुज निरखोरी।
सो सीतावर अधर ब्रह्म पर देखि जनक जी ठगोरी।
सखि कैसे धीर धरोरी॥ ३॥
मचल सोहांग सिया कर आली हरि मुख चन्द चकोरी।
मनहु मदन रति फाग खेलन हित भूप भवन पहुचोरी।
सबन चित चोर लियोरी॥ ४॥
वचन अमिय सम सुनि मिथिलापुर सखियन तन विसरोरी।
राम स्वरूप विशुद्धानन्द मन मुख हरि यश उचरोरी।
पलक नहीं डारत गोरी॥ ५॥ २०॥

भजन।

होत जनकपुर जस पहुनाई।
को कवि कहे वरत सकुचत हिय जहां सिय रहे नित छाई॥ १॥
नित प्रति आदर दान मान करि राखत प्रीति लगाई।
षटरस भोजन बहु प्रकार नित खात कहत सकुचाई॥ २॥
विदाहीन हित कहे वसिष्ठ मुनि सदानन्द समुझाई।
ले दहेज चारों सुत वधु युत अवध चलत रघुराई॥ ३॥
भ्रात सराहत जनक राज कह प्रीत सुयश सेवकाई।
करि विश्राम अवधपुर पहुंचे जै धुनि सेरा बजाई॥ ४॥
सिया राम कर ब्याह सुमंगल जननी अधिक सोहाई।
गिरा पवित्र विशुद्धानन्द हित राम सिया यश गाई॥ ५॥ २१॥

होली।

आज अवधपुर हो रही होरी।
भूपन वसन सखा युत रघुवर निकले अवध की खोरी।
वीणा वेनु ताल कर शोभित राग अलाप करोरी।
बजा सम घन गरजोरी॥ १॥

साखिय समाज सप्त नव सजि सजि संग मिथिलेश किशोरी।
कंचन कलश कनक रंग झारत भरि भरि सघन लियोरी।
चलन गज बाल चलोरी ॥ २ ॥
रति मद मोचन लोचन मृग सम कटि कृश मुख रंगरोरी।
कलरव धुनि सुनि मुनि मन मोहे करतल ताल बजोरी।
तहां पुर धूम मचोरी ॥ ३ ॥
दोउ समाज फिरत पुर गलियन सरयू तट पहुंचोरी।
दशरथ नन्दन जनक नन्दनी मिलत परस्पर जोरी।
सुमन सुर डारि हंसोरी ॥ ४ ॥
रंग गुलाल पान कर मेवा दोउ भई सुख सो पटोरी।
भाग सोहाग विशुद्धानन्द लखि हरि सीया फाग खेलोरी।
बसे यह मानस ओरी ॥ ५ ॥ २२ ॥

अयोध्या काण्ड

भजन

बसत अवध सिययुत रघुराई।
हास विलास रास रस युत नित विहरत चारो भाई ॥ १ ॥
अति आनन्द मातु पितु परिजन पुरजन लोग लुगाई।
ब्रह्मानंद मगन मुनि सम सब सुर पुर देखि लजाई ॥ २ ॥
तेहि सुख मगन काल कछु बीते भये योग नरराई।
गुरु सम्मत करि राव राम कहं देन तिलक ठहराई ॥ ३ ॥
राम राज हित मंगल साजे घर घर होत बधाई।
मंगल गान निशान कलश बहु दान महिसुर पाई ॥ ४ ॥
गुरु आज्ञा हरि सिय तेहि करी संयम शुचि अधिकाई।
मुनिगण सहित विशुद्धानंद तहां गावत यश हरषाई ॥ ५ ॥ १ ॥

हरि बिनु को अग काज सवारे ।
जासे उतपति पालन जग कह सोई पुनि अंतमें मारे ॥ १ ॥
जब हरि तिलक देनहित मंगल तव सुर देखि दुखारे ।
करि बिन्ती बानी घर देकरि कैकई अयश पेटारे ॥ २ ॥
दुई वरदान राव यह रानी मांगत अति लखि प्यारे ।
भरत राज गहे राम गवन वन नाहि तो मरण हमारे ॥ ३ ॥
सुनि कटु वचन राउ मूर्छित भये पुरजन भा दुःख भारे ।
यथा योग्य परितोष समन करि राम विवेक उचारे ॥ ४ ॥
गुरु सिर भार राजकर सिययुत लषण सहित पगुधारे ।
वन मह गवन विशुद्धानन्द लखि पुरजन त्राहि पुकारे ॥ ५ ॥ २ ॥

अनुज सियायुत चले हरि वनको ।
अवध सुहाग भाग सुख सम्पत साथ लिये सब धन को ॥ १ ॥
मणि बिनु फणि जिमि दिवस भानु बिनु मोर रहित जिमि घनको
मीन नीर हारी निशिशासुत बिन निमि करि चले हरिजन को ॥
प्रथम दिवस तमसा सुरसरि वासि भेष किये मुनि तनको ।
सचिव बुझाय फेरि सुरसरि तट खड़े जो साथ लषण को ॥ ३ ॥
करि परितोष निषाद पार भये फरि तेहि पार समन को ।
पूज गणेश शिवाशिव रवि हरि गवन विपिन से सवन को ॥ ४ ॥
ग्राम पथिक मगु दीखि ताहि छवि थकित भेग तेहि मनको ।
पहुंचि प्रयाग विशुद्धानंद तहा मिले साध मुनिगन को ॥ ५ ॥ ३ ॥

राम लषण सिय भये बनवासी ।
जाको भवन गवन तन बन नहि जो सब में सुख रासी ॥ १ ॥
तीरथ राज समाज साधु संग जो तहा यति उदासी ।
तेहि मह यथा योग यमुना तटि करत विटप सो-निवासी ॥ २ ॥
ग्राम नगर पुर जो मगु बिचमे भये भाग जिमि काशी ।
तेहि पुरके नरनारी पाइ सुधि धाई पूछत सो विकासी ॥ ३ ॥
को तुम पथिक कहां से आये का संग नारि रमासी ।
कारण कवन फिरहु बन तेहि लखि मनहु छुटत मन फासी ॥४ ॥

राम नाम मम प्रिया अनुज यह दशरथ पिता प्रकाशी।
अवध निवास विशुद्धानंद पितु फिरत वचन ते हुलासी ॥ १ ॥ ४ ॥

शोभित राम पथिक छवि नीके।
देखत नैन पलक नहि टारत ताप न रहत कनीके ॥ १ ॥
जो मगु मिलत ताहि सन पूछत कहाँ राह विपनीके।
सो तजि धाम काम संग लागत निरखत सिय रमणीके ॥२॥
जेहि तरुतर बैठत छाया लखि थकित जान जननीके।
तहा वनिता सुनि धाय कलश भरि चितवति मोक्ष धनीके ॥ ३ ॥
को सखि श्याम गौर तन तव यह भेष किये जो मुनिके।
गौर लखन देवर मम पिय यह कहि देखत धरणीके ॥ ४ ॥
यहि विधि करत विनोद विपिन हरि जह तह स्नेह घनीके।
चित्रकूट विशुद्धानंद लखि हरषित अति कमनीके ॥ ५ ॥ ५ ॥

शोभित आश्रम मुनिवर ज्ञानी।
वालमीक तप शास्त्र वेदरत गतहरि रूप महद्ध्यानी ॥ १ ॥
सादर शीश नाई तेहि पूछत कहो नाथ पहिचानी।
रहौं कहां हम अनुज प्रिया संग कहु निज सेवक जानी ॥ २ ॥
हसि बोले मुनि सुनहु रामतुम कस बोलहु असबानी।
जीव चराचर वास करत तुम कहवसु मैं अनुमानी ॥ ३ ॥
राग द्वेष मद मोह लोभ नहि तव यश रस नित सानी।
नित्यानित्य विवेक हृदय जेहि वसहु तहा सुखखानी ॥ ४ ॥
जेहि हिय जगत ब्रह्ममय भासत दया क्षमा शुचि दानी।
तेहि के हृदय विशुद्धानंद तुम्ह वसहु धनुष सरपानी ॥ ५ ॥ ६ ॥

वसत लषण सिया हरि वन माही।
चित्रकूट नग सरित तट वटतर युगल ओटज विचनाही ॥ १ ॥
मुनिगण सभा भरत नित हरिपद कहत वचन सकुचाही।
काल करम सुख दुःख जग भीतर जन्तु सहत भयराही ॥ २ ॥
कोल भील कल वचन कहत धरि शीश नमत प्रभुपाही।
विबुधन टहल करथ हमकह तुम सब सेवक तव आही ॥ ३ ॥

सब दिन सुखद रहब प्रभु येही वन मृगया संग हम जाहीं ।
पशु पशु वन हमार जोहल निंत कहत वचन विलपाहीं ॥ ४ ॥
तुम राजा हम प्रजा भाग्य यम सुनि सुनि प्रभु हरषाहीं ।
जिमि सुत वचन विशुद्धानन्द पितु निरखत दुःख कछु नाहीं ॥५॥७

अवध विकल बिन हरि सिय पाये ।
फिरा सुमंत सोचवस मगमंह जिमि धन वणिक गंवाये ॥ १ ॥
जाइ राउ पद समाचार कहे हरिवन माह सिधाये ।
सुनत विकल मूरछित महि उठि नृप रा रघुनन्दन गाये ॥ २ ॥
तापस अंधशाप शुद्धि करिमन सुरपुर प्राण पठाये ।
अथय भानु कहि रुदन सकल पुर भरत को दूत जनाये ॥ ३ ॥
सुनि पितु मरण गमन बन हरिकंह तुरत अनुज सुनआये ।
करिपितु क्रिया तोष पुरजन करि गुरु संग मन ठहराये ॥ ४ ॥
चले मनावन वन हरिसिय कहं नगर लोग संग लाये ।
मिलि निषाद विशुद्धानंद जलनीरथ राज नहाये ॥ ५ ॥ ८ ॥

चलत भरत जो मनाय भाई ।
नाना तर्क वितर्क करत मन जब हरि आश्रम जाई ॥ १ ॥
हरषि उठे प्रभु कछु धनु सरपट मिलत भरत सनधाई ।
अगम अगोचर सुखदोउ हिय जश तन कवि कहिन सिराई ॥ २ ॥
जुरी सभागुरु जनकजो मुनिगण कहत भरत शिरनाई ।
राजभंग तव कुमति मोर नहिं गुरु पितु चरन दोहाई ॥ ३ ॥
ताते राज योग तुम हम बन फिरहु अवध रघुराई ।
पालहु धर्म सनातन हरि कहे जो रविकुल चलि आई ॥ ४ ॥
मानहि भुवन भरत सम बंधु हरि गुरु मिलि समुझाई ।
लै पादुका विशुद्धानंद तव फिरत भरत हरषाई ॥ ५ ॥ ९ ॥

करत भरत तप वसि घर माहीं ।
हरि अनुशासन पाई पादुका पूज दिवस निस जाहीं ॥ १ ॥
नगर लोग सब भोग रोग तजि कंद मूल फल खाहीं ।
रटत रामसिय करत नेम मन भवन नयन पुलकाहीं ॥ २ ॥

प्रतिदिन पूजन पंचदेव कह करत मनावत ताहीं ।
मांगत रामसिया दरशन सुख चाह दूसर कछु नाहीं ॥ ३ ॥
राज काज गुरु सचिव चलावत कहत पादुका पाहीं ।
सम्वत भरत चलत दिन प्रति सब मधुकर सम गुणग्राहीं ॥ ४ ॥
जेहि सुख चाह देव नित तेहि सुख भरत त्याग नित माहीं ।
यही विधि अयाधि विशुद्धानंद नित चिन्तवत हरिसिय ताहीं ॥५॥१०

॥ इति अयोध्या काण्ड ॥

—००§००—

आरण्य काण्ड।

लखन सिया हरि चले बन आगे ।
एक नेत्र करि इन्द्र पुत्र तजि बन तब सोउ हरि त्यागे ॥ १ ॥
मिलि मुनि अत्रि प्रिया सियसन कहि नारि जो धर्म सोहागे ।
देखि विराध सिया उर लखि हरि लखण धनुष शर मागे ॥ २ ॥
बधि विराध सरभंग त्यागि तन मुनि आवत अनुरागे ।
ज्ञान भक्ति गुन धर्म कहा मुनि आहि सुतन भय भागे ॥ ३ ॥
करि पवित्र दंडक बन मुनि मन जन दुःख सुनि प्रभु जागे ।
आसिष लहि कहि नाथ दियें मुनि चलत विदा मोहि आगे ॥ ४ ॥
मिलि गिद्ध करि पंचवटी गये लखि तेहि अति अनुरागे ।
करत वास विशुद्धानंद मन भावत हरि रसपागे ॥ ५ ॥ १ ॥

विहरत रघुवर आश्रम छाया ।
नदी पुनीत गोदावरी तट जहां अति शोभित सिया आया ॥ १ ॥
अवसर जानि लखन तहां पूछत नाथ कहहु का माया ।
बंध विराग ज्ञान ईश्वर कह कस कहहु समुझाया ॥ २ ॥
इन्द्रियन मन चेतन जीव और माया आदि काया ।
त्रिपुटी रहित शुद्ध चेतन एक सो हम जानि धनि नाया ॥ ३ ॥

माया सुख रस राग त्याग वैराग कठिन समुझाया ।
ज्ञाता ज्ञानयुक्त चेतन सोइ आगम जीव दरसाया ॥ ४ ॥
ज्ञानयुक्त अज्ञान रहित नित चेतन ईश कहाया ।
पञ्च विकल्प विशुद्धानंद ताजि निज पद गुरु मुख पाया ॥ ५ ॥ २ ॥

ठुमरी ।

करत विनोद पञ्चवटि तट सरी हरि अरि एक आइ देखि मोहे तन राम को ॥ १ ॥
सिया डर लखि हरि लषण को सान करि नाक कान काटि ताहि भेज दियें बाम को ॥ २ ॥
खर धालि दूषण सहाय दल साजि आये राम रण हति ताहि भेज निज धाम को ॥ ३ ॥
रावण के पास जाइ रोइ के कहत भई सुधि नाहि शत्रु सिर प्रीति तेरे चाम को ॥ ४ ॥
सुनि गुनि मुनि बने आये राम नर तन सिया को विशुद्धानन्द हरो तेरो काम को ॥ ५ ॥ ३ ॥
करन चहत हरि सोइ होत भाई ।
नहि अस कोइ जन्मेउ जग भीतर जो हिज राह चलाई ॥ १ ॥
जो दशशीश शीश सुर पुर सांई चलो एक हरषाई ।
मिलि मारीचं मंत्र सिय हित करि काञ्चन मृग बनिजाई ॥ २ ॥
राम लखा रावण मगु आवन सिय कर दीन्ह छपाई ।
तेहि प्रतिबिम्ब राखि सो सौंय हित वन मृग मारन धाई ॥ ३ ॥
अवसर जानि मानी निज गति सोइ सिया कर लीन्ह उठाई ।
गिद्ध युद्ध करि लंको सोगा राखत प्राण की गाई ॥ ४ ॥
हति मृग वन खोजत सिय नर इव विकले भये रघुराई ।
गिद्ध किया सो विशुद्धानन्द करि हतउ कबन्ध सुरराई ॥ ५ ॥ ४

ठुमरी।

भक्ति को प्रभाव सब विच देखो नर तुम शबरी के प
प्रभु आप पगु धारे हैं ॥ १ ॥

चरण पखारि पूजि आसन बैठारि हरि कन्दमूल आगे ध
पलक न टारे हैं ॥ २ ॥

अनुज सहित सुख लहि नवधा भक्ति कहि ताहि सब ता
जाते भक्त प्राण प्यारे हैं ॥ ३ ॥

पम्पा सर जाइ तहां भेटे मुनिराइ आइ करि सत्सङ्ग रामदे
सो दुःखारे हैं ॥४॥

गये देव लोक मुनि बैठे सिय शोक गुनि भक्तिका विशुद्धानन
भवपार तारे हैं ॥ ५ ॥ ५ ॥

॥ इति आरण्य काण्ड ॥

किष्किन्धा काण्ड।

खोजत विपिन सिया चले रघुराई।
मग छाया लखि ऊठत बैठत पर्वत एक नियराई।
तेहि नग पर हरिगन युत सोचत विरह विकल कपिराई।
आवत देखि अनुज युत हरि कह मारुत बाल पेठाई ॥ २ ॥
दोउ सम्बत करि चलत मारुति द्विजवर भेष बनाई।
पूछत को तुम नाम ग्राम पितु किमि कारण वन आई ॥ ३ ॥
अवध निवास पिता दशरथ मम राम लखन हम भाई।
पिता वचन वन प्रिया हरन वश खोजत फिरत कहा पाई ॥ ४ ॥
बहु विधि करत मारुती हरि सन जेहि कपि होत मिताई।
करि प्रणाम विशुद्धानन्द दोउ चले कपि पीठ चढ़ाई ॥ ५ ॥ १ ॥

मिलन अगम हरि सन कपिराई ।
रि ... यिच प्रीत किन्ह दोउ तजिकल छल चतुराई ॥ १ ॥
जिमि तजि राज हरण सिय बन सो लषण कहा समुझाई ।
सुनि कपि कहे जेहि विधि सिय मिले तेहि करव जतन हम भाई ।
सखे दुखित किमि हरि पूछा तेहि कपि दुःख हेत सुनाई ।
सुनि दुःख दुखित भक्त प्रण किय हरि बालि हतव रण पाई ॥ ३ ॥
ताल भेद पठवा तेहि रण हित गर्जा तेहि घर जाई ।
प्रिया बचन तजि लड़त अनुजसन हते सर हरि सो लुकाई ॥ ४ ॥
दै कपि राज तिलक सुखयुत हरि रहे प्रवर्षण चाई ।
लषण समेत विशुद्धानन्द तह करत विनोद रघुराई ॥ ५ ॥ २ ॥

ठुमरी ।

लषण लखेउ हरि शीस धरि कर जोरि । कहो प्रभु जन्तु भव पार किमि पाये हैं ॥ १ ॥

बोले रघुराई सुन वेद के सिद्धान्त । भाई बन्धु मोक्ष दोउ मिथ्या स्वपन में जाये हैं ॥ २ ॥

जाको न विवेक एक आतमा की नाहीं टेक । ताको मम पूजा तप वेदने सिखाये हैं ॥ ३ ॥

नर तन पाई निज धर्म को गंवाई । मन भोग विचलाई यम लोक को सिधाये हैं ॥ ४ ॥

खलन को संग तजि मम बात चित्त साजि । भवकी विशुद्धानन्द भावमें गवाये हैं ॥ ५ ॥ ३ ॥

सुनहु लषण कपि मोरि विसराये राज पाइवनिता रस बसभा सिय सुधि अजहु नापाये ॥ १ ॥

वर्षागत मम प्रिया विरह दुःख काम अधिक सताये । जेहि सर बाल हता सो सरकरि हतव सुकण्ठ बनाये ॥ २ ॥

लषण सरोष लखा हरि तेहि छन करदार धनुष चढ़ाये । जाई निकट टंकोर किय पुर सुनि कपि जह तह धाये ॥ ३ ॥

अंगद हनियत बाल मारि मिल लखण सुकंठ बुलाये। आदर दान मान करि डर युत राम शरण सब आये ॥ ४ ॥

यथा योग मिलि हरि पद बैठत प्रभु तेहि बात जनाये। बवर सिया को विनुद्धानन्द नहीं कहत नयन जल छाये ॥ ५ ॥ ४४ ॥

सिया को खोजन हित चले बन धीरा कोउ पूरब कोउ पश्चिम उत्तर कोउ दक्षिण रण धीरा ॥ १ ॥

चलत मुद्रिका मारुतसुत कर दिन्ह कहा मन पीरा। फिरत विपिन कपी निशिचर पावत मारत फारत चीरा ॥ २ ॥

विवर प्रवेश मूदलोचन कपि पहुंचे वारिधि तीरा। करत विखाद परस्पर तट तेहि कहत नैन भरि नीरा ॥ ३ ॥

मिला सुमगु सम्पाति विविधि विधि कहि विवेक मति धीरा लंका सिय खग मुख हर्षित सुनि पाय दरिद्र जिमिहीरा ॥ ४ ॥

करत विचार सो सागर मग विच को लांघे सो गंभीरा। सिय सुधिले को विनुद्धानन्द कपि पहुंच सुनावे रघुबीरा ॥ ५ ॥

इति किष्किंधा काण्ड

सुन्दर काण्ड

कइले हनुमान लंका की तैयारी।
जामवन्त के वचन सुनत कपि चढे नग दे किलकारी ॥ १ ॥
कहत सगर्भ उठाई भुजा दोउ सुनहु वचन वनचारी।
जो जग भीतर जनक सुता जहां तहां प्रणजाय हमारी ॥ २ ॥
असकहि चलत पवन सुत मगु विच मिलि सुरसा एक नारी।
सो आनन बाढत जिमि जिमि तिमि तिमि कपि भातनभारी ॥ ३ ॥
सत योजन मुख किय जब तब कपि निकले लघु वपुधारी।
बल बुद्धि देख देइ आशिष गई चले कपि पूछ पसारी ॥ ४ ॥

... ६ मैनाक भेट करि सिंहि का जल में संहारी।
... पार विशुद्धानंद घन पैठत देकर तारी ॥ ४ ॥ १ ॥
विहरत कपि लंका गढ भारी।
पैठत मग हता लंका कहि फिरत सोलघु वपुधारी ॥ १ ॥
देखि दशानन भवन बिभिषण कहे सुधि जनक कुमारी।
जाइ देखि सिय कह कपि रावण पहुचत संग बरनारी ॥ २ ॥
बहु विधि त्रास देखा घर कर जावत सिय सो अंगारी।
दिन्ह मुद्रिका लखि तेहि सिय कहे को मम प्राण अधारी ॥ ३ ॥
रामदूत सुग्रीव सचिव हम तोहि बिनु दुःखित खरारी।
बालि मारि सुग्रीव तिलक करि तोहि खोजत बनचारी ॥ ४ ॥
सुनि खग वचन लाधि बारिधि हम मणि मुद्री तोहि डारी।
गहु मयशोक विशुद्धानंद तोहि लै जाइय खर मारी ॥ ५ ॥ २ ॥
चलत पवन सुत रावण वारी।
करि परितोष रोषलखि सिय कह क्षुधित सोफल को निहारी ॥१॥
खात मधुर फल बिटप उखारत जो बरजत तेहि मारी।
धाय जाय खर कोउ रावण कहे कपि घल बाग उजारी ॥ २ ॥
सैन समेत मन्त्रि सुत लखि कपि मरदि गरदि महा धारी।
अछै कुमार मारि गरजत भा राक्षस त्रास करढारी ॥ ३ ॥
सुनि वध बंधु मेघनादि चलि आवत रण में हंकारी।
युगल प्रवल चर हट सो लरत दल डारि भीरतमी प्रचारी ॥ ४ ॥
ब्रह्म अस्त्र रावण सुत मारत कपि मूर्छित सो विचारी।
बाधि सभासी विशुद्धानंद लैगयेउ विदित जो सुरारी ॥ ५ ॥ ३ ॥
पूछत दशानन तू दूत कहु काके।
कातब नाम बाग खर सुत मम मारसि केहि बलवाके ॥ १ ॥
उत्पति पालन प्रलय विदय जेहि धरत ध्यान मुनिज्ञाके।
हरण भार भूमि दशरथ सुत सोइ हरे सिया दूत हम ताके ॥ २ ॥
बाल मारि सुग्रीव तिलक करिरहे प्रवर्षण छाके।
बन उजारि खर मारि धर्म मम भारत मुख फल खाके ॥ ३ ॥

रामसत जग झूठ जानिलै चलु मिल राम रमाके ।
नहि तब कुलरण हतिहे सिया हित राखिहे न पतिजो उमाके ॥३॥
सुनि कटु वचन मार कहे खर पति कहेहु नियत तो हराके ।
मत करि कहत विष्णुदानंद कपि भेजहु पूछ जराके ॥ ५ । ४ ॥

फरत विहार कपि लंक पुर भारी ।
पायक बसन तेल निज पुछ मह जरत बरत सो निहारी ॥ १ ॥
लगे सुभट संग गाल बजावत मारन दै करतारी ।
धूमत नगर हांक निधर कहि चढ़े कपि निवुकि अटारी ॥ २ ॥
लगा जरन जब नगर विकल भये बालक पुर नरनारी ।
हाहाकार सो लपटि झपटि कपि उलटि पलटि पुर जारी ॥ ३ ॥
पूंछ बुझाय सिन्धु सिया मणि लै चला गर्ज करि भारी ।
वनिता गर्भ झरनमो सुनत धुनि आय मिला वनचारी ॥ ४ ॥
मुदित जात मग करत बात प्रभु ल्याइ जाइ अगुवारी ।
सिय सुधि कहत विष्णुदानन्द कपि आवहु सिय वलमारी ॥५॥

चलु प्रभु वेगि रावन रजधानी ।
निधर मार देव काज कार मिलहु सिया निज जानी ॥ १ ॥
एदा नव नीर बहत नैनन बिच तुम बिनु मांग पानी ।
सिय दुःख दारुह कहि न सकत तोहि लहु ओ दिये सहदानी ॥२॥
रावण प्रबल महा दल युत बल सब प्रकार अभिमानी ।
बन उजारि सुत मारि जारि पुर करि रावर मैं निदानी ॥ ३ ॥
सुनि मन्दरा हाथ मणि दिय दुःख मिलन सुभट प हिचानी ।
सिय हित समर निशाचर रण मह हनह सगमन मानी ॥ ४ ॥
सुनु सुग्रीव भालु भालु दल लगन सुमंगल मानी ।
रण मह विजय विष्णुदानन्द मम मिलि है जनकजा जो रानी ॥५॥

चलत कटक कपि बरनि न जाई ।
महि मदाश भरी भालु कीश सबि गरजि तरजि फल खाई ॥ १ ॥
जो राक्षस मगु मिलत नाहि को मारत नहीं मिलाई ।
करत कोलाहल भाल कीश मगु मैं सुवन्द रघुराई ॥ २ ॥

एहि विधि वारिधि तट दल पहुंचत रहत जहां तहछाई।
केहि विधि पार होव हरि कपि सन कहत वचन बिलखाई ॥ ३ ॥
लंक विभीषण सहित दशानन बैठु सभा सद जाई।
अवसर पाइ कहत रावण पहले मिलु सिय प्रभुताई ॥ ४ ॥
सुनि लंकेश कहत धिक धिक तोहि जा मिलु रिपु सरनाई।
होई नास बिशुद्धानन्द कहि चलत रावण भय पाई ॥ ५ ॥ ७ ॥

हरि से मिलन आये रावण भाई।

करत विचार वितर्क मन ही मन प्रभु पद देखत आई ॥ १ ॥
सीस जटा कटि तूण अनुज युत कर सर धनुष चढ़ाई।
कपि दल मध्य विराजत शशी युग निरखत मन तम जाई ॥ २ ॥
तव रिपु अनुज विभीषण निश्चर अनुचर तव शरनाई।
अस कहि परत भूमि प्रभु पद गहि कहत नैन जल छाई ॥ ३ ॥
हे प्रभु रावण धर्म्म विमुख तोहि बूझत न मोर बुझाई।
ताके भय निर्भय तव पद तकि आये रघहु सुरराई ॥ ४ ॥
तुम उदार प्रेरक सब के मन जानहु छल चतुराई।
आए सरण बिशुद्धानन्द तुम उचित करहु रघुराई ॥ ५ ॥ ८ ॥

कहत बचन हरि जन सुखदाई।

मम अमोघ दर्शन श्रुति भाषत जन हित तन मम भाई ॥ १ ॥
विश्व द्रोह अघ भाजन जो नर सो आये शरनाई।
तजि छल कपट आस परिहरि जग पालव प्राण की नाई ॥ २ ॥
कहु लंकेश कुशल परिजन कर खल बिच किमि सुधुआई।
अब भये कुशल कुशल तव पद लखि जानि बिसरहु रघुराई ॥ ३ ॥
अनुज मुकुट सहित निज जन लखि दिये तिलक हरषाई।
पूछत भेद लंकगढ़ करतेहि आपु निकट बैठाई ॥ ४ ॥
वारिधि पार होवें केहि विधि सब कहु मिलि मत ठहराई।
सागर विनय बिशुद्धानन्द, करि कह किमि सेतु बनाई ॥ ५ ॥ ९ ॥

इति सुन्दर काण्ड

लंका काण्ड ।

सुनहु सुजन जस भावि कछु भाये ।
जब विभिषण चला राम पह रावण दूत पठाये ॥ १ ॥
सो सुक देखि राम दलबल जिमि तिलक विभिषण पाये ।
जाइ सभा रावण विवेक मय भांति सी सकल सुनाये ॥ २ ॥
करि उपदेश ज्ञान रावण कह होइ द्विज तप को सिधाये ।
इहां राम पुनि सिन्धु वचन सुनि कहत सुकट बोलाये ॥ ३ ॥
चले भालु कपि हरि आज्ञा सुनि लैले पर्वत आये ।
धरि नल नील हाथ सागर पर डालत भट हरषाये ॥ ४ ॥
करत कोलाहल धावत लावत पर्वत जैधुनि गाये ।
येहि विधि करत विशुद्धानन्द कपि जै हरि सिन्धु बंधाये॥५॥
पूजन करत हरिहर लवलाके ।
जो शिव लिङ्ग विदित चहु श्रुति जग रहत भुवन भरि छाके॥
विधि युत थापि लिङ्ग सोइ रघुवर किये प्रतिष्ठा ताके ॥ १ ॥
हाथ जोरि शिर नाइ कहत हरि दरवह जो पति गिरिजाके ।
हे सर्वज्ञ सुखद तुम जन कह मम दुख प्राण प्रियाके ।
तेहि हित कुल समेत रावण कह मारहु रणमें खेलाके ॥३॥
हे रामेश्वर हे कालांतक जै सुख देहु रमाके ।
रावण हति जै युत सिय लै फिरि पूजब पति जो उमाके ॥४।
को उदार शंकर सम सुर हित रखने हलाहल खाके ।
अस कथ होय विशुद्धानन्द कह रहि है अचल तोहि पाके ॥५॥
चलत कटक लंका सेतु होइ पारे ।
देखु प्रताप राम कह कपिदल पाहन जल विचतारे ॥ १ ॥
सागर मध्य जीव जल बाहर सुख युत राम निहारे ।
तेहीं पर चढि कपि चलत सेतु कोउ नैन पलक नाहि टारे ॥२॥
जै रघुवंश तिलक जै लछुमण जै सुग्रीव पुकारे ।
गरजि तरजि कपि चलत होत देइ मनहु लंके मुखदारे ॥३॥

शैल सुवेल नामतेहि उपर हरिदल युत पगुधारे।
सब विधि सुखद काल लखा,चेम हरि जै गणपतिको उचारे ॥४॥
रावण सभा खबर पहुंचायेसि उतरा कटक मुरारे।
हसि दश शीश विशुद्धानन्द कह्यो जग सरिस हमारे ॥५॥ ३
सुनु लंका पति अरज हमारे।
माल्यवंत एक सचिव सभा विच वचन विवेक उचारे ॥ १ ॥
जो भज सत चेतन सुख जग मय सोइ दशरथ सुत प्यारे।
हरण भार भुमि सुर साधुन हित वन प्रिया संग पगुधारे ॥२॥
ताको नारि हरी जबते तुम तबते पुर दुःख भारे।
वन उजार सुत मारि जारिपुर गये कपि लोतु निहारे ॥ ३ ॥
ताते सियलै मिलहु राम पहि आने हित हे य तुम्हारे।
लंकनाश जनिकरु परगहि कहो राखहु मोर दुलारे ॥ ४ ॥
सुनि रावण कहे जाहु निजाश्रम रिपुमन मोर दुलारे।
नाश विशुद्धानंद तब कुलहोइ असकहि भवन सिधारे। ५ ॥ ४ ॥
कहत मुकुंद हरि निकट बलाके।
केहिविधि सिय मिलिहे सो जतन कह कहो सबमनके मिलाके ॥१॥
जामवन्त सुग्रीव विभीषण कहत वचन हरषाके ।
नीत धर्मयुत काज करिये प्रभु भेजिये दूतमनि धाके। २ ॥
जाय सोइ जो सुभट पुनि नागर बात करे समुझाके।
बल बुद्धि देखराम अंगद कहे ममहित जाहु लंकाके ॥ ३ ॥
जेहि रावण हित काज होत मम बात करहु तुम जाके।
सब प्रकार लायक तोहि काकहो वेगि फिरहु मानिपाके ॥ ४ ॥
आदर मानादिये प्रभु मोकहु आइ चहद हम ताके।
अस कहि चला विशुद्धानंद हरि अंगद शीश नवाके ॥ ५ ॥ ५ ॥
चला बालिपूत लंका बलबुधि भारी।
पैठत नगर भेट रावण सुत बात करत तेहिमारी ॥ १ ॥
रहे सुभट ताके संग जो सो भय युत सभा पुकारी।
नाथ एक कपि तब सुत हतिपुर आयउ दुर जो भारी ॥ २ ॥

सुनत लंक पिच पग इंक भय घर भर पुरनरनारी।
नयतो जरा नगर अथ काहार पुनि आयन बनचारी॥
एहि विधि सुजान वान अंगद गय रावण सभा मझारी
हलफल सभा सुभट जह तह उठे कपि कुंजर को निहार
यथा योग आसन मय होरहं रावण आंग पसारी।
शीश नवाइ पिनुदानंर कपि बैठन सुमिर सुरारी॥ १॥

पूछत दशानन कहा से कपि आये।
कातव नामदूत कछु काके केहि नन ने तुम जाये॥ १॥
अंगद नाम वालि सुन बन्दर रघुवर दूत पठाये।
तवहि कारण कहव सुनहु हम जो श्रुति कवि मुनिगाये॥ २॥
सत चेतन सुग नित्य ज्ञान मय व्यापक वेद जनाये।
निज इशा दशरथ सुत सोनये जाकी नारि तुम लाये॥ ३॥
कुलयुत कुशल चहसि जव नै नव मानस मोर मिलाये।
ले परिजन सियकह त्रिग मुखगहि चलु पट गल में लगाये॥ ४॥
प्रणत पाह कहि नेरमि शरण त्रिच सव अभिमान गवाये।
करिहे अवली रघुवंश तिलक तोहि सय अवगुण विसराये॥ ५॥
सुनि दशवदन कहतरे बन्दर हम अस मन ठहराये।
नैकुल घालक भयेसि वाले कुल निज मुख दूत कहाये॥ ६॥
नोर जाति कर धर्म जानु मै जह तह लाज गवाये।
नाचत फादत दात निकारत धनहित लोक रिझाये॥ ७॥
जो मै विपुल विश्व निजवल कारि जिता सुभट रणघाये।
तापस शरण कहत तुम नेहिकह विकराठ मन नवपाये॥ ८॥
निज कर काट शीश शंकर पर वार भमित सो चढाये।
दश दश गाल जीन पवैत हर सल सोरिस सो उठाये॥ ९॥
अवगुण जानि दीन्ह वन पितु नेहि प्रिया विरह संताये।
किश सहाय आय दल गमपुर रिपु वलथाह जनाये॥ १०॥
...न वालसुन रे भूरन मनि अधम मोह चितछाये।
यह भलो भांतिहम जानत मम पितु काप छपाये॥ ११॥

घर दीपक तव दार वलिघर जिमि तू वधाये।
संमुख तोहि लाज तनिक नहि खर जिमि गाल वजाये॥ १२॥
रघुनाथ तोड हर धनु सिव ब्याह सुभट विचलाये।
सुवाहु मारीच सिन्धु तट जहि मुनि हिय विचध्याये॥ १३॥
नाक कान विनुतव भगिनि लख सून सियाको चोराये।
खर दूषण त्रिशरा हनि छन मह पाहन सिन्धु तराये॥ १४॥
जाकर दूत जारि तव पुर सुत यही वलते फल खाये।
कहां रहा वल गर्भ तोर तवधिक शठ तव जग जाये॥ १५॥
हम रघुनाथ दूत दशमस्तक तोरण लायक आये।
असकहि मारत हाथ भूमिपर रावण मुकुट गिराये॥ १६॥
चारि मुकुट अंगद निजकर गहि प्रभु के पास चलाये।
कहे रावण कपि मारु अंगद कहे किमि तुम गाल वजाये॥ १७॥
सभा मध्य पद रोपि कहत कपि जोशठ चरण उठाये।
सिय हारव हम फिरिहैं रामघर सुनत निशाचर धाये॥ १८॥
जो उठ पल उठत न कपि पद फिरत सुभट सकुचाये।
चहत उठावन रावण जवपद तवइपि तर्क सनाये॥ १९॥
तोर उवार नहे मम पदनहि को असतव समझाये।
गहु पद जाहुजो रमा रमण प्रभुग्राहि शरण गोहराये॥ २०॥
सुनत नाथ मम दीन वचन तव अभय करिहे अपनाये।
सुनि दस वदन फिरत आसन निज जिमि मृगराज गवाये॥ २१॥
लाज क्रोध युत रावण बोलत धरु कपि भागत जाये।
दोउ तापस धरि मारु खाहु खर तव अंगद खिलियाये॥ २२॥
रावल मूड वृथा जल्पसि अब वलबुधि तव सब पाये।
जब रण कपिदल चढिहे तोहि संग मरिहे चपेट चलाये॥ २३॥
तब न चलिहै असगाल तोर सठ जब हरि धनुष चढाये।
दादाक सियार सिंह इव रण विच हनिहै खेलाय खेलाये॥ २४॥
रावण सभा मान मथि अंगद यद दुर्वचन सुनाये।
श्रीरघुनाथ विशुद्धानंद कहि कपि प्रभुपास सिधाये॥ २५॥ ७॥

भिरत प्रचारं निशाचर कपि दल लखि तुल बल रण पाये ।
रघुवंश तिलक जो रावण दोउ दल मिलि गोहराये ॥ २ ॥
कपि आयुध पादप भूधर धरि मारत तरजि चलायें ।
खड्ग कृपाण सांग शक्ति गहि हनत कीश दल जायें ॥ ३ ॥
दोउ दल लड़त चाहें जै निजकरि रण बिच रथ मचायें ।
कटत भिरत महि गिरत उठत भट सरि करि खून बहाये ॥ ४ ॥
करत मार दल युगल सांझ लखि कपि असुर दल को हटायें ।
जै हरि लषण विशुद्धानंद कहि जैयुत हरि पदनाये ॥ ५ ॥ १० ॥

सुनहु अपर दिन फेरि लड़ाई ।
रवि कर देखि जुरे दोउ दल पुनि लड़ंत सरीस बड़ाई ॥ १ ॥
कपि दल प्रबल निशाचर दल कहं मर्दि गर्दि मंहिपाई ।
निज दल चलत मेघनाद लखि छारत सर समुदाई ॥ २ ॥
भये विकल कपि भागन लागे लषण लड़न हरषाई ।
प्रबल युगल रण हटत भिरत भट दोउ सरकर झरलाई ॥ ३ ॥
लषण विकल दल किये निभ्रर जब तब रावण सुत धाई ।
मारत शक्ति लषण हिय बिच तब धीर गिरत मुरछाई ॥ ४ ॥
भट हनिमत लै लषण राम पह धरा पाहा बिलगाई ।
वैद सुखेन विशुद्धानंद कह आनि धरत कपिराई ॥ ५ ॥ ११ ॥

लषण लगाके छाती सोचे रघुराई ।
वीर सुखेन सजीवन सम्मत लावण चले कपिराई ॥ १ ॥
मधु बिच कालनेमि हति नग पर खोजत औषधि नहि पाई ।
लिये उठाय सुमिरि हरि पर्वत चलत गगन बिलुनाई ॥ २ ॥
इहां राम लखि लषण लाल मुख कहत बचन बिलखाई ।
अर्ध रात गये कपि नहि आये केह भेजि अब हम भाई ॥ ३ ॥
सब जननी पह अवध जाइ हम कहब काह मुखलाई ।
जग जन कहिहैं राम रण लिय हित आवत बंधु गंवाई ॥ ४ ॥
यहि विधि करत विलाप विकल हरि पहुंचे पवन सुत भाई ।
घरी अरि वैद विशुद्धानंद मुख लषण उठत हरषाई ॥ ५ ॥ १२ ॥

विकल दशानन सभा के बिच आये।
उठा लषण हनिवत के यतन ते कहत खबर हम पाये ॥ १ ॥
लावहु कुंभकर्ण कह हम पह सुनत निशाचर धाये।
जाइ जगाइ लाइ रावण ढिग कहत वचन सिरनाये। २ ॥
कुशल निशाचर कुल किमि चाहसि जो सीता घर लाये।
अब प्रिय प्राण लगत सुत युत तेहि किमि विष बलकर गाये ॥ ३
राम सत्य जग स्वपन जानि तुम भजु हरि जेहि श्रुति गाये।
रिपु दल मलु नहि जाइ सुतहु तुम अस कहि मद सो पिलाये ॥४
भय मद मत्त अंक रावण गहि चले हरि दल हरपाये।
चाहत मुक्ति बिन्दुद्दानंद रण हरि कर वध ठठराये ॥ ५ ॥ १३ ॥

आये दल कुम्भकरण रण धीरा।
सुनि कपि धावत मारत पावे करि मानत तनक न पीरा ॥ १ ॥
जामवंत सुग्रीव बालि सुत हानिवत ते सुख बीरा।
मारि पछारि विकल दल पारत कीन्हेसि जिमि शिशु खीरा ॥ २ ॥
चले राम रिपु प्रबल देखि रण मारत हि तन तीरा।
ले पर्वत धावत खल हरि पह गरजत घन सो गंभीरा ॥ ३ ॥
कर पद काटि राम महि डारत धावत मनहु समीरा।
देखि राम सुर दुःखित ताहि हति काटत तन जिमि चीरा ॥ ४ ॥
हाहा शब्द करत महिसुर जै वहत खून जिमि नीरा।
सुर सब सुखी बिन्दुद्दानंद कहे जै रघुवर मति धीरा ॥ ५ ॥ १४ ॥

सुनु घननाद जस करत उपाई।
पिता अनुज वध सुनत दुखित अति चलत प्रपञ्च बढ़ाई ॥ १ ॥
राम रूप माया रचि सिय पह कटन ताहि देखाई।
लपटि राम पह नागफास करि बांधत दल समुदाई ॥ २ ॥
आपु गगन रथ चढ़ि गरजत सोभट सिय सम रूप बनाई।
काटि ताहि दुर्वचन कहत बहु हरि दल बल सकुचाई ॥ ३ ॥
जामवंत घननाद हाथ गहि पटकत अवनि घुमाई।
उर बिच चरण मारि तेहि फेंकत गिरत सो लंक मुरछाई ॥ ४ ॥

धन्य लखन कर जननी जनक जग जो तोहि रण बिच मारे।
अब लंका तपसीन कर मठभा जो जग विदित सुरारि ॥ ४ ॥
करि विवेक तजि शोक राम संग लड़त सो रण में प्रचारी।
सुरपित लंक विशुद्धानंद सर गये सरलगत खरारी ॥ ५ ॥ १८ ॥
सुनु दशवदन जो करत उपाई।
जाहि शुक्रगुरु पद कहि निज दुःख जेहि विधि कुल सो नसाई ॥ १ ॥
दीन्ह मंत्र गुरु ले लंका गये बैठत गुफा समाई।
करत हवन पूजन जप औ हित यह सुधिपाये रघुराई ॥ २ ॥
हरि आज्ञा हनिघत अंगद कपि पहुंचे जहां खराई।
करि मख भंग मार नहि उठत तब तेही नार धरिलाई ॥ ३ ॥
मार विकल जब लखा मंदोदरी रावन उठ खिसियाई।
चले भाग कपि तब वनिता निज रावण बहु समुझाई ॥ ४ ॥
एक मता सोइ जग होइ भासत जिमि स्वपने जग जाई।
मनु भव शोक विशुद्धानंद कहि चलत लड़न हरषाई ॥ ५ ॥ १९ ॥
सुनु मन राम रावण की लड़ाई।
जेहि ते बोध विवेक महि लखि निद्र पुर सुख सो पाई ॥ १ ॥
जब रावन रण चढ़त क्रोध युत कपि तन सर झुरलाई।
मूतमन मलते विकल राम दल निज तन पर न लखाई ॥ २ ॥
हरि सर दस तन काटि दियो जब पावक सर सो चलाई।
लखा लूक परमान उठ हरि दल कपि दल चले बिललाई ॥ ३ ॥
वरुण अस्त्र हरि किय निवारण रावण कपट बढ़ाई।
एक एक कपि प्रति रावन होई मारत धनुष चढ़ाई ॥ ४ ॥
चले भाग कपि प्रभु आज्ञा मांगि लखि रावण प्रभुताई।
जब रहा एक जितन तेहि तब भय कहूं कस जै गाई ॥ ५ ॥
निज दल विकल देखि हरि सर करि माया काट गिराई।
उठे जन्तु कपि मुदित भो रन बिच मारत विटप चलाई ॥ ६ ॥
रावन उर बिच मारत हनिबन गिरत विरथ मुरछाई।
हरि धनवन्द देत कपि दस चले कवन मुक्ल प्रभुताई ॥ ७ ॥

राम अनन्त अनन्त कोश रचि कपि मारत रघुराई।
थकित राम दल लखिमाया अस जहा तहा चलत पराई ॥ ८ ॥
विचलत दल निज लखि हरिसर कर माया सकल नसाई।
फिरे भालु कपि युद्ध कर नहितजे रघुवर गोहराई ॥ ८ ॥
परा मार दोउदल सरोपकरि कटे भट रण बहुताई।
चले रवि अस्त विशुद्धानंद लखि निज निज आश्रम जाई ॥१०॥२०॥

सुनहु विजय जिमि रामरण पाये।
जब रावण रण रथ चढ़ि आयत संग सुभट बहु लाये ॥ १ ॥
चढ़ि रथराम चले दल संगहै जो सुरराज पठाये।
दोउदल सुभट भिरे तुल बल लखि मारत शस्त्र उठाये ॥ २ ॥
रावण मस्तक कटत रामसर लगत बहुरि उपजाये।
थकित राम अस हाल देखि सुर नर इयशोक जनाये ॥ ३ ॥
जब विभिषण कहत भेद तब हरखित ध न चलाये।
सुधाभाम सोपत पावक सर तब रावण खिसियाये ॥ ४ ॥
लैकर शूल विभिषण पर जब मारन हित खलधाये।
तब हरि सरकर काट भुजा तोहि बोलत घोर लखाये ॥ ५ ॥
रेखल चोर अधम निश्चर कुल, किमिपाखंड बढ़ाये।
करत विरोध न भै तोहि समवर्ती किमि दुःख कुल को चढ़ाये ॥६॥
आज हतब तोहि रण बिच प्रण मम जो रविकुल हमजाये।
असकहि मारत सर सरोप रण काटत शिरकर धाये ॥ ७ ॥
दोउ दल कटि कटि दहत रक्त सरि रवि शशि सर सो छपाये।
नाचत भूतप्रेत योगिणि गण धर सो खगादिक खाये। ८ ॥
देखि दुःखित निजदल देवन कह क्रोध अधिक बितछाये।
दस बिस एक बाण करि रघुवर रावण काट गिराये। ९ ॥
हाहा शब्द करत सोगोरत महि हरि मुख तेज समाये।
जै धुनि गगन विशुद्धानंद भुवि जे रघुवर सुरगाय ॥ १० ॥ २१ ॥

सुनु मनराम सुयश सुखदाई।
रावण रण बिच हत लखि लंका विल्पत खर समुदाई ॥ १ ॥

अनुज मदोदरि विकल शोकवस कहि रावण प्रभुताई।
किये विशोक विवेक वचन कहि लगन सभन समुझाई ॥ २ ॥
कारे परलोक क्रिया सब सुधि होइ आये जहा रघुराई।
हरि आज्ञा सो विभिषण कह पुर लक्षन तिलक दियजाई ॥ ३ ॥
विधियुत सियकह आनिराम पह पावक हाथ मिलाई।
छाया सिय लै पावक निज सिय रघुवर हाथ धराई ॥ ४ ॥
ब्रह्मादिक सुर सकल आइ तहा हरि पह विनय सुनाई।
अब हम सुखी विष्णुद्धानंद कहि जै रघुवर सिरनाई ॥ ५ ॥ २२ ॥

चलत अवध हरि सिय जय पाय।
हरि रुख इन्द्र अमिय वरसत रण कपि दल सकल जिवाये ॥ १ ॥
सुरकपि दल निरखत छवि हरिसिय मुदित जन्म फल पाये।
हम सव हित प्रभु सहेउ विपति वड कहत वचन विलखाये ॥ २ ॥
आदर दान मान हरिदल का करत विभीषण आये।
जो जेहि चाहदिये सोइ तेहिकह प्रभुपर विनय सुनाये ॥ ३ ॥
हरिसिय लषण सुकंठ विभिषण कपिदल रथसो चढ़ाये।
चलत विमान समीर वेग करि सिय कह सकल देखाये ॥ ४ ॥
पहुंचि प्रयाग मुदित सुरसरि लखि हनिवत अवध पठाये।
संग निषाद विष्णुद्धानंद लै पुनि रथ अवध चलाये ॥ ५ ॥ २३ ॥

इति लंका काण्ड

उत्तर काण्ड

भरत विकल दुःख सोचें रघुराई।
निज जननी करनि हिय गुनि पुनि सुरति वचन मुनिभाई ॥ १ ॥
एक दिवस हरि वचन वचनहित रहे मोहि सुख दुःखदाई।
जव नहि हरि मम मिलिहे आज तवतन मम अवसी नसाई ॥२॥
निज जन कर अवगुण प्रभु चित नहि रहत कहत मुनिराई।
ओउन वंधु होव हम हरिकर अवसि मिलिहे प्रभुभाई ॥ ३ ॥

करत विचार मगन सत पथ दुःख गाइ कहत कपिराई।
जाके विरह विकल तुम निशिदिन आये से कुशल बड़ाई ॥ ४ ॥
रिपुरण दलिमिल अनुज सिया युत तिहुपुर जे यश गाई।
वचन पियुष विशुद्धानंद सुनि भरत उठत हरषाई ॥ ५ ॥ १ ॥
पूछत भरतजी कहा से तुम आये।
कातय नाम वियोग रोग हरि ममहरि अमिय पिलाये ॥ १ ॥
सचिव सुकंठ नाम हनिवत कपितय हित रामपठाये।
सुनि दोउ मिलत मुदित मन जन लखि चितवत पलक उठाये ॥२॥
कुशल अवध हनिवन हरिपह कहिपुर जन भरत जनाये।
रथगज साजि सभ चलत नारि नर भरत अमिय जिमिपाये ॥ ३ ॥
लखि विमान हरिसिय को अनुज युत मुदित लोग सभधाये।
महिरथ उतरि भरत हरि सियपद गिरत नयन जलछाये ॥ ४ ॥
धरि भरि अङ्क मिलत सुदय जो भये सो कवि कहिन सिराये।
मगनानंद विशुद्धानंद सब चलत अवध हरषाये ॥ ५ ॥ २ ॥
अवध मुदित जन हरिसिय पाये।
कलश निशान पणव धुनि घर घर सुर पुर समसो बनाये ॥ १ ॥
यथा योग सब सन मिलि हरिसिय कपिन्द्र निवास दिवाये।
भूषण बसन अंग सब साज साज जहाँ तहाँ मङ्गल गाये ॥ २ ॥
देन राम कह राज तिलक जलतीर्थ सकल मगाये।
जा अभिषेक करण हित श्रुति कहे सो सब गुरु सजवाये ॥ ३ ॥
देश देश कर भूप विप्रवर वैश्य शूद्र मुनि आये।
वन्दनिवार पताका तोरन बाजत सकल बजाये ॥ ४ ॥
गगन मगन सर दुंदभी बाजत उमंग अवध नितछाये।
सुरजन मगन विशुद्धानंद लखि शुभ दिन मनतह धाये ॥ ५ ॥ ३ ॥
सुनहु तिलक रघुवर सीय जीके।
रतन जड़ित सिंगासन रचि धरि लखि रवि होवत फीके ॥ १ ॥
भूषण बसन अंग सजि हरि सिय वाम संग युवतीके।
शीश नाय महि सुर पैठत तेहि शोभत अति कमनीके ॥२॥

प्रथम तिलक गुरु दिये निज कर करि लखि मुख विप्र धनीके।
मुनि गन विप्र भूप सभ देकर चित वत स्नेह घनीके ॥ ३ ॥
गज हर इन्द्र वेद सुरनरमुनि वर्णत भाल मणीके।
भरत भरत बहु निर्पत हरि सिय रहत न काम कनीके ॥ ४ ॥
जे धुनि तिहु पर राम राज कर हर समगण सबहीके।
याचक दीन विशुद्धानंद तहा जाचत नित सिय पीके ॥ ५ ॥ ४ ॥

बाजत अवधपुर आनंद बधाई।
भये राम राजा तिहु पुर जय दान महि सुरपाई ॥ १ ॥
गये देव निज निज घर घर पुर हरि कह शोभा नयाई।
यथायोग सनमान सभन कह करि पठवत रघुराई ॥ २ ॥
जो जेहि चाह सो हरि पूरण किय गये कपि ले कपिराई।
लंका पति लेका गय नृप सब गये जहां ते जेहि आई ॥ ३ ॥
ब्रह्मानंद मगन मुनि सब सब पुर जन लोग लुगाई।
लखि छवि राम सिया सो मुदित नन दिवसन जात जनाई ॥ ४ ॥
दैहिक दैविक भौतिक दुख जग सो काहु न संताई ॥
राम प्रताप विशुद्धानंद लखि निज हित हरि यश गाई ॥ ५ ॥ ५ ॥

सुनु मन हरि जिमि राज चलाये।
शौच स्नान होम जप तर्पण पञ्च देव चित लाये। १ ॥
यज्ञ करन सो विविधि विधि गुरु मुनि जहां महिसुर भलपाये।
वापी कूप तड़ाग देवघर शाल ग्राम विविध बनाये ॥ २ ॥
पालन प्रजा पुत्र इव प्रति दिन धर्म विवेक सुनाये ॥
काम भक्ति शुभ कर्म करण हित नर मन वेद जनाये ॥ ३ ॥
जो जेहि माय राम सनमुख तिहि नाम कीन सो भव पठाये।
मुनिगन मन मनभंग करन नित करत सुमन हरषाये ॥ ४ ॥
राम राज सदा सुख न मना दुःख तन कबि कहि न सिराये।
सिय वर विमल विशुद्धानंद हित नित अघ सदा निज गाये ॥ ५ ॥

कवित ।

सर सह जाए ताते सयु कहाए पुनि अवध को धाए स
सन्त मन भाए है ॥

जाके तीर सन्तवीर पिवत निरमल नीर रटत हरण पीर
फल पाये है ॥

जलको कल्लोल देखि मनहु केलोलजात हरितन प्रगट सो
प्रभु गाए है ॥

ताहि तीर वासकरि सेवत विशुद्धानन्द गुरुपद प्रीति रा
को सुनाए है ॥ १ ॥

सरयु के तीर राजा रामरणधीर सो हरण जग पीर ताहि
ने पुकारे है ॥

अतिसेगभीर शुचि मंजुल कल्लोल नीर सेवे सन्त धीर रवि
सुख भारे है ॥

सुखद समीर जाको जल सम क्षीरसो तो अधम सरीर बहु म
को तारे है ॥

रामरूप ध्यान करि कहत विशुद्धानन्द सरयु को सेवे सोतो
मोसे प्यारे है ॥ २ ।

सरयू किनारे फेकणडया था पापधारे तहा बहु एक वि
बिलगंज नाम जाहिको ॥

हाट बाट धनिक ब्यपार हित यनिक सो बैठे वस्तु लै लेन देन
ताहि को ॥

सुन्दर सुभग नर बोले बरबर सोतो सेवे सन्त सीस धर
दान राहिको ॥

ताहिके उधार हित शास्त्र कोप्रसंग गीत कहत विशुद्धानन्द
रूप वाहि को ॥ ३ ॥

नर तन हाठ सेवे काम कर्म जानि हठ नाना यमपुर लठ
न लजाए है ॥

पापकोसंघट सुत नारि दिन राति रट धर्म कर्म खट पट दा
काम भाए है ॥
तातें मन लटपट त्यागि भज रामभट जातें गर्भ बासकट दुःख
ना सन्ताप है ॥
झटपट सरयु के तट सो विशुद्धानन्द कामनट नास च
रामरट लाए है ॥ ४ ॥
सरयु के तट कंकण्डवा बाजो के मठ जहा पाकरि पीपर य
सठ नाहि जाते है ॥
रामसोसुभट जाके कटि पीटपट तहा सन्तन को ठट बैठिरा
गुण गाते है ॥
शास्त्र वेद जहा रट सुमिपाप कट झट खलन संघट देखि आ
दुःख पाते है ॥
काहुसे ना अटपट राम एक घटघट सेवत विशुद्धानन्द ब्रह्म
ज्ञान राते है ॥ ५ ॥
दिन प्रति होत भोर देर मति करुनर मनवच कायतें तुं राम को
पुकार रे ॥
दाम चाम कामहित रामको विसारकर रतन अमोल जन्म
जुए जानि हार रे ॥
रामको कहत तोहि दामना तानिक लागे लोक परलोक तेरा
मुख उजिआर रे ॥
वेद शास्त्र सार तोहि कहत विशुद्धानन्द सन्त के समाज
विच राम को विचार रे ॥ ६ ॥
बेदके भनैया देखि मैया मर जात मानो नकल के करैया देखि
आवत धन जात मे ॥
साधुन को देखि शोक सुमकलमुख स्वांस लेत रंडिको देखि
हंडि चहत बात बात मे ।
धर्म के बातसुन मौनहाइ लखेपड़े पापको करण दित ललकत
जात रात मे ॥

ऐसे सरदारन को धिकाधिक विशुद्धानन्द पशु के समान मान राखत काम मात मे ॥ ७ ॥

पैसाते पाप साप दुःखते विलात जात पैसा ते बाप भलो पूत काह मानत है॥

पैसा ते जात भाई कुलते कुटुंब माने पैसाते लाइक सरदार जग जानत है ॥

पैसाते नारी नरको अंगसों लगावत अंग पैसाते सन्त सतसंग सो बखानत है॥

पैसाकि बड़ाई को कहा कहे विशुद्धानन्द पैसाते राम निजरूप कारे भावत है ॥ ८ ॥

वेद के पढैयाको अढैया देत देर कर नकल के करैया को रुपैया देत रुका मे॥

गढ़के फतैया सभावीचके लड़ैया ताको तलब कर राखत है शूका मे ॥

रंडो के आपते मान करै विष्णु ऐसा साधुन को देखिके लुकात है विलुका मे।

ऐसे सरदारन को संग ना विशुद्धानन्द दान रहे रंडो में सान रहा हुका मे ॥ ९ ॥

श्रीगणेशायनमः ॥

ज्ञान और भक्ति प्रकरण ।

ध्रुपद ।

राम को स्वरूप श्याम देखि कोट लाज काम वेद नेति नी
कहि जासु गुण गाया है ॥ १ ।

कटती मुकुट शीस संग दशीवन्त कोश बाहु तो अजान तो
शायक सोहायो है ॥ २ ॥

नाभि तो गम्भीर चीर पीन नासिका सों कीर बदन मयंक भ्र
मनोज चाप छायो है ॥ ३ ॥

केहरी को चाल भाल शोभित विशालमाल पाद कंज अलिगण
मुनि मन भायो है ॥ ४ ॥

ज्ञान ते विशुद्धानन्द चाहत सो ब्रह्मानन्द मानस विचार काय
शीश को नवायो है ॥ ५ ॥ १ ॥

ब्रह्म सभा वर राजति वानी ।
शक्ति अनादि अजाजग कारण सत चित हुख कर खानी ।
याग विलास वास जेहि निज मऽ करति कलोल कलरानी ॥
चतुर मुख की महरानी ॥ १ ॥
नाम स्वरा शारद स्वर श्रुत जेहि वीणा पुस्तक पानी ।
वेद पुराण शास्त्र जाको तन बोलत सब रसनानी ॥
स्वरूप जाको जानत ज्ञानी ॥ २ ।
आदि अकार हकार जो आतम मध्य धरण तन जानी ।
परायस्य वयखरी मध्यया बोधति जग ब्रह्म तानी ॥
हृदय रसना ठहरानी ॥ ३ ॥
जादि बिना जग मूरख अन्धा मुक संख्या कर हानी ।
अज हरि हर औ व्यास आदि कवि सेवत सब ही कल्याणी ॥
जो जग विच सब सुख खानी ॥ ४ ॥

तेहि रक्षा हित तन धन त्यागत चितवत दोष ना कनी ॥ ३ ॥
प य प्रकार तुम प्रबल पिता प्रभु जन अवगुण ना गनी।
वेद वचन कइ सत्य होन हित नासहु असुर मनी ॥ ४ ॥
ताके शरण जाय जन तोहि तजि को रक्षक है धनी।
पालहु दीन विशुद्धानन्द कह रघुकुल दीप मनी। ५ ॥ ५ ॥

रघुवर जन कह आस तुम्हारे।
जस भगवश जन कद नहि तुम कह जिमि पितु बालक मारे ॥ १ ॥
कोउ कह बल तन धन जनरण कह कोउ कुटुम्ब परिवारे।
कोउ कड तंत्र मंत्र जन्त्रन कह कोउ तप शास्त्र विचारे ॥ २ ॥
तव भक्तन कह एक प्रबल बल जिमि वनिता पति धारे।
तोहि भरोस निर्भर विचरत जग गनत ना जिमि मतवारे ॥ ३ ॥
जेहि जन पर प्रभु किपा किये तुम देखन नैन उघारे।
तेहि जन कह वैरी जग होई इक सकत न रूम उखारे ॥ ४ ॥
यहि स्वभाव श्रुति रटत दिवस निशि भक्त प्राण ते प्यारे।
सोई अवलम्ब विशुद्धानन्द करि गावत सरयु किनारे ॥ ५ ॥ ६ ॥

भजुमन राम तु सरयु किनारे।
गुरु पद प्रीत अखंड नाम रट मानस ब्रह्म विचारे ॥ १ ॥
कर स्नान पान सर्यु जल देखु राम सिय सारे।
गुरु मुख वचन अमिय रस सुनि सुनि दुतिया भ्रम निवारे ॥ २ ॥
र तन सुलभ समागम सन्तन रसिक होउ तुम प्यारे।
न भक्ति शुभकर्म करत निन वाञ्छित फल दे निहारे ॥ ३ ॥
त हरि कथा श्रवण रात साधन सहित विवेक तुमारे।
हि अज्ञान नास रजनी कर उदित बोध हिय धारे ॥ ४ ॥
ई ते अपर नामाधनमन भव जेहि विधि उत्तरासि पारे।
सिद्धान्त विशुद्धानंद हरि सब सुसम्य शरण तुम्हारे ॥ ५ ॥ ७ ॥

भजु मन राम सरन विश्रामा।
भोग जग तो कह मोक्ष होत परिणामा ॥ १ ॥
गेह मह सुख हित रसीक होसि घन धामा।

तन मह जन्म कल्प बहु बीते पूरण होत न कामा ॥ २ ॥
हरि तजि मान मोह ममता में मगन दिवस निशि यामा ।
तातें सहत विपति दारुण तै जन्म मरण यमु धामा ॥ ३ ॥
तन अनेक भोग कर कारण तारन नर सुखलामा ।
सो तन पाई धर्म सेवन शुभ हिय शुचि रुचि हरि श्यामा ॥ ४ ॥
कर विवेक जग को ईश्वर हम रसना कलि हरि नामा ।
येहि ते अवर विशुधानंद नहीं साधन सुग अभि रामा ॥ ५ ॥ ८ ॥

हे हरि तव गति जात न जानी ।
करत विचार देव मुनि हारे समुझि परै नहि बानी ॥ १ ॥
दंपति सुख हित करत संग नित विन्दु गर्भ गत पानी ।
तेहि रचि पिण्ड द्वार नाना युत दुःख सुख कर सोइ खानी ॥ २ ॥
जड़ सो पिण्ड पाइ चेतन तहां योनि यंत्र ठहरानी ।
बाहर बाल केलि रस तरुणा तरुणी रसिक रससानी ॥ ३ ॥
जग विकल चली पलीत अग तजि पहुँचे यम रजधानी ।
सो तन देखि भयानक लागे किट विट भस्म समानी ॥ ४ ॥
यह लीला तव नित्य शक्ति युत मूढ़ अंह मम मानी ।
तोहि तजि विषय विशुधानन्द रत येहि त कवन बड़हानी ॥ ५ ॥ ९ ॥

हे ह'' कवन भांति गुण गाओ ।
सदा लोभ मानस विषया में निमिष विश्राम न पाओ ॥ १ ॥
स्वतः अनादि प्रवाह जगत यह तेहि मन रुचि उपजाओ ।
बिनु समुझे रवि कर थारिगेध भय त्रिविध पान हित धाओ ॥ २ ॥
परनिन्दा अपकार नारि रस कहत सुनत रतिलाओ ।
तव यश श्रवण मनन हित कारण कबहु न चाव बढ़ाओ ॥ ३ ॥
यद्यपि पंच कोस अभि अन्तर उर पुर वश ठहराओ ।
तदपि न प्रेम विशुधानंद सन तेहि ते विनय सुनाओ ॥ ४ ॥ १० ॥

केहि विधि जीव सुख पावे हो हरि ।
सदा मोह माया ममता में झूठे आप बंधावे ॥ १ ॥
सत चित आनंद रूप अनूप तुम सुख स्वरूप श्रुति गावे ।

तेहि के आस फास छुटत नहि जन्म मरण तन फेरा ॥ २ ॥
जो तन भीतर प्राण वहत नित तेहि अंतर तव डेरा ।
तेहि संकल्प शक्ति मन भासत तामि जगत वसेरा ॥ ३ ॥
रजत सीप जिमि रवि जल भासत स्वपन आभ नभ खेरा ।
तिमि तव प्रभा अहं मम तामें विलसत धाम तिन तेरा ॥ ४ ॥
जब लगि मैं न दास तुम स्वामी तब लगि तुम नहि नेरा ।
अब केहि हेतु विशुधानंद दुःख सहत राम कर चेरा ॥ ५ ॥

रघुबर यह मन मानत नाहीं ।
निज स्वभाव से सहत दुसह दुःख तदपि न लाज कछु ताहीं
कबहु स्वर्ग अपवर्ग नारि रस कबहु राज सुख पाहीं ।
कबहु शत्रु सुत देह गेह महं भ्रमत सकल जगमाहीं ॥ २ ॥
कबहु गान रसतान मान महं कबहु दान रत आहीं ।
निगमागम कह कहत सुनत पुनि विषय आस नहि जाहीं ॥
तव यश कहत सुनत आलस अति विषय कहत हरषाहीं ।
तातें यमपुर गर्भ वास दुःख सहत विपति कर राहीं ॥ ४ ॥
तुम उदार प्रेरक सब के उर रक्षक भक्त सदाहीं ।
मन गति नाश विशुधानंद हित दुखित शरण अब आहीं ॥ ५ ॥

अब कछु समुझ परेउ हरि नीके ।
तव मनमुख सुख विमुख महादुःख जरनि न जात यह जीके
होत विवेक विराग भक्तियुत बोध प्रेम सियपीके ।
दारा सुत सम्पति सनेह बस वास जठर जननीके ॥ २ ॥
मन वचकाय विराग विषय युत राग राम पनहींके ।
हरिरस चाख भाखी भगवत यश तिहुपुर रस सब फीके ॥
तव स्वरूप बिन नहि दुतिया कोउ जो भासत सो थलीके ।
माहक जन्म मरण तनसुख दुःख भ्रम जगराह गलीके ॥ ४ ॥
नाम रूप जग सगुण ब्रह्म प्रिया अगुण भांति अस्तीके ।
एहि विवेक विशुधानंद हित चाहत सिय पिय गलीके ॥ ५ ॥

हरि हम बहुत भांति दुःखपाये ।
तव पद विमुख विषय सनमुख होइ हाटे हाट विकाये ॥ १ ॥
पंच भूत संग भंग मानि निज स्वाद पंच लपटाये ।
इन्द्र कद हेरिघेरि वनिताघर हटत न काम हटाये ॥ २ ॥
पुनि पुनि गर्भवास जननी वासि योनिद्वार बहुजाये ।
मान मोह ज्वर सुधा जरासहि यमपुर लट सट खाये ॥ ३ ॥
नहिकोउ असजग मिलेउ नाथ जो सुनि दुःख लेतछोजाये ।
ताते सहेउ दहेउ न कतहु कछु पशु जिमिखाल कढ़ाये ॥ ४ ॥
सुना विमलजन सुयश रावरी भयेपार यशगाये ।
उचित विचार विशुधानंद कह कागहु शरण ताकि आये ॥ ५ ॥ १७

सुन मनासिय पियसंग हियलावो ।
यह उपाय तरण भव निधि कहपार सुगम सुखपावो ॥ १ ॥
जिमि सनेह तन सुत वनिता धन तिमि हरि जस तुमगावो ।
तजु जग नेह मोह ममता कर सन्त समागम भावो ॥ २ ॥
बिनु विचार सुख विषय संग तोहि करि विचार पछताओ
यमपुर जन्म मरण दुःखफल लखि को सुख तुमही बताओ ॥ ३ ॥
सुरसरि जल समीप तजि मूरख रवि जल हित किमिधाओ ।
छारि अमिय विष वरबस चाहत धिक हिय निज समुझाओ ॥ ४ ॥
गुरु मुख निरखि देख निजमह जग निज तन हरिहि समाओ ।
यह विज्ञान विशुधानंद हित अनत कतहु जनिजाओ ॥ ५ ॥ १८ ॥

हरि तोहि तजि केहि जाचन जाई ।
तजि सुखसंग राज रंकन गहि किमि भय पेट भराई ॥ १ ॥
सुरसरि जल समीप तजिमृग जल तृषित दौरि किमिधाई ।
कामधेनु घर सुरतरु परिहरि खरि वट कस फलपाई ॥ २ ॥
काम क्रोध अज्ञान लोभयुत जीव अनीश लखाई ।
तेहि वराक सन भोग मोक्ष हित चाह सुमन घन न्याई ॥ ३ ॥
देवदनुज कपि मनुज नाग खगपवन आदि गनिआई ।
. . पद आस निराम हौर जग सुग कारि लीन तोहितांई ॥ ४ ॥

मम दरबार सुयश श्रुति पै सुनि कमन मूढ़ चिनलाई ।
गहु निज हाथ विशुधानंद कर करहु कृपा यदुराई ॥ ५ ॥ १९ ॥

हरि सिय तजि कहां जाहु मन मेरे ।
जहां जाहु तहां जन्म मरण भय निर्भय पद हरि केरे ॥ १ ॥
जोइ कारक सोइ रक्षक भक्षक तक्षक कालचंडेरे ।
सिंह शरण तजि व्याघ्र पाइ भय शशक शरण किमि हेरे ॥ २ ॥
यथा दरिद्र कांच मद गहि मणि अमिय देत कर फेरे ।
इन्द्र संग सुर पुर तजि खर कह रजक महल धम गेरे ॥ ३ ॥
काल स्वभाव कर्म वस प्रेरित तथा चाह चित तेरे ।
निज रक्षा हित फिरत देश घर हित मित सुत जन नेरे ॥ ४ ॥
भव श्रम शोषक जन कह तोषक श्रुति पुरान जोंहि टेरे ।
तेहि समीप विशुधानंद यमि गावहु यश होइ चेरे ॥ ५ ॥ २० ॥

हरि तोहि और न जाचन कीजै ।
सब स्वरूप आत्म सुख साधन ज्ञान कृपा करि दीजै ॥ १ ॥
ताको हेतु भक्ति श्रुति गावत जोंहि कलेश सब छीजै ।
तव यश अमिय कहत समुझत हिय सुनत श्रवन पुट पीजै ॥ २ ॥
यद्यपि एक अनाम अरूप तुम नहिं दूसर किमि तीजै ।
निज इच्छा मति विश्व रूप होइ नाचत नट सम कीजै ॥ ३ ॥
जो सुर असुर नागनर खग मुनि मायावश भरमीजै ।
तेजांचक जोहि चाह यमन मन जाचत नाहिं लजीजै ॥ ४ ॥
प्रभु पद पावन भये अजाचक भव दुःख नाहीं सुनीजै ।
सब रघुवंश विशुद्धानन्द कह रामि शरण अपनीजै ॥ ५ ॥ २१ ॥

हरि तुमहि अवलम्बन मोरे ।
सत्य कहौं सब ग्रन्थ पाइ सब मान भरोसम भोरे ॥ १ ॥
मन वच काय विहाय आसपर दास कृपानिधि तोरे ।
सब अज्ञान जनित दुःख जन कह रिमि पेरण भय घोरे ॥ २ ॥
तव यश कथन श्रवण चिन्तन हित मन कर दरशन जोरे ।
सोरस स्वाति माति चितचातक चितवत चितवहु मोरे ॥ ३ ॥

भजन—कैसे होला जानी नाहीं रामजी।

वेदपुराण मुनिहरि मिलिने हित भजन कर सब बोला ॥ १ ॥

योग याग जप तप व्रत करि सब गये चित चंचल चहुं दिशि नित डोला ॥ २ ॥

यह मन अधम रसिक बनि तारस ताते विकल यमपुर चित चोला ॥ ३ ॥

निज कल्लोल रचित जग सुख दुःख के ते वसाइके उजार डाले रोला ॥ ४ ॥

सरयु किनार विशुधानन्द हरि गावत यश अनमोला ॥५॥ २५ ॥

मगन जियरा होइहै कब हरि के देखे।

सुतवनिता धन तजिममता मन सत चेतन सुख रस कब पैहै ॥ १ ॥
लोकपरलोक अवलोकन की परि हर निज भीतर चित कबलगैहै॥२
सन्तसमागम शास्त्र श्रवण हित जगसे उदास होइ दियाकबजैहै ॥३॥
शशिसम वदन कदन दुःख जन कहनैना निरखि कबहोय राजुरहैहै॥४॥
तजिसब आस विशुधानंद जगदुलसिर हरियश जब गइहै ॥५॥२६॥

हरि जी के देखि मगन जियरा भइले ॥ १ ॥
जब हरिप्रगट भये निजरूप हिय जग सत भ्रम दुतिया चलिगइले॥२
जन्म मरण दुःख सुख में मेरा चाह दाह मूल युत सबही नसइले॥३॥
तब मन मगन सहज सुख भीतर बाहा व्यवहार करि तुरित परइले॥४
असरघुनाथ हरण दुःख साथ सबशरण विशुधानन्दता कीतकि भइले ५

भजन।

विलसत हरि सिय सर्युके तीरे।
अगम अगोचर मन बुधि पर जोइ सोइ रविकुल रत्न धीरे ॥ १ ॥
जातवेद मह दहन करन जिमि पवन गवन रस नीरे।
धरा अचल अवकाश गगनमह घृत पुरण जिमि क्षीरे ॥ २ ॥
दिन मणि प्रभा अमिय शशि मह जिमि कनक आभ छवि हीरे।
तिमि चेतन निज रूप शक्ति युत भासत नर सर बीरे ॥ ३ ॥

द्दश इदय भाव चेतन चित नहि जिमि कप समीरे।
जो प्रत्यक्ष भावसों मिथ्या जस रवि जलमें गंभीरे॥ ४॥
यथा स्वपन वनिता सुत धहि दुःख जागत सुखनभपीरे।
तथा विवेक विबुधानन्द भये हरि हिय मति गति धीरे॥ ५॥ २८॥

हो हरि मन गति दुःख किमि जावे।
तव स्वरूप अनुभव रस विनु मन तृषित चहु दिशि धावे॥ १॥
यथा स्वपन वनिता सुत धन सुख सत्य जानि लपटावे।
जन्म मरण युत हरष शोक तहां जागे विन न नसावे॥ २॥
वन्ध्या सुत जिमि गगन पुत्र सन बंधु स्नेह बढ़ावे।
करि विरोध निज भाग हनुरण तुरत तोष न आवे॥ ३॥
यथा चित्र परनारि पुरुष सुख बहुरि वियोग संतावे।
…धि करनीर मध्यमंजन करि बूड़त पार नपावे॥ ४॥
…था जगत निज बोध रूप मह अन्न माव दरसावे।
…मल स्वरूप विबुधानंद हरि गुरु विनु कौन लखावे॥ ५॥ २९॥

सो सुख क्यों नहि चाहत रे मन।
…न्द घन रघुपति छवि सिययुत॥ १॥
…सुख अचल समाधि शिव सेवत मगन काम सुख दाहत रे मन।
…जि विषय स्यादहित रविकर वारिधि मह तें थाहत रे मन॥२॥
…सुख मगन सदा सनकादिक विचरत गति अव्याहत रे मन।
…जि धून सम माया सुरनभ कर सुमन सराहत रे मन॥ ३॥
…र भास सपुति काल ते कारन देहधर पावत रे मन।
… अमिय बोधरस विनुशठ घरघर श्वासम धावत रे मन॥॥
…पाई त्रिविध दारुण दुःख कारण साहित नसावत रे मन।
…तसो विबुधानंद हरि चरणशरण यशगावत रे मन॥ ३०॥

खेमटा।

…तिया सुरतिया मे वसगये कैसे के भोंवे मयनवा॥ १॥
…हन फल देगये पाया मे मानुष तनवाः।

तिशय कृपालु कृपा गुरु करिके कैर उपदेश सोहनवा ॥ १ ॥
ुत देह तीननहि तोमे ना तोहि जन्म मरनवा ।
तचित-आनन्द रूप आपलखि तज मनमोह स्वपनवा ॥ २ ॥
अधार जग आश्रित तेरे जिमि तमधूम गगनवा ।
पि तोहि सनबंध ना जगते करमम वात मननवा ॥ ३ ॥
त्य कहो जग असत सत्य तुम व्यापक एक चिदघनवा ।
निभय मगन विशुधानन्द हिय वहुरिना होत गवनवा ॥ ४ ॥ ३१ ॥
हरि तोहि मोहि किमि अन्तर होई ।
इ विवेक समुझे विनु भव निधि पार न पावत कोई ॥ १ ॥
व स्वरूप जल मधुर स्वच्छ नित अगम पार नहीं जोई ।
वन प्रकृति निमित तरंग होई भासत जिवब्रह्म सोई ॥ २ ॥
तमि अघकाश न भिन्न गगन से पवन गवन रसतोई ।
वि दीपक शशि प्रभा कनकछवि पहुप गंध जिमि गोई ॥ ३ ॥
प भिन्न नहि जात वेद से धरा धराधर नोई ।
तेमि चेतन नहि पृथक चेतन से मुनि मत वेदनिचोई ॥ ४ ॥
ाबह्म भेद शब्द कृत कलपित सो विकल्प वियखोई ।
ान उपाधि विशुधानंद तजि विमल एक मल धोई ॥ ५ ॥ ३२ ॥

ठुमरी ।

हरत अज्ञान हरि निज भुज चक्र धरि हेरि हेरि हिये जन
ाहि भजु जियरे ॥ १ ॥

देह गेह नेह आस सो तो तेरे गले फास ताते तु सनेह त्यागि
न सुत तियरे ॥ २ ॥

काम कर्म त्यागि निष्काम कर्म शुभ लागि जानि होय प्रसन्न
ाम हेत सुधि धियरे ॥ ३ ॥

श्रवण मनन निदिध्यासन वेदांत नित गुरुमुख देखि लखि
निज बुधि धियरे ॥ ४ ॥

अगुण सगुण रूप ब्रह्म श्रुति भाखे भुप चाहत विशुधानंद
पय हियरे ॥ ५ ॥ ३३ ॥

बरसानी खेमटा।

मिले के मननधा हरि से करु मोरे सजनी ॥ १ ॥

शुचि रुचि युत जाइ बैठु सन्सङ्ग बीच गुरु उपदेश हिय धर मोरी सजनी ॥ २ ॥

सुन्दरी सुभाग बुद्धि पिय पहिचानु निज पट रस त्यागि साधि सङ्ग जगु सजनी ॥ ३ ॥

पञ्चन को सङ्ग तजि निज पति अङ्ग साजि पिय परिताप परिहरु मोरे सजनी ॥ ४ ॥

आपको गवांवे जब सब सुख पावे तब कहत विशुद्धानंद भव तरुसजनी ॥ ५ ॥ ३४ ॥

खेमटा।

देखो योगिया के बात कैसे समझ परै ॥ १ ॥

जो जग जोगी सोइ रस भोगी भोगत भोज निज चित नाधरै ॥२॥

तिहुपुर भोग सङ्ग रहे नाहि डुबे कठवा के संग लोह जल में तरे ३॥

सुनेमण्डल सुने भोग सुने भोक्ता पट चित्र योधा युधि विचमेंमरे॥४॥

सियराम रूप जिन देखे सोई बुझे कर्त्ता विशुधानंद कछु नाकरै ५॥३५॥

मन चलने के साथ कोइ न तिरारे।

मातु पिता धन सुत वनिता तन नाहक नेह किये मैं मेरा रे ॥ १ ॥

तेरे देखत केते आए केते चालि गये तू कैसे आस बांधीमेराखेरारे॥२॥

जहातु कल्लोलकरे तहा जग नाना धरे झूठा स्वप्न सम नेहहेरारे॥३॥

हरि यश गान दान संतसंग तजु मानकालग्रासत्यागहोउरामचेरारे॥४॥

छारु काम आस फांस जीवन की थोड़ी आसहेरत विशुधानंद निज डेरारे ॥ ५ ॥ ३६ ॥

गाओ मन मेरे विजय राजा राम के।

अगुणअरूप जो सगुणसरूप भये रूपगुण तेजबलसीनिसुखधामके॥१॥

बाल विलास किये नर सुर भूप चीच देनेवाले अर्थ धर्म शांति मोक्ष काम के ॥ २ ॥

मुनि मख राखि सिय ब्याहि वन धाम किने भक्तन सनाथ करि नासे सुर वाम के ॥ ३ ॥

शरण सुग्रीव विभीषण कपि दल रावण को मारि आये राज पितु ग्राम के ॥ ४ ॥

ताप रहित प्रजा राज प्रतिपाल कीन्हा चाहत विशुधानन्द ताको हिय नाम के ॥ ५ ॥ ३७ ॥

खेमटा

अब छाड़ जग आसा मन राम रटना ।

जामे प्रगट जामे बैठा जग देखे करिके विचार पुनि तामे सटना ॥ १

तेरे रहत जग सुख दुःख भासत जैसे स्वपन निज शिर कटना ॥२॥

जामे सुख नेह करि तामे दुःख फासों परे होआ उदास ताते झट पटना ॥ ३ ।

ना कछु हुआ नहो है नहि होना तेरे कल्पलखचि सब घटना ॥ ४ ॥

प्यारे परदेसी साधु सङ्ग मे विवेक कर चाह से विशुधानन्द नित हटना ॥ ५ ॥ ३८ ॥

लखाये चाहे गुरु जी अलख वाले धाम ।

यह संसार असार सार विनु नाहक नेह करी जाय तेरे यमपुर नर राड सहत दुसहलट करना विवेक हट तज हिय काम ॥ १ ॥

कर सत संग सदा साधन युत नर तन सुलभ नाहि नोहि जगरेतज जगखदपदहारि यदा लट पट विमल विराग अट तजुजग दाम ॥ २ ॥

सतचित आनंद रुप अनूरतम विभु व्यापक एक नाहि दुतियारे निज सेकल संघट रवि जल तट दुयत चेतन नट सुत तिय हो वाम ॥३॥

ना तोहि जन्म मरण सुख दुःख तन तीन ओ भासत स्वप्न समारे यह सब समघट सुबनिज चित्र पटभासतसरूप घटजानु निज नाम ॥४॥

माधो जो जग भ्रम कैसे के जावे ।
जब लगि कृपा करहु नहि जन पर तब लगि त्रिपति सन्तावे ॥ १ ॥
स्वप्ने सोंह, शत्रु सुत वनिता सुख दुःख तेहिते सो पावे ।
यद्यपि असत्य काल तेहि भासत तदपि ना बोध हिय आवे ॥ २ ॥
रूप रहित नभ रक्त पीतयुत देखत प्रगट सोहावे ।
निज भ्रम रजत सीपमह जानत तेहित आप उठिधावे ॥ ३ ॥
जिमि रज्जुमह सरप भयानक रविकर सरि मृगभावे ।
श्वेत स्फटिक रक्तपुष्प तहमणि सब लाल बतावे ॥ ४ ॥
यह सोपाधि भ्रम वेद कहत हरि मूढ़ तहा लपटावे ।
तेहि भ्रम नाश विशुधानंद हित दिन प्रति तव यशगावे ॥५॥४३॥

केशव कारज कैसे के सरो ।
काया कपट कूड़ कर कारक करम करन को धरो ॥ १ ॥
कारन करन करावन कर्त्ता कहत कतेव हरी ।
क्रिया कर्म कनक कुंडल महद्वसन तंतु पुतरी । २ ॥
द्रष्टा दृश्य दरसन त्रिपुटिकर स्वपन प्रत्यक्ष धरो ।
तदपि एक बिनु तहा न दूसर त्रिविधि सो भर्म करो ॥ ३ ॥
जो अध्यस्त आहि मे भासत सो तेहि रूपहरी ।
अस सिधान्त वेद मुनि भाषत तबहु ना समुझ परो ॥ ४ ॥
आश्चर्य विषय आपु चेतन जग नाम सो पृथक धरो ।
तेहि भ्रम विकल विशुधानंद निज कृपा करन उधरो ॥ ५ ॥ ४४ ॥

रघुवर जन भव थाह किमि पावे ।
तव पदपोत विमुख केवट जन पार कहहु किमि जावे ॥१॥
शक्ति अनन्त अचिन्त्य ब्रह्म कह अलख सो वेद लखावे ।
चिद प्रति बिम्ब सो नटद्वय मायन जगजिव ईश कहावे । २ ॥
तम सुषुप्ति रज स्वपन सत्वगुण जागृत भेद देखावे ।
यह विवेक प्रति बिम्ब होत नहि बिहु निज करता जनावे ॥ ३ ॥
कामिशुभ कर्म विमल मन चंचल दोष सो भक्ति नशावे ।
श्रवन मनन निदि ध्यासन गुरु संग नुच चिर विरही सनावे ॥४॥

सत रण महा मोह रावण हति विजै विवेक घर आवे।
निज सुख राज विशुधानंद सुर मंगल हरिहि सुनावे ॥ ५ ॥ ४५ ॥

बुन मन मेरे विजय रघुवर के।
जेहि संकल्प प्रलय पालन जग रहत चराचर जो उर पुर घर के ॥१॥
बाल विनोद भूप घर मुनिकाज करि सीता को व्याहले तो सर हरके ॥ २ ॥
तजिपुर वनवास सुरकाज को विराध वधि त्रिसिरा घ... बालि मारि साथ लाये वनचर के ॥ ३ ॥
कपिदल संग सेतु बांधि लंक में जो इक दिन्हा विभिषण अ... शरण राखि रण रावण हन खरके ॥ ४ ॥
पितुपुर आये राज बैठि सुख पाल प्रजा चाहत विशुधानंद सन... सुख राम नरके ॥ ५ ॥ ४६ ॥

हरितू जनि विसर विसरै सब काम।
तोही विसरै निजरूप विसरगये दृढ गेह नेह फसे धसा चितचाम ॥१॥
जातो चरण में मेरा कांच बीच ससालोक लाज मान हित चाहिमनदाम
जैसा स्वपन नस जागृत भासत जन्म मरण दुख दंड यम धाम ॥३
वेद पुरान मत ब्रह्म सुन त्यागत रहत विषय सुख में आठोजाम ॥४
आरत धौरपुकारतविशुधानन्द मूलकोनिर्मूलहितजाचेहियराम ५४

रघुवर तू कैसे भावो मेरे मन में।
तव स्वरूप अज्ञान भूल सोई नाम अंध चिद धन में ॥ १ ॥
भय सुख समझ सोकनक कामिनि काम सन्तावत तन में।
तेहि सुख हेतु सोनट इव नाचत बसत दिवस निशि धन में ॥ २ ॥
काम क्रोध मदलोभ महि वस मगन हास रस जन में।
भोगत भोग आस नहीं पूर्जे काल उठावत छन में ॥ ३ ॥
करत कुकर्म कहत शुभ मारग आदा विषय श्रवण में।
ताते जनम मरण दुःख पुनि पुनि सहत दुसह सर कन में ॥ ४ ॥
अस उपाय कोउ वेगि करहु हरि जन मन तव चरनन में।
विषयस सो विशुधानन्द जस गावत वास मगन में ॥ ५ ॥ ४८ ॥

गजल।

सियावर ने अपने हाथों से अजब एक खेल बनाया है।
जिस की अजसनकादि शिव आगम निगम कहते लजाया है॥१॥
भू वारी पवन वन्ही प्रथम डुग्गी बजाया है।
मये अभ्र जिसके मेलो से जगत कारज बसाया है॥२॥
भूमी संकल्प मुछेल का चमक जन्तु उपाया है।
वह खाकर अन्न पुरुष नारी मजा उल्फत उठाया है॥३॥
पेदर तुखमें शिकम मादर के अलख रचना रचाया है।
निकल तन द्वार नव मन संग अनेक लीला देखाया है॥४॥
स्वपन जाग्रत सुषुप्ति में जो छप कर भोग भोगाया है।
लड़कपन ज्वानि बुड्ढे से तमाशा झूठ जनाया है॥५॥
जो है नादान कमबख्ती से तमासे लव लगाया है।
एक हम दीगरे नास्ती रसिक औरत भुलाया है॥६॥
किया सैतानी दुनिया में जुलुम कर धन कमाया है।
पकड़ कर दूत खोदाई का दोजक में ले सताया है॥७॥
जो हैं स्याने जगत मीतर सो नट में नेह लगाया है।
समझ कर मर्म नटुवे का खुशी से दिन गंवाया है॥८॥
तजा है आस दुःख सुखका सो नट तन में समाया है।
देखा है ख्याल चश्मों से दीगर से कह सुनाया है॥९॥
बना इस तौरका दुनिया जो लड़की को भुलाया है।
हटाने को विशुधानन्द सुयश रघुनाथ गाया है॥१०॥४९॥

लगामन रामभक्तों से जो हरदम साथ रहता है।
वचन मन कार से दासो रहगा प्यार करता है॥१॥
जो अवगुन लाग करसन मुख जबी जाये तो सहता है।
जरा रिख्याल ना करके गले सों गल मिलाता है॥२॥
जेते दुसमन उठे सिरपर सबोंको नाश करता है।
मनों से तन मिलाकर नित भजन सुखको देखाता है॥३॥

जय जन पटसर भोजन त्रिपित नित शाकरस कार्ह चाहे जियमे ॥३॥
जब मन त्रिपित मधुर सुरसरि जलपावै कहि राघ कमनियमे ॥४॥
हास विलास रास रस मधुरिच चाहत विशुधानंद पियमे ॥५॥६०॥

चैत।

हरि जीके संपधामे मनवा अव लाग होराम ॥ १॥
जय हरिसंग तय मनमोहना से जग सत भ्रमभागे होराम ॥ २ ॥
सत चेतन सुख सय जग भासे निजरस अनुरागे होराम ॥ ३ ॥
जय मन मगन सहज सुख भीतर काल कृतभय भागेहोराम ॥ ४ ॥
तेहि सुख हेतु विशुधानंद हरियश से नित जागे होराम ॥५॥६१॥

चैत।

शोभत ललि अति पटपा सर्यु के तटपा।
नील संघन पलप फल सुन्दर पहुत पवन झटपटपा ॥ १ ॥
मगन ध्यान रस मुनि जह सोभित त्यागि देहे सप खटपटपा ॥२॥
सियाराम लक्षमन शिवगणपति गुरुसंग हनियत मे सुभटपा॥३॥
आए कुसुमाकर कुसमित मधमद जल सुघरहि हाटपटपा ॥ ४ ॥
भनि आनन्द विशुधानन्द स्तिरहेराम यमलटपटपा ।५।६२॥

चाचरी छन्द।

सत संग करतरपाद मगन बनाभाइ सुभवनरम्।
कदहान करेगान हरियम ध्यानकर सीतापरम् ॥ १॥
जो एक भज भवपथ पूरण ब्यापिजग पुन परपरं।
तेहि बोधोहत नित कहत श्रुति नाहि परम्पद मन अंतरम् ॥२॥
जो हिमत माया कुल कुसुमते नाहि मन घन अरवरम्।
ते सबक बरम कहहु भासत मोह तेते सुख परम ॥ ३ ॥
तेहि मोहमायक कहति श्रुति मननेन साधु मवनरम्।
प्रभु होत बन्धु होवेस रघुपर भजन जेहि भज नरवरम् ॥ ४ ॥

जेहि जानि निजप्रतिपाल करता त्यागि हरिवपु सुन्दरम्।
सोइ होत कारण नरक के तोहि जनम मरण भयंकरम् ॥ ५ ॥
करुसफल मानुपजन्म तै नरतज्ञु दुरासा दुखकरम्।
नहि जगत तेरा नातु जगका स्वपन सम सब संगकरम् ॥ ६ ॥
तोहि बोध हित हरिदेहधरि धर करतलो लामनहरम्।
सो सन्त विचरत संग के नित कहत जाते भयतरम् ॥ ७ ॥
पुनि सास्त्र वेद पुकार कहता जगत नहि एक हरिवरम्।
तुं मोहवस सुनता नहि फिरता अकुड जिमि श्वासरम् ॥ ८ ॥
एक राम भीतर रामबाहर राम जग होइ भास्वरम्।
सो समझ हित सतसंग धारया दुतिय साधन नहि तरम् ॥ ९ ॥
सोइ चहैं विशुद्धानन्द नित सतसंग राम सुधाकरम्।
तजुमोह ममता देह गेह के भजु सदा सीतावरम् ॥ १० ॥

खेमटा।

सतसंग में सातु जगाय दीता॥ टेक ॥
मोहनिसो बहु युग सुतायोता रामकहि गुरुने उठायलीना ॥ १ ॥
जन्म मरण सुख दुख जग नाना मोहमुलयुत सबहि रमयीता ॥ २ ॥
हरियस कथन श्रवन चिन्तनरस सन्त पियाकै अमर कीता ॥ ३ ॥
गुन अवगुन जड़ चेतन रचाजग ताको विभाग से देखापदीना ॥ ४ ॥
मुक्ति के साधन देखा विशुद्धानन्द साधुनकेसंग रामरसपीना ॥ ५ ॥

कवित्त।

सोभामान पंडित विशुद्धानन्द परमहंस हंसको प्रकास सारे देसने में गायहै ॥
जहा जहा जाए तहा आयनउघारकरै भक्त भक्त जन सारे सीस को नवाए है ॥
मखमल टोप सिर रुमनीचमाल जाके रेसम के धोताधार चन्द्र छवि छाए है ॥
ताको यानी सुनि जग मोहे बलिराम कहै भारत के मरहद्द मे मन्दाम्ल सुमाए है ॥ १ ॥

जेहि जानि निजप्रतिपाल करता त्यागि हरिवपु सुन्दरम्।
सोइ होत कारणं नरक के तोहि जनम मरण भयंकरम् ॥ ५ ॥
करुसफल मानुषजन्म ते नरतजु दुरासा दुखकरम्।
नहि जगत तेरा नातु जगका स्वपन सम सब संगकरम् ॥ ६ ॥
तोहि बोध हित हरिदेहधरि धर करतली लामनहरम्।
सो सन्त विचरत संग के नित कहत जाते भवतरम् ॥ ७ ॥
पुनि सास्त्र वेद पुकार कहता जगत नहि एक हरिवरम्।
तुं मोहवस सुनता नहि फिरता अकुड जिमि श्वासरम् ॥ ८ ॥
एक राम भीतर रामबाहर राम जग होइ भास्वरम्।
सो समझ हित सतसंग थापा दुतिय साधन नहि तरम् ॥ ९ ॥
सोइ चहै विशुद्धानन्द नित सतसंग राम सुधाकरम्।
तजुमोह ममता देह गेह के भजु सदा सीताधरम् ॥ १० ॥

खेमटा।

सतसंग में सानु जगाय दीता ॥ टेक ॥
मोहनिसां बहु युग सुलायीता रामकहि गुरुने उठागलीता ॥ १ ॥
जन्म मरण सुख दुख जग नाता मोहमुलयुत सबहि रसयीता ॥२॥
हरियस कथन श्रवन चिन्तनरस सन्त पियाके अमर कीता ॥३॥
गुन अवगुन जड़ चेतन रलाजग ताको विभाग से देखापनीता ॥४॥
मुक्ति के साधन देखा विशुद्धानन्द साधुनकेसंग रामरसपीता ॥५॥

कवित्त।

सोभामान पंडित विशुद्धानन्द परमहंस हंसकी प्रकास सारे देसने में गाये है ॥
जहा जहा जाए तहा जीवनउधारकरै भक्त भक्त जन आए सीस को नवाए है ॥
मखमल टोप सिर रेसमीदुसाल जाके रेसम के चोलाधार चन्द्र छवि छाए है ॥
ताको यानी मुनि जग मोहे सतिराम कहे भारत के मण्डल मे मण्डाल घुमाए है ॥ १ ॥

सुजन समाज श्रीमान सर्वलायक सो नायक भो विद्याधिच
जग यश गाय है।
गावे हैं गुणानुवाद आपके अनन्त सन्त बड़े बड़े भूपतावैरागी
को भजाए हैं॥
सुध है आनन्दचित पंडित विष्णुधानन्द भारी भारी सभा विच
भारी मान पाए है।
कहे कविराम सदासुखतो प्रसन्न दिखे भारत के मण्डल पै
मण्डलि घुमाए है॥ २॥
विद्या में प्रवीन सारे देस देस घूम देखे पंडित अधिन जो प्रेयाव
को बढ़ाये है।
सभा तो अनेक किए धन्य धन्य भेष साद पड़े भाय कोइ तहि
प्रेम सो पढ़ाये है॥
साधु बधु संग रहे विद्यारति रंग गहे सुनिके पुराण बेद जन
सुख पाये है।
कहे कविराम साधु येलाओं मैं देखनाको भारत के मण्डल पै
मण्डलि घुमाये है॥ ३॥

इतिशम्।

॥ श्रीः ॥

रोजगार।

बाबू दामोदरदास खत्री लिखित।

अमृतलाल चक्रवर्ती द्वारा भारतमित्र प्रेसमें
मुद्रित और प्रकाशित।

नं० ९८, मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट,

कलकत्ता।

संवत् १९६२।

॥ श्रीः ॥

रोजगार ।

बाबू दामोदरदास खत्री लिखित ।

अमृतलाल चक्रवर्ती द्वारा भारतमित्र प्रेसमें

मुद्रित और प्रकाशित ।

नं० ९७, मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट,

कलकत्ता ।

संवत् १९६६ ।

भूमिका।

हमारे देशमें स्वदेशी आन्दोलनकी धूम मची है, देशवासी स्वदेशी वस्तुओंपर अनुराग दिखाने लगे हैं, यह देशोन्नतिका शुभ लक्षण है। किन्तु हमारे देशमें व्यवहारकी वस्तुएं बनती ही कितनी हैं? स्वदेशी वस्तु बर्तनेकी पूरी चाह रखनेवालोंको भी उपयोगी वस्तुओंके अभावसे विदेशी वस्तु व्यवहार करनेके लिये लाचार होना पड़ता है। और आन्दोलनके बादसे जो दो चार चीजें देशमें बनने भी लगी हैं उनको क्या असली स्वदेशी कह सकते हैं? कपड़ा बनानेके लिये सूत, साबुन बनानेके लिये मसाला, तेल बनानेके लिये खुशबू, बिदेशी लेनी पड़ती है। देशका धन विदेश जानेसे बचानेके लिये स्वदेशी आन्दोलन उठाया गया है, मगर तय्यार मालमें नहीं तो उपादानोंमें ही इतना धन बिदेशियोंके हवाले करना पड़ता है कि रुकावटकी कुछ विशेष आशा नहीं होती। इसका कारण यही है कि विदेश वाले विज्ञानमें व्युत्पन्न हो अपने देशकी कच्ची चीजोंको उपयोगी बनाकर धनोपार्जन करते हैं और हम उससे कोरे रहकर मलाई इनको देते हुए खाड़ पर ही सन्तुष्ट हो जाते हैं। हमारे देशमें चीजोंकी कमी नहीं है, परन्तु हम उस ओर ध्यान नहीं देते; इससे वे निकम्मी बनी हुई हैं। जब तक हमारे देशमें विज्ञानका प्रचार नहीं होगा, विद्यार्थी विज्ञान सीखकर देशवासियोंके लिये उससे काम लेनेका स्वच्छ मार्ग नहीं निकालेंगे और धनवान लोग उस काममें धन नहीं लगायेंगे, तब तक हमारे देशकी सच्ची उन्नति नहीं होगी।

हमने इस छोटी सी पुस्तकमें ऐसी दो तीन चीजें बनानेकी रीति लिखी है जिनकी बाजारमें अच्छी खपत है। सिर्फ स्वदेशी वस्तुओंसे उनमें जो हमारे देशमें निकम्मी समझी जाती, हैं—ऐसी

वस्तुएं बनायी जा सकती हैं। यदि लोग इसके अनुसार काम करें तो उनका अच्छा रोजगार चल सकता है। पुस्तकमें पारिभाषिक शब्द अपने ढङ्गपर बनाये गये हैं। परन्तु उनके अङ्गरेजी नाम भी दे दिये गये हैं। ये शब्द कैसी रीति पर किस सुगमताके लिये गढ़े गये हैं यह बताना इस छोटी सी पुस्तकमें असम्भव है। हम इस विषयका एक बड़ा ग्रन्थ लिख रहे हैं; इस ४६ वर्षकी अवस्था तक हमने विज्ञानके सम्बन्धमें जो कुछ पढ़ा है, देखा है, सीखा है, सोचा है और तजरबा किया है यह सब उस पुस्तकमें खिच देकर लिख रहे हैं; अबतक उसके प्रायः हजार पृष्ठ लिख चुके हैं। अगर यह ग्रन्थ पूरा हो जायगा और भगवान उसके प्रकाशित होनेका दिन दिखावेंगे तो पाठक उसमें गुलाधा वर्णन पढ़ेंगे और सैकड़ों तरहकी चीजें बनानेकी तरकीबें पावेंगे।

२८ मुक्ताराम बाबू स्ट्रीट,
कलकत्ता, चैत्र सु०३, १९६३। } दामोदर दास खत्री।

निद्राने तो इस भारतवर्षको नन्दन काननसे श्मशान बना दिया ! क्या भाग्यकी पिलायी शराबका नशा तुम्हारे दिमागमें इतना चकूर कर गया है कि अभीतक खुमारी नहीं मिटती? बस बहुत सोये और अपनेको बहुत बर्बाद किया। अब अंगड़ाइयां लो और आंखें मलकर देखो, तुम क्या थे और क्या हो गये। पहाड़से उतरे हुए पथिकको घूमकर पहाड़की तरफ देखते जैसा बुरा मालूम देता है क्या तुम्हें भी वैसे ही इस नशेके चक्करमें अपनी बढ़ी हुई हालतोंकी बीती बातों पर नजर दौड़ाते डर लगता है;? बस समझा गया, कोरी उन्नति उन्नति कहकर चिल्लाते हो। अगर चैतन्ययुक्त जीवोंके सदृश तुम लोगोंके दिमागमें कुछ भी ताकत होती तो आज दिन केवल तुम लोग बहकते नहीं, कमर कसकर सिर पर आयी हुई आफतोंका जरूर सामना करते। तुम चिल्लाते हो कि हमारा रोजगार छिना जाता है और हम गरीब हुए जाते हैं मगर अब भी तुम्हारी इस वसुन्धरा भारत भूमिमें हजारों काम ऐसे हैं कि तुम आंखें खोल कर देखो और उन कामोंको अपने उपयोगी कर लो तो कुछ ही दिनोंमें मालामाल हो जा सकते हो। मगर तुम्हें होश क्योंकर हो, तुम्हें तो नौकरी या दलाली, बजाजी आदि पराधीन रोजगार ही अच्छे लगते हैं। स्वाधीन रोजगारसे तो तुम ऐसे भागते हो जैसे लड़ाईके मैदानसे मौका पाकर कायर भागता है। अगर ऐसा न होता तो आज हिन्दुस्थानमें जो लाखों बीघे ऊसर जमीन पड़ी है क्या वह योंही रहती और उसको किसान

पहुंचाती है) द्वारा ऊपरको खिंच आता है। उस जलमें जो क्षार (alkali) या नमक (Salt) मिला रहता है वह भी उसके साथ ही ऊपर आ जाता है। वह उद्भिरभिन्न जातिका होनेसे सब जल हवाको देकर आप कलम रूपमें जमीनकी तह पर जम जाता है। उसे ही चलती बोलीमें रेह कहते हैं।

अब हम यह लिखेंगे कि इस रेहसे सज्जी कैसे बनायी जाती है और उसे भूनकर या कलम जमाकर कैसे साफ और शुद्ध अंगारिक वस्तुक (Carbonate of Soda) बनाया जा सकता है। इसके पहले यह बता देते हैं कि क्षारका कारखाना खोलनेके लिये कैसी जगह और क्या क्या उपकरण चाहिये।

इसका कारखाना बनानेके लिये ऐसी जगह चुननी चाहिये जहां रेह थोड़े खर्चमें इकट्ठी की जा सके और वह रेल या नदीके पास हो जिससे कारखानेकी बनी चीजें सुबीतेके साथ बाजारमें भेजी जा सकें। इसके सिवा उस स्थानके पास जलका अच्छा सुबीता हो। कारखाना अपनी हैसियतके मुताबिक कच्चा या पक्का बना सकते हैं, परन्तु हर कामके कमरे अलग अलग और कुशादा हों; कारखानेके हर हिस्सेकी जमीन पक्की हो जिससे धूल मट्टी न जमा हो सके। एक कमरा दूसरेसे ऐसा मिला हो कि एककी चीज दूसरेमें ले जानेमें बहुत दिक्कत न पड़े। कारखानेके अलावा एक दमकल, ८ बड़े बड़े होज और ३ बड़ी बड़ी कड़ाइयां चाहियें।

होज—होजकी बनावट दो प्रकारसे की जाती है; एक तो होज पास पास चौरस जमीन पर बनाये जाते हैं और दूसरे होज एक दूसरेके नीचे होते हैं। हम यहां पहले तरहके होजोंका ही जिक्र करते हैं। होज जमीनको तहमें खोदकर बनाओ, चाहे जमीनके ऊपर ईंटोंकी दीवार खड़ी करके बनाओ, यह कारखाने वालोंकी इच्छा पर है; परन्तु होजोंकी ऊंचाई बराबर हो; उनका तला पक्का हो और उनके चारों तरफ किना-

दूने या चौगुने बड़े हों। उन दोनोंमें रस [क्षार मिला जल] एक साथ ही नहीं भरना चाहिये। जब एक हौज रसये भर जावे तब उसे निथरनेके लिये योंही छोड़ दे और पासवाले दूसरे हौजको भरे। इनके सिवा जो बाकी ६ हौज हों उनमें दो दो तले हों; नीचे गचके और ऊपर लोहेकी मोटी चादरके। चादरमें चलनीकी तरह एक इंच की मोटे छेद हों। दोनों तलोंके बीचमें एक या डेढ़ फुट खाली जगह रखनी चाहिये। उसीमें रेहका रस टपक कर जमा होगा। उस जगहमें तीन तीन इंच मोटे दो नल लगे हों। पहला नल सीधा और खुला हो,—डट्टा वट्टा कुछ न लगा हो और हौजसे ८ इञ्च ऊपर निकला हो। दूसरा नल डट्टेदार और ऐसा तिरछा हो कि उसका सिरा पासके दूसरे हौजकी वैसी ही खाली जगह तक पहुंचकर दोनोंको एक करता हो और उसका डट्टा खोलते ही सब रस एकसे दूसरे हौजमें चला जावे। इसी प्रकार सब हौज नलोंके द्वारा एक दूसरेसे मिले हों। इन ६ हौजोंमेंसे अन्तके दो हौजोंमें दोहरे डट्टेदार नल इस अन्दाजसे लगे हों कि बड़े दो हौजोंमेंसे रस निकाल कर निथरनेके लिये उनमें डाला जा सके। पहले ६ हौजोंमेंसे हरेक ९ फुट लम्बा ४ फुट चौड़ा और ३—४ फुट ऊंचा हो। उन हौजोंमें दर्जे बदर्जे ऐसी रेह डाली जाय जो एक दूसरसे तेज हो अर्थात् पहले हौजकी रेह जिसमें साफ पानी डाला जायेगा, ६ बारकी धुली हो या उसमें घुली हुई चीजोंका हिस्सा बहुत कम हो और दूसरेमें उससे भी तेज हो। इस प्रकार छठे हौजमें ताज़ा रेह डाली जावे जो एक बारकी भी धुली न हो। हौजोंमें रेह यों ही नहीं भर दी जाती; तारके महीन जालीदार बकसोंमें भर कर डुबा दी जाती है। उनको डुबानेके पहले झंझरीदार तलोंपर टाट या कोई मोटा कपड़ा बिछा देना चाहिये। उन बकसों पर मोटे मोटे लोहेके कड़े लगे होते हैं जिनमें रस्सी बांधकर चरखियोंके सहारे एक हौजका बकस उठाकर दूसरेमें डाल दिया जाता है।

जर्मनीकी रीति कुछ और तरहकी है। वहां वाले हौजोंकी

जाती है। इसके लिये सात कड़ाइयां सीढ़ीनुमा इस प्रकार जड़े बिठानी चाहियें कि नीचेकी कड़ाईका सिरा जितना ऊंचा हो उससे ६ इंच नीची जगहमें एक चबूतरे पर ऊपरकी कड़ाईका तल बैठे। इसी प्रकार कड़ाइयां एक दूसरेसे दरजे बदरजे ऊंची हों। सबसे नीचेकी कड़ाई तईनुमा हो अर्थात् जलेबी बनानेकी तईकी तरह जैसी थोड़ी बारवाली और खूब चौड़ी होती है वैसी ही हो। उसीके नीचे ऐसा चूल्हा हो जिसकी आंच पहली यानी तईको गर्म करके बाकी ६ कड़ाइयोंको भी गर्म करती हुई चिमनीसे निकल जाय; अर्थात एक ही चूल्हेसे सातो कड़ाइयां गर्म हों। उस गचके चबूतरेमें चूल्हेके सिर पर जहां तई है, आंच जानेके लिये १ फुटका ऐसा गचदार गोल छेद हो कि वह ऊपरकी बाकी छहो कड़ाइयोंके नीचेसे होकर चिमनीसे जा मिला हो। चूल्हेकी उंचाई जितनी हो उससे ६ इञ्च नीचेसे चिमनीका छेद शुरू हो। चिमनी २०से २५ फुट ऊंची हो जिससे चूल्हेकी आंच तेजीके साथ सब कड़ाइयोंको गर्म कर सके।

पहली यानी तई कड़ाई चूल्हेसे यों मिला कर गाड़ देनी चाहिये कि उसके किसी तरफ जरा भी सूराख न हो, नहीं तो आंच ठीक सिर पर नहीं जायगी। इसी तौर पर सब कड़ाइयोंको गाड़ कर बिठाना चाहिये। हर कड़ाईके तलेसे तीन इंच ऊंचा छेद हो और उससे डट्टेदार नल पेचोंसे कसा हो ताकि ऊपरकी कड़ाईके नलका डट्टा खोलनेसे रस उसके नीचेकी कड़ाईमें चला जावे। इसी तरह तईके सिवा और सब कड़ाइयोंमें नल लगे हों। तईमें नलकी जरूरत नहीं है। इसका रस करछी वगैरहसे निकालना ही अच्छा है। कोई कोई कारखानेवाले इसमें भी नल लगाते हैं। तई यानी पहली कड़ाईकी गोल बार ६-७ इंच ऊंची हो और वह कड़ाई इतनी बड़ी हो कि उसमें २॥—३ मन रस अंट सके। उसके ऊपरकी कड़ाई इतनी गहरी हो कि उसमें ६-७ मन रस अंटे। पर उसकी दीवार फैली हुई हो। उसके ऊपरकी कड़ाई ८-१० मन जल रखने लायक हो और उसकी दीवार दूसरीसे कम फैली हो। इस तौर पर कड़ाइयां क्रमसे गहरी हों और अन्तिम कड़ाई ५-६ फुट गहरी तथा ८-६

ऊंची हो जिसमें १० से ४० मन तक पानी रस अंट सके। उसके
न कट्टेदार नल १ इंच पर लगा हो।

अब कड़ाइयोंमें काम लेनेकी रीति सुनिये। भात या भठा
के बड़े हौजका रस दमकलके जरिये सबसे बड़ी और ऊपर
के कड़ाईमें भरता जाय और सिलसिलेवार सब कड़ाइयोंके
के कट्टे खोल दे जिससे रस घूमता हुआ नीचेवाली तई
ई तक पहुंच जाय। चूल्हेमें पहले होसे आग सुलगा रख
कड़ाइयोंके भर जाने पर उसे तेज कर दे जिससे सब कड़ाइ-
का रस गर्म हो और जल उड़े।

पहले आंच ठीक सिर पर नहीं लगेगी; परन्तु घण्टे भरके
जब चूल्हेका चबूतरा रस तथा कड़ाई गर्म हो जायगी तब वह
सिर पर लगेगी। अब एक कारीगरको देखते रहना चाहिये
किस किस कड़ाईका जल घट गया है। जिसका जितना जल
(जल घटनेसे दीवार पर घेरा बांधकर एक लकीर सी पड़
गी) उतना रस उसके ऊपरकी कड़ाईसे कट्टा खोलकर
में ले ले और उस ऊपरकी कड़ाईमें उसके ऊपरकी कड़ा-
का रस ले। इस प्रकार सब कड़ाइयोंको भरता जावे; सबसे
ऊपरवाली बड़ी कड़ाईमें दमकलसे ७ या ८ नम्बर हौजका रस ले।
तेज आंच होनेसे तईका रस खूब खौलेगा उसके फैली हुई होनेसे सब-
से उसका जल भी जल्दी उड़ेगा। जितना जल उड़ता जाय
उतना ही और रस मिलता जावे। कुछ कुछ तो उसके रसका जल
उड़ता जायगा और कुछ ऊपरकी कड़ाईका गाढ़ा रस आकर तईके
रसको गाढ़ा करेगा। इस प्रकार गाढ़ा होते होते तईका रस
रसका अधिक भाग उड़ जानेसे चीनीकी कड़ी चाशनीका सा
मालूम देगा। अब उसे और गाढ़ा न करके अलग पात्रमें (यह
न ३ इंच गहरा ४ फुट चौड़ा और ४ फुट लम्बा हो) डाल दे।

दूसरी रीति यह है कि जब तई कड़ाईमें रसकी पपड़ी जमने
गे तब उसे झरनेसे उठा-उठाकर जालीदार चौखटे पर रखता
य ताकि उसका सब रस चूकर नीचे रखे हुए और एक पात्रमें
ता रहे। जब वह भर जाय तो उसको चीज उठाकर फिर उसी

दूसरा नमक मिला होता है। जो मतिरस चैायच्चेसे निकलेगा उसमें नमक और थोड़ासा सज्जुका ऑगारित (sodium corbonate) मिला होगा। चाहे जैसे कलम जमायी जाय थोड़ा रस और उद्भिज पदार्थ मिला ही होता है जिसे दूर करनेके लिये क्षारको भून देना चाहिये।

उस क्षारको एकदम सूखा और सफेद करनेके लिये भूनना चाहिये। भूननेके लिये एक ऐसी भट्टी हो;—३ फुट ऊंचा और भीतरसे ९ फुट चौड़ा तथा १२ फुट लम्बा मट्टीके गारेसे बना गचका एक चौतरा हो। उसमें पांच पांच फुट लम्बे और चार चार फुट चौड़े दो चैातरे हों पहले चैातरेसे लगा हुआ ४ फुट लम्बा और दो फुट चौड़ा दोरना (दोतला) चूल्हा (जैसा कि लोहेके सिकर्षाका पत्थर कोयलेका चूल्हा होता है) हो। चूल्हेके पासवाले चैातरेको ८ इंच मोटी, ६ इंच ऊंची और चार फुट लम्बी दीवार उठाकर चूल्हेसे अलग कर देना चाहिये ताकि उस पर फैलाया हुआ मसाला चूल्हेमें न गिरने पावे। चैातरे और चूल्हेको घेर कर उनके बराबरकी मट्टीके गारे और ईंटकी चुनाई की हुई ११ फुटकी एक कोठरी हो और उसपर लोहेकी कड़ी रख पक्की छत बना दी जाय। उस छतसे चूल्हेकी दीवार आधी मेहराबसी होकर मिली हो ताकि चूल्हेकी आंच गोल मेहराबसे टकरा कर पहले चैातरे पर फैले फिर मसाले पर पड़े और फिर दूसरे चैातरेके मसाले पर टकराती हुई चिमनीसे निकल जावे। जहां मनी हो वहांसे दो फुटके फासलेसे कोठरीकी भीतरी जगह वदुम हो। बिलकुल सीधी न होकर उसकी दोनों तरफकी दीवामें तीन खम हों ताकि उसमी गावदुम जगह ढलवां हो जाय। हां पर गावदुमसे चिमनी मिले वहां कोठरी ४॥ फुट चौड़ी और सके बराबर ऊंची होकर सीधी गयी हो कि जिससे आंच बरना म करके चिमनीके रास्ते निकल जाय। कोठरीकी ऐसी बनावट लिये चूल्हेसे लेकर गावदुमके अन्त तकका कमरा भीतरसे घटलू हो जायगा। दोनो चौतरों पर मसाला फैलानेके लिये एक ट चौड़ा और डेढ़ फुट लम्बा लोहेका किवाड़ लगा हो जिसमें देखनेके लिये मूठ लगी हो। चूल्हेकी दीवार पर भी लोहेका

वैसा ही छोटा एक किवाड़ लगा हो जिससे चूल्हेमें कोयला या ल-
कड़ी डाल कर बन्द कर दिया जाय। इस किवाड़के नीचे खुला
दरवाजा हो उससे चूल्हेकी राख झाड़ना और कोठरीकी राख
निकालना होगा; उसमें किवाड़की जरूरत नहीं। कोठरीकी छत
मट्टी भर कर ६ इंच मोटी करे। चूल्हेके पास पहले चौतरेसे छत
२॥ फुट ऊंची हो। और जहां पर गावदुम ढलवां शुरू हुआ
हो वहां छतकी उंचाई सिर्फ तीन फुट रहे। चिमनीकी उंचाई
३०-३५ फुटसे कम न हो। उस उंचाईसे क्षार गल जायगा परन्तु स-
ज्जीमें धातुके रंगके बदले उद्भिज्जका रंग होता है। इसलिये २०-२२
हस्तकी चिमनी होनेसे ही काम चल जायगा।

अब दूसरे चौतरे पर सुखायी हुई सज्जीको चार इञ्च मोटी
फैला दे और चूल्हेमें आंच जरा तेज करे जिससे सज्जी अच्छी तरह
सूख जाय। जब वह सूख जाय तो लम्बे खुरचनेसे ठेल कर भीत-
रहीसे पहले चौतरे पर गिरा दे और दूसरे पर दूसरा घान फैला
दे। गिराये हुए घानको पहले चौतरे पर फैला दे और आंच
तेज कर दे ताकि उसकी लपट ऊपरकी मेहराबसे ठोकर खाकर
पहले चौतरे पर लौटे और दूसरे चौतरेके मसालेको भी सुखाती
हुई चिमनीसे निकल जाय। एक कारीगरको चाहिये कि १०-११ मि-
नट बाद पहले चौतरेका मसाला पलट दिया करे जिससे लपटका
असर सब जगह एक समान पड़ कर मसाला भुने। मसाला जब
सफेद हो जाय तब उसे लोहेके एक ऐसे पात्रमें निकाले जिसके
नीचे पहिये लगे हों और वह सहजमें ढुलका कर ठंडे होनेके वास्ते
पहुंचाया जा सके। अगर सज्जी ठीक भुनी गयी होगी तो वह ठंढी
होकर खूब सफेद बुकनी हो जायगी। चिमनी की लम्बाई २०-२२
फुट होगी तो सज्जीके पत्थर के ढले नहीं होंगे क्योंकि आंच उसको
जलाने लायक तेज नहीं होगी।

पहले चौतरेका घान निकल जाय तो फिर दूसरेका घान
पहले पर गिरा दे और वैसे ही फैला कर भुनावे। यों काम किये
जायें। इस भाड़में अन्दाज २॥ मन मसाला भुनाया जा सकता है।
यही शुद्ध सांसारिक सज्जी है जिससे हमारी सब चीजें हाथमें

सकते हैं। अगर उसे शुद्ध कलमी वस्तुक बनाना हो तो नीचे लिखी तरकीबसे काम ले ;—

कलमी वस्तुक (Crystal Soda) बनानेकी एक क्रियाका उल्लेख हम ऊपर भी कर आये हैं; यहां खुलासा तौर पर दूसरी क्रिया बताते हैं। स्नान किया हुआ २०से २५°B का रस लेकर जल जलाये। जब जल उड़कर रस २८से ३०°B तक गाढ़ा हो जाये तब लोहेके चौबच्चोंमें भरकर मोटे कपड़ेसे लपेट दे और ऊपरसे ढक दे जिससे धीरे धीरे ठण्डा हो। जब सब गाद बैठ जाय और रस साफ हो जाय, तब उसे दमकलके जरिये दूसरे चौबच्चेमें भर दे। उससे पहले देख ले कि रसकी गर्मी ७०° या ५८c (१५८० या १६७० F) तक घट आयी है कि नहीं। चौबच्चे ईंटोंके हों या लोहेके, पर इतने छोटे हों कि २७से ३६ सेर तक रस अंट सके।

कलमें, गर्मीमें जल्द नहीं जमतीं, पर जाड़ेमें कई रोजमें मिश्री-सी जम जाती हैं। अगर रसको २८ से ३०°B तक गाढ़ा करके कलम जमायी जाय तो कलमें परिमाणमें कम तो जमेंगी पर वे शुद्ध क्षारकी होंगी। अगर रस इतना गाढ़ा किया जाय कि उसकी गढ़ाई ३०°से ३१° B तक पहुंचे तो प्रायः सभी रस कलम होकर जम जायगा। पर माल उतना शुद्ध नहीं होगा। ऊपरवालेके अतिरसमें (कलम जमनेके बाद जो रस बच जाता है उसे अतिरस कहते हैं) जिसमें दूसरा नमक घुला रहता है, सिर्फ शुद्ध सज्जी जमती है और दूसरेमें नमक सहित जम जाती है। कलमी सज्जी या वस्तुकमें नमक सहित जम जाती है। कलमी सज्जी या वस्तुकमें सैकड़े पीछे ६२.८० भाग (१०० भरीमें ६२॥ भरी) जल मिला रहता है। इस परिमाणसे सौ भाग कलमी सज्जीमें केवल ३७.२० भाग शुद्ध आंगारित सज्जी या वस्तुक है। १०० भरीमें आंगारिक द्रावक (कोयलेका तेजाब Carbonic Acid) १५.४२ भरी, सज्जिका या (Soda सोडा) २१.७८ भरी और जल ६२.८० भरी है।

अब क्षारक सज्जिका या वस्तुक (Caustic Soda कास्टिक सोडा) बनानेकी दो तरकीबें लिखते हैं। साफ सज्जीमें सैकड़े

पीछे ३० अर्थात् १०० भरी सज्जीमें ३० भरी अच्छा चूना ऊपर लिखी रीतिसे ६ हौजोंमें स्थान करे। इन मसा- लानेकी दो रीतियां हैं ; एक यह कि चूनेको जल डालकर करे यानो खोई बना ले। जब जल पाकर चूनेकी खोई तब छः हो हौजोंमें पहले कपड़े पर चूनेकी दो अंगुल फैला दे ; फिर दो अंगुल सज्जीकी तह फैलावें। इ एक तह चूनेकी और एक तह सज्जीकी फैलाते हुए आधा हिस्सा भर दे। आगे सब डट्टे बन्दकर पहले हौज तब जल भर दे। दूसरे दिन उस जलको दूसरे हौजमें ला उसमें साफ जल भरे। इसी प्रकार यह रस घूमता हुआ ७- रके हौजोंमें जाकर जमा हो। दूसरी रीतिमें चूनेको साफ सज्जीमें खूब मिलानेके बाद हौजोंमें भरते हैं। तह बतह देनेकी जरूरत नहीं है। आगेकी क्रिया स ऊपर लिख आये हैं।

और एक क्रिया यह है कि एक बड़ा गोल और चौड़ा हू हौज हो उसमें कलसे चलनेवाली मथेनी लगी हो। उसका भी तल वैसा ही दोहरा हो, पर बीचकी जगह कुल ६ इंच हो। उसमें र निकालनेका वैसा ही डट्टेदार नल लगा हो जैसा और हौजों लिये बताया गया है। उस हौजमें मिश्रित चूना और सज्जी डा- कर इतना जल भरे कि मसालेके ऊपर ८।१० इंच जल हो जाय अब मथेनीसे तब तक मथे जब तक पूरा बदलाव न हो मे परीक्षाके लिये थोड़ा सा रस निकालकर और उसमें थोड़ा चूनेका निथरा और साफ पानी डाल कर देखे। अगर ऐसा गदला हो जाय कि मानो कोई सफेद चीज घुली हुई है तो समझना चा- हिये कि पाक पूरा होनेमें देर है और न हो तो समझे कि पाक पूरा हुआ। तब मथना बन्द करके रस निथरने दे। पीछे रस निकाल ले। इसी प्रकार साफ जल डाल डालकर तबतक रस निकाले जबतक उसमें क्षार हो। जब देखे कि त्रियूम बाईके घनोद्धक यंत्रकी 0°B कलातक जलकी गढ़ाई आ गयी तब छोड़ दे।

इस रसको तईमें जल्दीसे जलावे जिससे हवाका आंगारित द्रा-वक (Carbonic acid Gas) फिर खिंचकर सज्जी न हो जाय। जब तईमें यह नमक सूखकर कुछ तर हो जाय तब भूननेकी भट्ठीके दूसरे चौतरे पर चार इंच मोटा फैलादे और सूखनेके बाद उसे पहले चौतरे पर ले जाय। अब तेज आंच पर भुनकर यह लाल हो जाय तब समझना चाहिये कि उसका रंग उड़ गया। अपने कामके लिये अगर बनाना हो तो और आंच देनेकी जरूरत नहीं; नहीं तो जब यह मसाला गल जाय तो लोहेकी पतली चादरोंके बने ढोलोंमें ठीक वैसेही भरे जैसे गला लोहा भरा जाता है। फिर उसका मुंह बन्द करके बाजारमें रसजारक क्षार नामसे बेचे।

अब यह बताते हैं कि रेहसे आंगारित सज्जी या वस्तुक बनानेमें कितना खर्च पड़ता है और तय्यार माल बेचकर क्या लाभ हो सकता है। हमने दिल्ली और कानपुरकी रेह परीक्षा करके देखी थी। उसमें सैंकड़े पीछे ११ से २० भाग शुद्ध सज्जी रहती है। अगर रेह बटोरते समय ऊपरसे थोड़ाही बटोरा जाय तो माल और भी ज्यादा निकलेगा। साधारणतः रेह बटोरने वाले खालिस रेह न लाकर उसमें मट्टी भी मिला लाते हैं। खर्चका हिसाब देखिये।

१०० मन रेहका दाम और कारखाने तक लाने का खर्च	२०)
ईंधन का दाम और मजदूरी आंगारिक सज्जिका या वस्तुक बनानेकी	१०)
१२ काठके पीपे कीमत फी पीपा ।) के हिसाबसे	३)
जोड़	३३)

३३) में कमसे कम ११—१६ मन बाजारू सज्जिका (Common Carbonate of Soda) बनेगी। दाम ४) हंदरके हिसाबसे १२ हंदर यानी १२ पीपेका ४८) हुआ। (१ हंदर=११२ पौण्ड। और १ पौण्ड = ३१ छटाक) ४८) मेंसे ३३) घटानेसे १५) बचते हैं। ३३) पर १५) मुनाफा है तो १००) पर ४५) हुआ। सो इस रोजगारमें सैंकड़े ४५ मरा है। देशी वस्तु होनेसे दाम कम लगनेका सन्देह करके इन ४५)की जगह २५) हो रखें तौभी रुपयेमें चार आने लाभ कम नहीं है विशेष कर ऐसी चीजमें जिसके हजारों पीपे बिकते हैं।

ठेज आदिका खर्च सिर्फ एक बारका है यह पीछे नकेसे वसूल हो जायगा।

इस पदार्थको जितनाही साफ करेंगे उसका दाम उतनाही ब-ढ़ेगा। इसके लिये शुद्ध आंगारित सज्जिका या सज्जक (Pure carbonate of Soda प्योर कारबोनेट आफ सोडा) ।≠) पौंड बिकता है।

जैसे आंगारित वस्तुक या सज्जिका बनायी जाती है, वैसे ही यह भी बनाया जाता है।

हमारे देशमें लाखों बीघे जमीन पर जङ्गल खड़े हैं। बरसातमें उनके वृक्षोंके पत्ते जमीन पर गिर कर सड़ते हैं। उनके सड़नेसे जो विषाक्त हवा पैदा होती है उससे आस पासके गांवोंमें महामारी भयानक उपद्रव मचाती है। हमारे देशवासियोंको इसकी कुछ भी खबर नहीं है कि इस अपकारी वस्तुसे ऐसी चीज बनायी जा सकती है जो हमारी जीविकाका एक अवलम्बन हो सकती है; जो चीज समय समय पर हमारी जान पर आफत लाती है वही हमारी रोजीका एक सामान है। उसीसे क्यों, फसलोंसे अन्न निकालनेके बाद बची हुई जो डंठी या भूसके चारे और ईंधनमें खर्च होती है उससे तथा निकम्मे छिलकोंसे भी आंगारित वसुक (Carbonate of potash) बनाकर देशका एक अभाव दूर किया जा सकता है; रोजगारका एक नया रास्ता निकाल कर और उससे हजारों गरीबोंका प्रतिपालन करदेशके लाखों रुपये विदेश जानेसे बचाये जा सकते हैं।

जो जमीन नोनी है उस पर जमे पौधोंकी राखसे वसुकम निकलता है। उसमें वस्तुकका हिस्सा भी अधिक होता है; परन्तु जिस जमीनमें नमकका हिस्सा नहीं होता अर्थात् जो जमीन समुद्र या नमककी खानके पास नहीं है और जिसके पाससे मीठे जलकी नदी बहती है उस जमीन पर जमें पौधोंकी राखसे वसुकीय आंगारित (Potassic carbonate) अधिक निकलता है। यह बात भी है कि सब पौधोंकी राखमें वसुकका हिस्सा एक समान नहीं होता, किसीमें अधिक और किसीमें कम होता है; यहां तक कि एक ही पौधेके अलग अलग अंशसे अलग अलग परिमाणका क्षार निकलता है। बड़े वृक्षके धम्भेसे (पेड़ोंसे) जितना यह क्षार निकलता है उससे कहीं ज्यादा मोटी डालोंसे निकलता है। इसी प्रकार पतली डालसे और पत्ते तथा पौधोंकी छालोंसे सबसे ज्यादा निकलता है। मतलब यह कि जिन जिन स्थानों पर पौधोंकी जीवनीशक्तिका कार्य अधिक होता है और जो अंश परिपक्व नहीं होते उन्हीं हिस्सोंमें इस क्षारका अधिक भाग रहता है। भुट्टे, ज्वार, बाजरा आदि फसली पौधोंसे

केले ऊख व दि चरस पौधोंसे और टेंटी आदि कांटेदार तथा छोटे पौधोंकी राखसे यह क्षार बहुत निकलता है। गुल्म(झाड़) लता और सब तरहके फलोंकी राखसे, बांसकी राखसे और नारियल, सुपारी, खजूर, ताल इत्यादि पौधोंकी राखसे भी यह क्षार बहुत निकलता है। हम नीचे एक सूची देते हैं जिसे देख कर पाठक समझ सकेंगे कि एक ही वृक्षके अलग अलग अङ्गोंकी राखसे यह क्षार कितना निकलता है।

गाछोंकी मोटी लकड़ियोंसे	१	हिस्सा
जड़की छालसे	३	,,
डालोंकी छालसे	११	,,
मोटी गुद्दियोंकी छालसे	८	,,
जड़के रेशोंसे	११	,,
पत्तोंसे	२१	,,

इससे पाठक समझ गये होंगे कि वृक्षका जो अंश सपकपरा है और जहां जीवनी शक्तिका काम बहुत अधिक है वहीं इस क्षारका भाग ज्यादा होता है। इसीलिये बीज, पोकुमार और इस जातिके वनस्पति इत्यादिके पत्तोंसे यह क्षार बहुत निकलता है। हम आगे और सूची देकर बतावेंगे कि किस किस पौधेसे कितना क्षार निकलता है।

यह क्षार वृक्षके अङ्गोंमें, आंगारिक (Carbonate) अवस्थामें नहीं रहता; वृक्षके रसमें जो उद्भिज्जिक या जांगमिक द्रावक (Organic acid आरगेनिक एसिड) है उसीका नमक होकर वृक्षोंके अङ्गोंकी पुष्टि करता है। जब वे विशेष अङ्ग सुखाकर जलाये जाते हैं तब आङ्गिक नमकसे [Organic Salt आरगेनिक साल्ट] मिला हुआ आङ्गिक द्रावक हटकर आंगारिक द्रावक पैदा होता है। वही आंगारिक द्रावक (Carbonic acid) फिर इस क्षार पर प्रतिक्रिया करके आंगारिक नमक [Carbonic Salt कारबोनिक साल्ट] बना डालता है इसीसे अङ्गोंको जलाकर भस्म करनेका मतलब ही यह है कि वह क्षार बदलकर आंगारिक (Carbonate कारबोनेट) हो जाय। और जितने आङ्गिक द्रावक हैं वे बदलकर आंगारिक द्रावकमें बदल जायं।

, हम यहां तीन सूची देते हैं। पहली सूचीमें पौधोंके नाम और उनकी राखसे निकलनेवाले क्षारका परिमाण दिया है, दूसरीमें भस्म और क्षार दोनोंका परिमाण दिया है और तीसरीमें द्रावकोंके नाम लिखे हैं जिनका वर्णन आगे आवेगा।

सूची संख्या १

पौधोंके नाम		ऊपरके अङ्कमें क्षारका परिमाण
गेहूंकी डण्टीकी	राखसे	३.८८
[illegible]नकी लकड़ीकी	"	५.००
छोटे छोटे कोरदार पौधोंकी	"	५.००
[illegible]म यानी छत्तेवाले पौधोंकी	"	५.०८
[illegible]हूदके कोयलोंकी	"	५.५०
[illegible]कौकी डण्टीकी	"	५.८०
[illegible]कौकी भूसीकी	"	५.८५
जिनके पत्तोंके नीचे फल या कन्द हो		
उनकी (मूली आलू ओल इत्यादि) राखसे		६.२६
[illegible]ड़ी आदिके तूषोंकी राखसे		७.२२
अनाजके फूलोंकी राखसे		१७.५
[illegible]मकी लताकी	"	२०.०
सूर्यमुखीके पौधेकी	"	२०.०
साधारण कांटेदार वृक्षोंकी	"	२१.३
दूधदार पौधोंकी	"	२७.५
गेहूं समेत डण्टोंकी राखसे		४७.०
[illegible]ताल, खजूर नारियल		
आदिकी आदिके पौधोंकी राखसे		४७.५
केलेके थम्बसे		४८.०

सूची संख्या २

पौधोंके नाम	१०० भागमें भस्म	और क्षार
बबूल	१.६७२३	०.११६४३
खजूर	८.८६००	०.५५०००
जौके पौधे (पेड़ोंसे)	८.६४४०	१.६५०००

पौधोंके नाम	१०० भागमें भस्म	और क्षार
भुट्टा, ज्वार, बाजरा	७.६६००	४.३११२१०
जङ्गली रेंड़ी	९.४०००	४.२४००१
रेंड़ी या अरण्डी	८.५२३४	६.४२३००
केलेके थम्ब	५.४२३४	४.४४३००
सोजके पौधे	८.२२२४	६.२२३६२
कांटेदार वृक्ष	९.३४२०	४.३२२२
भुट्टेका दाना निकालनेके बादकी वस्तु	७.६६३२०	५.९४३६१

दुःखका विषय है कि हमारे देशके पौधोंकी जांच किसीने नहीं की है। ऊपरकी सूची विलायती सूचीके आदर्श पर दी गयी है। जिन दो चार खास वृक्षोंको उसमें स्थान मिला है उनको हमने स्वयं परीक्षा करके उनके भस्म और क्षारका परिमाण स्थिर किया है। वृक्षोंके भस्ममें (चाहे वह क्षिव पौधे या क्षिव अङ्गका हो) दो प्रकारकी वस्तुएं मिली रहती हैं द्रव और अद्रव अर्थात् घुलनेवाली और न घुलनेवाली। राखकी जो वस्तुएं जलमें घुल जाती हैं वे आंगारिक वसुक, गान्धित वसुक सिकतित वसुक (Carbonate Sulphate and Solicat of Soda ete.) इत्यादि हैं। उनकी सूची नीचे देते हैं जिनसे मिलकर यह क्षार नमक रूपमें रहता है। आगे उपादानोंके नाम लिखे जायंगे।

सूची संख्या ३

हिन्दी नाम	चलित बोलीमें भाव प्रकाश	अङ्गरेजी नाम
आंगारिक द्रावक	एक तरहका कोयलेका तेजाब	Carbonic acid
गान्धिक	गन्धकका तेजाब	Sulphuric acid
हरितिन	हरे रङ्गकी वायु जो नमकमें मिली हुई है	Chlorine
सिकता	वह चीज जो बालूमें चांदी सी चमकती है या बिल्लौर	Silica
वसुका या वसुक	उद्भिज क्षार	Potash
वक्षुका या पक्षिका	अम्लजनसे मिली सज्जी	Sola

तीसरी सूचीमें हमने द्रावक और क्षार इत्यादिको अलग अलग लिखा है परन्तु भस्ममें वे वैसे अलग अलग नहीं होते ; द्रावक और क्षार मिलकर नमककी अवस्थामें रहते हैं। जैसे आंगारिक द्रावक और वसुकर तथा वसुका मिलकर आंगारिक वसुक यावसुका बनता है ; गान्धिक द्रावक और वसुक या वसुका मिलकर गान्धिक वसुक या वसुक बनता है इत्यादि।

भस्मके अनघुलते हिस्सेमें खड़ियाका हिस्सा ही अधिक होता है और थोड़ा गान्धित तथा सिकतित भी मिला रहता है। पर वसुक बनानेवालोंके लिये अनघुलती वस्तुसे कुछ मतलब नहीं है, यह रसान करनेके बाद फेंक दी जाती है। जो घुलती चीज है वह रसान करने पर जलमें मिल जाती है और जल जलकर जो नमक बैठता है उसे ही आंगारित वसुका (Carbonate of Potash कारबोनेट आफ पोटाश) कहते हैं। उसे भूननेकी भट्टीमें आंगारित सज्जिकाकी तरह भून लेने पर सफेद आंगारित वसुक या वसुका कहते हैं। इस आंगारित वसुकसे ही (जैसे आंगारित सज्जिकासे सज्जिकमके और सब नोन बनाये जाते हैं वैसे ही) वसुकमके और नोन बनते हैं।

पौधोंमें इस धातुकी उत्पत्ति नहीं होती ; क्योंकि इसकी भी गिनती मौलिकोंके पुञ्जमें है। यह मौलिक यानी आदि पदार्थ है ; यह बनाया नहीं जा सकता। पौधे जमीनसे जो रस खींचते हैं उसीमें मिला हुआ (जैसा कि हम ऊपर लिख आये हैं) हर एक द्रावकके नोनरूपमें खिंच कर यह पौधोंको पुष्ट करता है। हरेक पौधेके कोमल अंशोंमें जीवनी शक्तिका कार्य तेजीसे होनेके कारण रस अधिक जाता है और उन्हींके भस्मसे यह क्षार ज्यादा निकलता है। यही कारण है कि जिन पौधोंके भीतर लकड़ी पैदा हो जाती है उनकी अपेक्षा रसदार या दूधवाले पौधे तथा पतली डाल, कोमल अंश और पत्तोंकी राखसे यह क्षार अधिक निकलता है। इसी सिद्धान्तके अनुसार तमाखूके पौधे, आलू, पालकके पत्ते, कद्दू, मोम, मूंगफलीके पंचाङ्ग या मूंगफलीके छिलके इत्यादिके भस्मसे यह वस्तु बहुत निकलती है।

चाहे जिस वृक्ष या पौधे या गुल्म इत्यादिकी राख की जाय स-बके बनानेकी रीति और रवान करके बाजार लायक यांगारित क्षार बनानेकी रीति एक ही है, अलग अलग नहीं। इसका कारखाना ठीक उसी ढङ्गका होगा जैसा यवक्षारके लिये बता चुके हैं। इस क्षारको शुद्ध यांगारित वसुक (pure carbonate of potash) बनानेके लिये आरम्भसे अन्त तक इतनी क्रियाएं करनी पड़ती हैं,— बटोरना, सुखाना, भस्म करना, हवामें फैलाना, रवान करना (रव बनाना) जल मारना मस्कूरण यानी सूखी बुकनी बनाना और शुद्ध यानी आग पर भून कर सफेद करना। ये आठ क्रियाएं करनेसे बाद शुद्ध यांगारित वसुक बाजारमें बेचने लायक बन जाता है। आगे क्रियाओंका वर्णन किया जाता है।

बटोरना। जो पत्ते बड़े या छोटे पेड़से स्वयं गिरते हैं उनकी अपेक्षा हरे पत्ते और हरी पतली डाल तोड़ कर लेना अच्छा है; परन्तु सूखी डाल और सूखे पत्तोंको भी फेंक नहीं देना होगा; उन्हें भी इकट्ठा करे। सहजन, रेंड़ पाकड़ इत्यादि वृक्षोंकी डा-लोंको भी बटोर सकते हैं। अर्थात् जिन वृक्षोंमें बहुत लकड़ी न हो उनकी डाल लेनी चाहिये। अगर डाल मोटी हो तो चीर कर उसके छोटे छोटे टुकड़े कर ले जिससे समित (बटोरे हुए पत्ते आ-दिको समित कहते हैं) जल्दी सूख जाय।

सुखाना। पत्ते वगैरहको ऐसे स्थान पर सुखावें जहां धूप हो और हवा चले परन्तु धूल न उड़े। सुखाते वक्त एक बालिश्तसे ऊंचा ढेर न लगावे और समय समय पर पलट दिया करे जिससे हवा और धूपका असर समित पर भली भांति पड़े और वह जल्द सूख जाय। जब तक समित खूब न सूख जाय तबतक राख न ब-नावें, क्योंकि कच्चे समितसे राख बहुत कम होती है और वह जलती भी मुश्किलसे है। बरसातमें समित बटोरना और सुखाना ठीक नहीं; कार्त्तिकसे चैत तक समित बटोरे और सुखावें। और बर-सातमें वसुक बनावे। या सुखाना जाय और भस्म करके वसुक बनाना जाय; कारखानेवाला अपना सुभीता देखकर जैसा चाहे करे परन्तु बरसातमें काम सुखानेके लिये भस्म इकट्ठा कर ले। अब

थार न रहनेसे बरसातमें काम बन्द करना पड़ेगा। घरको
 करके सुखानेमें खर्च बहुत पड़ता है, हाँ अगर सुखानेके घरमें
हेका ऐसा बन्दोबस्त हो कि उससे समित जलाया जावे और
तोंके द्वारा उसकी आंच सुखानेवाले घरकी जमीनके (जो धातकी
दरसे बनी हो) नीचे घूम कर जाय और जो हवा उस घरमें
ले वह भी उसी आंचसे गर्म होनेके बाद घरमें जाय तो कारखानेका
म बारहों महीने एक ढङ्गसे चल सकता है। ऐसा चूल्हा
ानेकी रीतिका वर्णन इस छोटीसी पुस्तकमें देना कठिन है।
जो और रेहके प्रबन्धमें रस मारनेका चूल्हा बनानेकी जैसी
ति लिख आये हैं उस चूल्हेकी भी बहुत कुछ रीति वैसीही
। जैसे हो समितको बिना खूब सुखाये भस्म नहीं करना चाहिये।
 भस्म करना। इसे भस्मीकरण भी कहते हैं। भस्मीकरण
 प्रकारसे होता है; (१) सूखे समितके छोटे छोटे ढेर इतनी
री पर लगाये कि कारीगर सबके चारों तरफ बिना तकलीफके
मकर समितको उलट दिया करे। पहले थोड़ीसी पतली डाल
र पत्तोंका छोटा छोटा ढेर लगाकर आंच दे। ज्यों ज्यों आंच
ती जाये त्यों त्यों अधिक समित डालता जाय। जब ढेर
 हो जायं और आंच भी ठीक ठीक जलने लगे तो थोड़ी देर
र समित न डालकर उन्हीं ढेरोंको उलट पलट कर जलाता जाय
समें सब समित जलकर भस्म हो जाय। कोयला या कच्चा समित
 रहे। जलते ढेरोंपर और समित इस प्रकार फैलाकर डालना
ाहिये कि आंच दब न जावे; उनमेंसे लपट बराबर तेजीके
ाथ निकलती रहे। ज्यों ज्यों समित जलकर भस्म होता जाय
ों त्यों और समित डालता जाय जिससे भस्मक्रिया बराबर
ारी रहे। बीच बीचमें लोहेकी बीफसे पलट दिया करे ताकि
 समित जलकर राख हो जाय। जब सब समित डाल दिया
ाय तो ढेरोंको उलट पलट कर जलावे। ढेरोंमें डाले हुए समितके
 जाने पर आंचको दहकने दे, जल डालकर न बुझावे ताकि
ो कुछ कोयला या लकड़ी बची हो वह जलकर राख हो जावे।
न ढेरोंकी आंच तीन चार दिनमें ठंडी होगी। जब राख

ठंडी हो जाय तो उसे उठाकर ऐसे स्थान पर फैलावे जिसमें राख पर हवा तो खूब लेंगे पर न तो राख उड़े और न उस पर धूल पड़े। राख फैलाते वक्त इस बातका ख्याल रखे कि ४ गिरहसे ऊंची न फैलायी जावे; उस ढेरमें बीच बीचमें जोभी खुरचनीसे पलट दिया करे जिसमें राखके सब स्थानों पर हवा लगकर उसमें जो क्षार है वह पलट कर आंगारित (Carbonate) हो जावे। इसी प्रकार ५—६ दिन तक हवा लगने दे (२) समितिको भस्म करनेका दूसरा उपाय झंझरीदार चूल्हेमें जलाना है। उसे हम स्थानाभावसे यहां नहीं लिख सकते। हम इन विषयों पर एक बड़ा ग्रन्थ लिख रहे हैं; उसमें चित्र सहित उसका वर्णन किया है। उस ग्रन्थके पूरा होकर छपने पर पाठक इस विषयका खुलासा हाल जान सकेंगे। तब तक पहली रीतिसे ही काम लेना उचित है।

इस भस्मको वैसे ही रवान करके रस बनावे और रस मार कर नोन बनावे तथा साफ करे जैसा कि हम सज्जीके स्तम्भमें बता आये हैं। इस रीतिसे आंगारिक समुक्र बनाकर बाजारमें बेच सकते हैं। उसीसे बसुकके और सब नोन बनाये जाते हैं। शोरा जो सज्जी या जमीन पर फूट आता है वह भी शोरेका तेज़ाब और समुकके मेलसे जमीन पर पैदा होता है।

शोरा या शोरजित समुका। यह नोन जमीन पर रेहकी तरह फूटता है। यहां हम थोड़ेमें इसे साफ करने और इसकी मट्टीसे, नमक अलग करनेकी रीति लिखते हैं।

इस नोनके बटोरनेकी रीति वही है जो समुककी है और रवान भी वैसे ही किया जायगा; फर्क सिर्फ इतना है कि जितने कम जलमें यह नमक घोला जाय उतना ही अच्छा है। इस नमकका रवान ठंडे जलसे न करके गर्म जलसे करे; क्योंकि साढ़े तीन गुने ठंडे जलमें और तीन गुने गर्म जलमें घुलकर पूम घोल पैदा करता है। पूम घोल उसे कहते हैं जिसमें शोरा घोलते घोलते और न घुले, बचा जाय। इस नमकमें घुलनेकी शक्ति, जितना जल गर्म होता जायगा, उसी अनुपात पर बढ़ती जायगी पर नमकमें १४

केका बदलाव कुछ भी नहीं होगा। यों शोरेके साथ और
तने नमक हैं सब अलग कर लिये जाते हैं।

शोरा दो प्रकारका होता है; एक बनावटी और दूसरा जमीनसे
कर निकला हुआ। बनावटी शोरा बनानेके लिये मलबेका (टूटे
मकानके मसालेका) ढेर लगा कर उस पर घोड़े इत्यादिका
ाव छिड़कते हैं और कुछ रोज बाद स्नान करके उससे हो
ारा निकालते हैं। और जमीन पर फूटा हुआ शोरा वही है जो
की तरह जमीन पर फूटता है। उस नोनको स्नान करते हैं।

साधारणतः शोरेके साथ वसुकिय या वसुकिद गान्धित और
रिताइद या हारितिश्र (Potassic & Sodic sulphate &
hloride पोटासिक और सोडिक सलफेट और क्लोराइड) और
ीय तथा मुग्न्नीय शोरित (Calcic & magnesic nitrate
लसिक और मेगनेसिक नाइट्रेट)मिले रहते हैं। इसके सिवा
न जमीनसे बटोरते वक्त उसमें मट्टी मिल जाती है। साफ शोरा
गर ठीक तौर पर गर्म करके गलाया जावे तो बहुतसा मिलाव
लट कर शोरा हो जाता है। इस कलमको थोड़ा तूतीयका घोल
ालकर भिगोवे तो चमकदार सब्ज रंग पैदा होता है। इस नोनके
साथ जितने हारितिव या हारिताइद (Chlorides) मिले हुए
हैं उनमेंसे हारितिवका हरितिन दूर करनेके लिये शोरेके साथ
थोड़ा शुद्ध शोरेका तेजाब मिलाकर तर करे; फिर जरा गर्म करनेसे
ही सब हरितिन दूर हो जायगा। परन्तु बिना परीक्षा किये आंच
परसे न उतारे: परीक्षाकी रीति यह है कि थोड़ा सा शोरा-
जलमें घोलकर उसमें रजतिय शोरित (Argentic nitrate
आरजेंटिक नाइट्रेट, एक प्रकारकी, शोराका तेजाब मिली चांदी)
मिलावे। अगर शोरा शुद्ध होगा तो भोतेनिय हारिताइद(Boric
Choride बोरिक क्लोराइड) या रजतिय शोरित अथवा वसुकीय
अंगारित (Potassic Carbonate) उसके घोलमें मिलनेसे निथ-
राहट नहीं पैदा होगी। शुद्ध शोरा पसीजता नहीं।

इन नोनोंको साफ करनेके लिये एक ऐसी गहरी कड़ाई चाहिये

जिसमें १०० प्राइक (एक प्राइक=४॥ सेर) माल - घंटे। जि
जल डाले उसका दूना मैला शोरा डाले। -जनसे पांच पाकर-
जब नोन घुल जायं तो और मैला शोरा डाल कर घोले। हम प
कह आये हैं कि जल जितना गर्म होगा उतनाही ज्यादा शोरा घुं
परन्तु हारितिव वस्तुक (Chloride of Soda खानेका नमव
इत्यादि दूसरे नमक जैसे ठंढे जलमें घुलते हैं वैसे ही गर्म ;जल
घुलेंगे, उनमें कुछ विशेष फर्क नहीं होगा। जब तक धान उबाल
खावे तब तक डाले हुए शोरेके घुल जाने पर और शोरा डाल
जाय। जब सब मिलाकर जलके वजनसे तीन गुना शोरा पड़ ज
और थोड़ी देर उबाल खाकर सब घोल साफ होजाय तो मोटे ट
पर छान ले और कलम जमनेके लिये शर्कारूमें (कलम जमाने
पात्रमें) डाल दे। यह पात्र बहुत गहरा न हो और उसका तल
गोल और गावदुम होकर बीचमें मिला हो जैसा मिश्री डालनेक
होता है। पर उतना छोटा न हो, बड़ा हो। इस शर्कारूमें र
डालनेके बाद कलसे चलने वाली मशीनोंसे बराबर मथता र
जिससे बड़ी बड़ी कलमें न जमने पावें। बड़ी बड़ी कलमोंके बीच र
खटका रह जाता है इस लिये इन कलमोंको शुद्ध करनेके लि
फिरसे कलम जमानी पड़ती है। सज्जोकिय या वस्तुकिय हारि-
तिय (Sodic Chloride खानेका नमक) जितना ठण्डे जलमें
घुलता है उतना ही गर्म जलमें; पर शोरा ठण्डे जलमें कम
घुलनेके सबब रस ठण्डा होने पर शर्करा या कलम होकर जमने
लगेगा ; -- नोन प्रायः सब जलमें या चलाररसमें (यह रस जिससे
घुली चीजका बहुतसा हिस्सा निकाल लिया गया हो) घुला रह
जायगा और शोरेकी बहुत महीन कलमें जमेंगी। कलम जमनेके
बाद चलाररस अलग करके फिरसे उन हौजोंमें डाले जिनके दो-
तले हों। पहले तलेपर महीन छेद भरनेसे हों ; उसपर शोरेकी
कलम डालनेसे उसमें जो रस होगा वह धीरे धीरे चू कर दूसरे
तलेमें जमा हो जायगा। इस कामको पूरा करनेके लिये हर
हौजको लबालब भर देना चाहिये। जब शोरेकी कलमें डाल दी
जायं तब ऊपरसे गम घोल डालकर उन कलमोंको धोवें। गम

घोलको ठण्डे जलमें बनावे गर्ममें नहीं। इस घोलसे धोनेपर शोरेकी कलम बंधते वक्त जो नोन मिला रह गया है वह सब घुलकर अलग हो जायगा, सिर्फ शुद्ध शोरा पड़ा रहेगा। इस जलको हौजसे अलग निकाल ले। फिर इन कलमोंको साफ पानीसे धोवे; ज्यादा जल न डाले, थोड़ा और अन्दाजसे डाले। कलममें जो कुछ नमकका अंश होगा वह उस जलमें घुल जायगा और थोड़ा शोरा भी घुल कर मृत घोल होगा। इस घोलको पहलेकी तरह शोरेकी कलम धोनेके काममें लावे। सब जलके भर जाने पर शोरेकी जो कलम बचेगी वही रासायनिक शुद्ध शोरा है। उन कलमोंको सूखनेके लिये जरा हवामें फैला दे; फिर बोरोंमें भर कर बाजारमें बेचे। साफ पानी हौजमें भरकर धोना चाहिये। यदि खूब शुद्ध शोरा न बनाना हो तो धोनेकी जरूरत नहीं।

जो जल या अन्तरस एकबार कलम धोनेसे बचे उससे फिर मैला शोरा धोवे और उबालकर अलग कलम जमावे। यह शोरा घटिया होगा। जो नमक बचेगा उसे साफ करके अांगारित वस्तुक (Carbonate of Soda) या नमक बना सकते हैं।

ऊखके सिठ्ठट या छिलके इत्यादिसे वसुकिय अांगारित (Potassic Carbonate) बनाना। ऊखका रस पेरनेके बाद जो सिट्ठट बच जाता है उसे फिर अच्छी तरहसे कुचलकर जल भरे कड़ाईमें डाल दे, और गर्म करे। जब जल गर्म हो जाय तो एक रात सिट्ठटको उसीमें पड़ा रहने दे। पीछे निकाल कर कलसे खूब निचोड़े जिससे सब जल निकल जाय। इसके बाद सिट्ठटको सुखाकर भस्म करे और उस भस्मसे रसान करके रस बना ले। फिर वस्तुर वसुक बनावे। जो जल कड़ाईमें है उसमें और निचोड़नेसे जो जल निकले उसमें कूटा हुआ सिट्ठट (खोइया) डाल कर भिगोवे। इस तरह जब जलमें चीनीका अधिक भाग आ जाय जो उससे शराब बनावे चाहे सिरका।

अमरुलिक द्रावक (आक्सालिक एसिड)।

——:o:——

यह द्रावक खनिज और उद्भिज दोनों जातिकी चीजोंमें पाया जाता है। अमरोलेके सागमें जो खटाई है वह इसी द्रावकके मिले रहनेसे है ; इसीसे इस द्रावकको अमरूलिक द्रावक (Oxalic acid) कहते हैं। अमरोलेके सागमें मिला रहकर यह द्रावक खटाई लाता है इससे पाठक यह न समझें कि यह द्रावक विषाक्त नहीं है ; यह बड़ाही विषाक्त है। यह खाने पर कुचलेके सत्तके समान असर करता है। यह द्रावक कृत्रिम उपायसे भी बनाया जाता है। यह चीनी, श्वेतसार (Starch सार्च) और लकड़ीके रेशे इत्यादिको शोरेके तेजाबमें मिलाकर बनाया जाता है। इसके अलावा अमुकिक तीयिक या जारक अमुकके साथ (Potassic hydrate or Caustic potass पोटासिक हाईड्रेट या कास्टिक पोटाश) विद्रुक, अम्लीरिक इत्यादि (Torteric citric acid टोरेरिक साइट्रिक एसिड) द्रावक गर्म करनेसे भी यह द्रावक बनता है।

पहले इस द्रावकको बहुधा चीनी और श्वेतसारमें (starch या सागुरकी जातिकी चीजोंमें) शोरिक द्रावक (शोरेका तेजाब) डालकर बनाते थे ; पर अब हजारों मन यह द्रावक लकड़ीके बुरादेसे बनाया जाता है। कितने ही स्थानोंमें अभी तक यह द्रावक गुड़ या आलूके आटेसे बनता है। ११२ सेर अच्छा गुड़ लेकर यदि ठीकठीकरीतिसे बनावें तो ११८ सेर अमरूलिक द्रावक बनेगा। ११२ सेर अच्छी चीनीसे १३० सेर अमरूलिक द्रावक बनता है। कारखाने वालोंने अपना एक नियम बांध रखा है कि ६३ सेर शोरा और २ मन ११ सेर गान्धिक द्रावक (गन्धकका तेजाब) मिला कर शोरिक द्रावक (शोरेका तेजाब) बनाया जावे तो इतना शोरेका तेजाब ठीक बनेगा कि ११० सेर अच्छी चीनीसे १३० सेर अमरूलिक द्रावक बन जायगा। जब शोरिक द्रावक चीनीमें मिलाकर गर्म किया जाता है उस पर जो भाप उठती है वह शोरिक अम्लजारक का (Nitrous de oxide [illegible]) [illegible] निकलता है। इस भापको बर्तनके द्वारा ठंढे करनेसे बनाई गई [illegible]

जलसे तर हवा इस दम मिले। जल और हवासे अम्लजन लेकर यह धूआं फिर बदल कर शोरेका तेजाब हो जायगा। भबकारमें जो हवा दी जाये वह ठंडी और जलसे तर हो। भबकारमें थोड़ा जल भी रहना चाहिये।

बड़े कारखानेके लिये पालिश किये मट्टीके बर्तन चाहियें और वे ही आग पर चढ़ाये जायं या काठके भबके वे हों और भीतर शीशेकी चादर चढ़ी हो। उन भबकोंको भापसे गर्म करना चाहिये। भबके बहुत बड़े न हों; ऐसे हों कि ३० सेर मसाला पड़ कर भी एक तिहाई जगह खाली रह जाय।

साधारणतः इस कामके लिये जो द्रावक लिया जाय उसकी विभारता (गाढ़ापन) १.२२ से १.२७ तक होनी चाहिये। इन मसालोंको १२१°F तक गर्म करना चाहिये। जब तक पानसे बम्पई लाल रंगका धूआं निकलता रहे तब तक आंच धीमी रखे; धूआं निकलना बन्द होजाय तो और आंच न दे; नहीं तो फिर अमकलिक द्रावक फटने लगेगा।

बनानेकी रीति;—(१) शोरिक द्रावक (१.४२ घनताका) १ हिस्सा और जल १० हिस्सा मिलाकर घोल बनावे। इस घोलमें १ हिस्सा चीनी या आलूका श्वेतसार (Potato Starch) मिलाकर तब तक धीमी आंच पर गर्म करे जब तक रंगदार धूआं निकलता रहे। जब धूआं निकलना बन्द हो जाय तब इसका जल मारकर गाढ़ा करे। इतना गाढ़ा करे कि ठंडा होने पर द्रावकके कण जमने लगें। जब जम जायं तो बचा रस अलग करले। इन कलमोंको फिर बहुत थोड़े उबलते जलमें घोलकर फिर ठंडा होने दे जिसमें इस द्रावककी कलमें जमें। दोहरा कर कलमें जमा लेनेसे यह द्रावक शुद्ध हो जायगा।

जो अन्तररस बचा है उसमें विशेष कर संयोगिक द्रावक और कुछ अंश अमकलिक द्रावक तथा शोरिक द्रावकका मिला हुआ है। इसमें और १॥ हिस्सा शोरेका तेजाब मिलाकर वैसेही गर्म करे और जल उड़ाकर फिर वैसेही द्रावककी कलम जमावे। इसी तरह बराबर तेजाब (शोरेका) डालकर सबका अमकलिक

द्रावक बनावे। जब तक अन्तररसमें द्रावकका अंश रहे इसी प्रकार बनाता रहे। इन सब कलमोंका रंग पहलेका सा साफ नहीं होगा; मैला होगा। उन्हें ऊपर लिखी रीतिसे थोड़े गर्म जलमें घोलकर तीन बार कलमें जमावे; उनका रङ्ग साफ हो जायगा।

(२) चीनी २१२°F की गर्मीमें सुखायी हुई ४ हिस्सा और शोरेका तेजाब (जिसकी विभारता १.३१ हो) ३२ हिस्सा परस्पर मिला कर ऊपर लिखे ढङ्गसे पकावे। जब रंगदार धूआं निकलना बन्द हो जाय तो उबाल कर जल उड़ावे। जब सारा घान घट कर केवल छठा हिस्सा रह जाय तो नोन जमावे। दो घण्टेमें पाक पूरा होता है। दोहरा कर कलम जमानी नहीं पड़ती। पहले बारकी कलम चीनीके वजनसे सैकड़े पीछे ५६ से ६० तक जमती है।

(३) आलू या तीखुरकी चीनीसे (Potato or dextrine Sugar) अमक्लिक द्रावक बनाना। आलूकी पीठीको कई घण्टे जलमें उबाले। उस जलमें सैकड़े पीछे दो भाग गान्धिक द्रावक (गन्धकका तेजाब) मिला हो। इन सबको सीसेके बर्तनमें उबालना चाहिये। आलूकी पीठीको तब तक उबाले जब तक वह मधुरिन (Saccharine चानीसा) न हो जाय और धुमलिन (Iodine) डालनेसे फिर नीला रङ्ग न पैदा हो। जब इन सब बातोंमें पाक पूरा उतरे तो उतार कर घोड़ेके बालकी थैली या और किसी ऊन कपड़ेकी थैलीमें भर कर दबाके छान ले। फिर इस छने जलको आंच पर चढ़ाकर और जल मार कर इतना गाढ़ा कर लेवे कि एक आढ़क मापमें रस वजन में ६॥ या ७॥ सेर हो। अब इसको शोरेके तेजाबमें मिलाकर ऊपर लिखी रीतिसे अमक्लिक द्रावक बनावे।

चीनी इत्यादिसे अमक्लिक द्रावक बनानेकी क्रिया हमने ऊपर बतायी है। यह द्रावक और भी कई तरीकोंसे बनाया जा सकता है जैसे;—भञ्जीकमको आंगारिक अनोषिद (Carbonic anhydride) सहित गर्म किया जाय तो अमक्लिक द्रावक पैदा होगा; परन्तु इन चीजोंको इतनी गर्मी देनी चाहिये जितनी गर्मीमें पारा उड़े।

दो हिस्सा सज्जीकम्भ और एक हिस्सा अंगारिक अम्लोषिय मिल कर एक हिस्सा अमकलित सज्जीकम्भ बनेगा। प्रायः जितने आंगारिक समास (Carbonic compound) हैं उन्हें अम्लाइव (oxide)करनेसे अमकलिक द्रावक बनता है; पर उनमें अम्लजनका अंश होना चाहिये।

पहले चीनी वगैरहको शोरेका तेजाव देकर और अम्लाइव कराकर इस द्रावकको बनाते थे; पर अब कारखानेवाले काठके बुरादेसे ही बनाते हैं। काठके बुरादेके साथ सज्जीकिय और वसुक्रिय तोयित (Sodic & potassic hydrate) दोनोंको मिला कर आंच देनेसे यह द्रावक पैदा होता है।

तोयित वसुकम्भ और सज्जीकम्भ, दोनोंका रस इतना गाढ़ा हो कि उसकी गाढ़ता १.३५ या ७१.२° B कला घनोद्धकको हो। इन दोनों रसोंके मिलानेका परिमाण यह है कि दो भाग या अणु सज्जीकिय तोयितका (जिसे जारक वसुक या सज्जिका Sodic hydrate or Caustic Soda कहते हैं) रस और एक भाग या अणु वसुक्रिय तोयित या जारक वसुकका (Potassic hydrate or Caustic Potash) रस मिलावे। इसके बाद उसमें काठका बुरादा मिलाकर चटनी या अवलेह कर ले। इस गाढ़े अवलेहको गर्म लोहेकी चादर पर मोटा फैला दे और उलटता जाय। इधर क्रमसे आंच तेज करे। पहले तो उसकी भाफ बहुत निकलेगी; पर जब समपान क्रिया (मसाला पटना) आगेको बढ़ेगी तब एक प्रकारकी जलती हुई वायु निकलनी शुरू होगी। जब आंचको तेजी ३६२° से ४०२° F (२००° से २१०° C) तक पहुंचे तो उस पर कई घंटे रखे; रखनेसे एक प्रकारका और धूसर रङ्गका पदार्थ पैदा होगा जो जलमें घुल जायगा। धूसर रंगके पदार्थमें क्या क्या चीज मिली हुई है यह ठीक ठीक जाना नहीं गया है। इस अवस्थामें सैकड़े पीछे इकसे चार हिस्से तक ही अमकलिक द्रावक मिला रहता है और थोड़ा सा पिपिलिक द्रावक (Formic acid फोरमिक एसिड) भी; पर सिरकिक द्रावकका (Acetic acid) लेप भी नहीं रहता।

थार्न [Thurn.] नामक एक रसायनज्ञने इस विषयकी अलग जांच की थी। उनका कहना है कि केवल जारक सज्जीकामें काठका बुरादा मिलाकर पाक किया जाय तो सैकड़े पीछे ३० से ४० भाग तक अमलिक द्रावक बन सकता है। और जो केवल जारक बसुकमें काठका बुरादा मिलाकर पाक किया जाय तो बुरादेके वजन पर सैकड़े पीछे ८५ भाग तक अमलिक द्रावक बनेगा; परन्तु उनके कहनेके मुताबिक गहरे छोड़के पात्रमें मसालोंका पाक करना चाहिये क्योंकि यदि ४० भाग जारक बसुक और ६० भाग जारक सज्जीका बुरादेके साथ मिलाकर पतला करके फैलाया जाय तो कुछ विशेष फायदा नहीं होता। हम नीचे एक सूची देते हैं जिसमें लिखे हुई परिमाणकी चीजोंमें पाइन (काठका बुरादा डालकर) अमलिक द्रावक बनाया गया था।

वजन जारक बसुकका	वजन जारक सज्जीकाका	गर्मी Centigrate	के बार पतला हुई।	सैकड़े पीछे कितना अमलिक द्रावक बना
० भाग	१०० भाग	२००°c-२२०°c	२	३३.९४
१० „	९० „	२३५°c	२	५८.३६
२० „	८० „	२४८°-२५७°c	४	७४.७६
३० „	७०		३	८५.९३
४० „	६० „		६	८०.५७
६० „	४० „	„	६	८०.०८
८० „	२० „	२४५°c	४	८१.२४
१०० „	० „	२४०-२५०°c	६	८१.२३

इस सूचीसे जाना जाता है कि ८० भरी जारक बसुक और २० भरी जारक सज्जीकाके मेलसे सौ भरी पाइन (देवदार) काठके बुरादेसे ८१ भरी अमलिक द्रावक बनता है। ज्यों ज्यों जारक सज्जीकाका हिस्सा घटता और जारक बसुकका हिस्सा बढ़ता गया त्यों त्यों अमलिक द्रावकका परिमाण बढ़ता गया।

यहां हम पाठकोंको बता देना चाहते हैं कि बड़ो लकड़ीसे

बुरादेकी अपेक्षा नरम लकड़ीके बुरादेसे अमरूलिक द्रावक ज्यादा निकलता है। जैसे देवदार, सहजन, केवड़ा इत्यादिके बुरादेसे जितना ज्यादा द्रावक बनेगा उतना शाल, पियासाल, सुन्दरी इत्यादिके बुरादेसे नहीं बनेगा क्योंकि उन लकड़ियोंसे ये लकड़ियां सख्त होती हैं।

अमरूलिक द्रावकका चलन छींट छपनेशालोंमें रंगने और कपड़ा साफ करनेके लिये बहुत है। साबुनमें हारितिव चूनेके (Chloride of lime) साथ अमरूलिक द्रावक भी डाला जाता है जिससे साबुन कपड़ा साफ करता है। इसके अलावा और भी बहुत कामोंमें आता है। अमरूलिक द्रावक और ऊपर लिखे चूनेको जलमें घोलकर उससे कपड़ा धोनेसे प्रायः बहुतसे रंग उड़कर कपड़ा सफेद हो जाता है। ऐसा ही कामोंमें इसका अधिक व्यवहार होनेसे यह द्रावक बहुत बिकता है।

मीना।

———0:0———

मीना एक प्रकारका काच है जो धातव अम्लाइडसे रंग करके सोना चांदीके गहने और लोहे पीतलके बर्तन पर फेरकर सुनारकी जैसी फुकनीसे गला लिया जाता है या आंच पर गलानेसे काच रंगदार या सादा मुलम्माया हो जाता है। ऐसा मालूम होता है मानो काचकी एक चादरसी उस विशेष चीज पर चढ़ गयी। गहने पर मीना हिन्दुस्थानमें बहुत दिनोंसे होता आता है। पर लोहेके बर्तनपर मीना करना थोड़ा दिनोंसे अङ्गरेजोंने चलाया है। किन्तु इससे यह न समझना चाहिये कि हमारे यहां पहले कम दामकी चीजोंपर मीना किया नहीं जाता था। लखनऊमें चिलमों पर और आगरे दिल्लीमें मट्टीकी हण्डियोंके भीतर बहुत मीना किया जाता है।

मीना और कोई नयी चीज नहीं है, एक प्रकारका ऐसा काच है जो जल्दी गल जाता है। इसी काचमें धातव अम्लाइड (Mettalic oxide मेटालिक अक्साइड) मिलाकर रंग किया जाता है। इस मसालेको थोड़े जलमें घटनी सा बनाकर जिसपर मीना करना हो उस पर तुली या कूचीसे एक समान पतला लेप करे फिर उसे दीयेकी लाट फुकनीसे मारकर गला ले या चूल्हे में (जो कि इसी कामके लिये बना होता है) गला लेनेसे ही मीनाकी एक तह उस चीज पर चढ़ जायगी।

चूल्हा इसके लिये ठीक वैसा ही हो जैसा कि मृत्तन या भुननेकी भट्ठी होती है और जिसका उल्लेख हम सज्जीके खाभमें कर आये हैं। चिमनी भी इस चूल्हेकी २०।२५ फुट हो चौतरे दो न होकर बराबरका लम्बा एक हो। बर्तन पर मसाला लगानेके बाद हवामें सुखा ले तब भट्ठीमें रखे या भट्ठीकी छतपर बर्तन सजा कर सुखा दे।

सुखानेके बाद भट्ठीमें बर्तन इस प्रकारसे सजावे जिसमें आंचकी लौ सब स्थानपर लगकर मसाला गला दे। जब मसाला ठीक ठीक गल जाय तो बर्तनोंको निकालकर ऐसे गर्म घरमें रखे जिसकी हवा बनावटी उपायसे १८०—१८०F तक गर्म रहे। भट्ठीमें दूसरे बर्तन सजा देवे। इसी प्रकार बराबर काम चलाया जाय। जिस घरमें बर्तन रखे गये है जब वह भर जाय या घामको काम बन्द किया जाय तब जिस चूल्हेसे वह घर गर्म किया जाता है उसकी आंच निकाल कर घरको धीरे धीरे ठण्डा होने दे; पर उस कोठरीका किवाड़ खोलकर ठण्डी हवा भीतर पहुंचा कर जल्दी न ठण्डा करे नहीं तो बर्तन परका मीना तड़क जायगा। ऐसा करे जिसमें धीरे धीरे सारी रातमें कोठरी ठण्डी हो। जब बर्तन परका मीना गल जाय तो बर्तन उसी वक्त न निकाले, कुछ देर तक चूल्हेमें रहने दे जिसमें मसालेकी हवा निकल जाय। नहीं तो मीने पर फुटकियां हवाकी पड़ जायंगी। कितनी देर रखना होगा और कितनी तेज आंच चाहिये इसका अन्दाज काम करनेवाले स्वयं लगा सकते हैं। पर इतना जरूर कह सकते हैं कि आंचकी तेजी १००° F के लगभग होनी चाहिये।

इस पुट या भस्मका ४ हिस्सा लेकर वजनमें बराबर साफ बालू (जिसमें केवल बिल्लौरका चूर हो, काले कण न हों) और काच मिला कर चूर कर ले। इसमें एक भाग समुद्रका नोन (पांगा नोन) मिलावे या और कोई क्षार (सज्जीकिय या समुखिय आंगारित) मिला कर घड़ियामें अधगला सा, आंच देकर कर ले।

(३) सीसा और रांगा बराबर बराबर लेकर ऊपर लिखे मुताबिक भस्म करके अम्लाइद बनावे। फिर इस पुटका और चकमक पत्थरका चूर (या बिल्लौरका चूर) एक हिस्सा लेकर इसके साथ आंगारित समुख (Carbonate of potash) २ हिस्सा मिला कर ऊपर लिखी रीतिसे गलावे और बुकनी कर ले।

(४) कड़ा काच ३ भरी और रक्तसीसक या भकरा सेंदुर १ भरी लेकर उक्त रीतिसे पुट बनावे।

(५) भकरा सेंदुर १८ भाग, सुहागा ११ भाग और कड़ा काच १६ भाग मिला कर पुट बनावे।

(६) कड़ा काच १० भाग और शोरा तथा सफेद संखिया एक एक भाग मिला कर पुट बनावे।

पुटका अच्छा और बुरा होना आंच पर मुनहसर है। जितनी देर आंच पर रखनेसे पूरा मेल सबका होगा और आंच जैसी होगी उसी अनुपात पर वह अच्छा या बुरा होगा। बालू, काच और पुटका परिमाण बढ़ानेसे मीना अवेर गलनेवाला बनेगा और अम्लाइद रांगका (Oxide of tin) भाग बढ़ा देनेसे मीनेमें सफेदी और धुंधलापन बेसी आ जाता है। सुहागेका मिलाव जहां तक हो, न करे; अगर मिलावे भी तो बहुत ही कम और कभी कभी; क्योंकि इसके मिलावसे मीने पर शोरा फूट आता है और रंग खराब हो जाता है। अब हम अपने पाठकोंको मीना कैसे बनाना होता है, यह बताते हैं। मीना एक रंगका नहीं होता; काला, ऊदा, सब्ज, नीला इत्यादि कई रंगोंका होता है; उन सबका वर्णन अलग अलग किया जायगा।

काला मीना।

(१) भस्म किया लोहा या समाम्लाइद लोहा (Calcined

iron or protoxide of iron) १२ हिस्सा और अम्लाइव नीलक १ हिस्सा ; इन दोनोंको और इन दोनोंके बराबर सफेद पुट पीस कर मिलाये और घड़ियामें वैसे ही गला ले जैसे पुट गलाया जाता है।

(२) बारू मृद (Fine clay फाइन क्ले) ३ हिस्सा और समाम्लाइव लोहा १ हिस्सा मिला कर गलावे ; सुन्दर काला रंग होगा।

(३) पराम्लाइव धूसरिन (peroxide of manganese) ३ हिस्सा, अम्लाइव नीलक मैला (Crude oxide of cobalt) १ हिस्सा गलाकर मीना बनावे।

जिनमें पुट डालनेको नहीं लिखा है उनमें जितना गहरा या हल्का काला रंग लाना हो उतना ही कम या ज्यादा सफेद पुट मिलाये अर्थात् रंग गहरा करना हो तो कम और हल्का करना हो तो बेशी पुट मिलाकर और पुटकी तरह गला कर बुकनी बना ले।

नीला मीना।

(१) सफेद पुटको अम्लाइव नीलक देकर गहरा और हलका रंग करे।

(२) बालू (ऐसा जिसमें काले कण न हों) या भकरा सेन्दुर और शोरा दस दस हिस्सा, कड़ा काच या चकमक पत्थर २० हिस्सा और अम्लाइव नीलक (Oxide of cobalt) १ हिस्सा (नीलक जितना बेशी डाला जावेगा उतना ही गहरा नीला रंग होगा) इन सबको पीसकर मिलावे और गला कर बुकनी कर ले।

हरा मीना।

(१) नीलक १ हिस्सा, रक्त पीतक या भकरा सेन्दुर १६ हिस्सा और चकमकका चूर ८ हिस्सा गलाकर मीना बनावे।

(२) नीलक ६ हिस्सा भकरा सेन्दुर १३ हिस्सा और चकमक पत्थरका चूर १६ हिस्सा गला कर मीना बनावे।

(३) भकरा सेन्दुर, समाम्लाइव लोहा (*Protoxide of iron*) एक एक हि...ा कलमिन (सुरमेका गाद), सुहागा और बालू

दो दो हिस्सा इन सबके साथ थोड़ासा अम्लाइद नीलक (Oxide of cobalt) मात्र मिलाते हैं। इससे रंगकी आभा बदल जाती है।

पाठकोंको याद रखना चाहिये कि सबके साथ सफेद पुट मिला कर इसका घोर गाढ़ा रङ्ग किया जाता है।

सब्ज मीना।

(१) पुट २ सेर और कृष्ण अम्लाइद ताम्र (Black oxide of copper) २॥ भरी पुट देकर गला ले।

(२) ऊपरके मसालोंके साथ रक्ताम्लाइद लोहा (Red oxide of iron) ॥ भरी मिला कर मीना बनावे। पर यह खूब पक्का नहीं होता।

(३) तांबेका बुरादा और मुर्दासंग १-१ भरी, बालू बारू १० भरी और पुट आवश्यकतानुसार डालके मीना गलावे।

(४) अच्छे और स्वच्छ पुटके साथ जितना गहरा सब्ज रङ्ग करना हो उसीके मुताबिक वैसी वजनमें अम्लाइद पारदा (Oxide of Chromium) मिला कर मीना बनावे। सब्ज रङ्ग इस मीनेका बहुत अच्छा होता है और आँच पर भी खूब टिकता है, पर अन-जान या नये बनानेवालेके हाथसे सब्ज रङ्ग न होकर कुछ पत्तेसा बदामी रङ्ग हो जाता है।

(५) स्वच्छ पुट १२॥ भरी कृष्णाम्लाइद ताम्र (Black oxide of copper) ॥ या ।॥ भरी और अम्लाइद पारदा (Oxide of Chrome) ॥ भरी मिला कर मीना बनावे। मोलम या चम-कदार सब्ज रंग होगा।

(६) नीला और जर्द मीना गलाकर बनावे।

घोर फालसई मीना।

नीला मीना २ हिस्सा, काला मीना और जर्द मीना एक एक हिस्सा लेकर उसे मीनेके मुताबिक गलावे।

नारङ्गी मीना।

(१) मकरा सेन्दुर १२ हिस्सा, रक्त गान्धित लोह और अम्लाइद कज्जलिन (Red sulphate of iron & oxide of

antimony) एक एक हिस्सा चकमक पत्थरका चूर ३ हिस्सा इन सबको पीस कर घड़ियामें भस्म करे ; फिर ठण्डा करके ५० हिस्सा पुट मिला कर पीस कर घड़ियामें गला ले ।

(२) रक्त सीसक या भकरा सेन्दुर १२ हिस्सा, अम्लाइव कज्जलिन ४ हिस्सा, चकमक पत्थरका चूर ३ हिस्सा और रक्त गान्धित लोहा १ हिस्सा पीस कर भस्म करे, फिर पुट ५ हिस्सा और भस्मका दो हिस्सा मिला कर गला ले ।

बैंगनी मीना ।

(१) पुटके साथ अम्लाइय स्वर्ण (Oxide of Gold) और पराम्लाइव धूसरिन मिलाकर रङ्ग करे ।

जितना गाढ़ा रंग करना हो मसाला उतना ही बेशी दे ।

(२) गन्धक, शोरा, तूतिया, कज्जलिन (Antimony) और, अम्लाइय रांग आध आध सेर और भकरा सेंदुर तीन सेर ; इन सबको मिलाकर गलावे और ठण्डा होनेके बाद बुकनी बनाकर इसके साथ रक्त अम्लाइय ताम्र (Red oxide of copper) ४७॥ भरी, अम्लाइव नीलक घटिया (Oxide of cobalt or zaffre) २॥ भरी क्रकस मार्टिस (Crecus murtis)३॥ भरी, सुहागा ७॥ भरी अम्लाइव सोनो, चांदी और पारा आध आध सेर मिला कर गलावे और गलाते वक्त तांबेको कलमसे मिलाता जाय, फिर इस मिश्रको घड़ियामें भरकर मृत्तुन चूल्हेमें (जिसमें बर्तनी भुनी जाती है) रखकर २४ घंटेकी आंच देवे । पीछे निकालकर बुकनी कर ले ।

लाल मीना ।

(१) पुटको रक्ताम्लाइव या समाम्लाइव ताम्र मिलाकर गहरा या हल्का रंग करे । यदि आंचपर मीनेका रंग सब्ज या ऊदा हो जाय तो समझना चाहिये कि तेज आंचके सबबसे थोड़ा सा तांबा पराम्लाइव हो गया है । ऐसी अवस्थामें कोई चीज, जिसमें अंगारका मिलाव हो (जैसे चरबी अथवा कोयला) मिलाकर गर्म करनेसे रङ्ग पलट कर लाल हो जायगा ।

(२) काच या पुटको अम्लाइय या चोर किर्ण सोनेके नोन

(oxide or salt of gold) अथवा बैंगनी निधरनिया कैसियसकी (Purple precipitate of cassius) मिलाकर या अलग अथवा लाल रंग करनेसे कुछ कुमदाने की सो या जरा बैंगनी आभा मारता लाल रंग होगा। यह मीना जब बनाकर चूल्हेसे निकाला जाता है उस वक्त इसमें कोई रंग नहीं रहता पर फिर जब फूकनीसे गलाकर चीज पर फैलाया जाता है उस वक्त लाल रङ्ग उभड़ आता है।

(३) हीराकस (भूना हुआ) १ हिस्सा अंक ५ का पुट ६ हिस्सा और रक्ताम्लाइड लोहा (Red oxide of iron) ३ हिस्सा लेकर बनानेसे घोर लाल रङ्ग होगा।

(४) रक्त गान्धिल लोहा (Red sulphate of iron) २ हिस्सा पुट अंक १ का ६ हिस्सा और सफेदा असल (white lead) २ हिस्सा मिलाकर बनानेसे हल्का लाल रङ्ग होगा।

गुलाबी मीना।

बैंगनी मीना या इसके रङ्ग वाले मसाले १-१ हिस्सा पुट अङ्क ८ और चांदीका लवण या अम्लाइड रजत १ हिस्सा मिलाकर गलावे।

स्वच्छ मीना। सिर्फ पुट।

उजला बैंगनी मीना।

(१) बैंगनी मीना १ हिस्सा, लाल मीना अंक २ वाला १ हिस्सा और पुट ६ हिस्सा मिलाकर गलावे।

(२) सोनिस या सादिय पुट (जिसमें नमक या खार भी मिला हो) जितना चाहे लेकर उसे पराम्लाइड धूसरिनसे मिलावे। जितना गहरा रंग करना हो उतना ही ज्यादा धूसरिन दे। जैसा धूसरिन अच्छा अम्लाइड होगा वैसाही अच्छा रंग आवेगा। इस बातका खयाल रहे कि मीनेमें चिकनी या और कोई कज्जिल चीज इसके साथ मिलने न पावे।

सफेद मीना।

(१) रांगा २ हिस्सा और सीसा १ मिलाकर भस्म करे। इस भस्मका १ हिस्सा, अच्छा कलमी कांच (Crystal glass)

वा पुट २ हिस्सा, धुसरिन (manganese) एक या दो रत्ती इन सबको पीसकर एक सङ्ग गलावे और जब गल जाय साफ जलमें डाल दे। इसी प्रकार तीन चार बार गलावे इस बातका खयाल रहे कि गलाते वक्त इसमें धूआं वा धूल लगने पावे तथा अम्लाइय लौहका हिस्सा भी न मिले। यह मीना बहुत ही सफेद होगा।

(२) कङ्कुलिनकी राख (Diophoretic antimony)१ हिस्सा और अच्छा काच (जिसमें सीसा धातु न हो) ३ हिस्सा मिलाकर गलावे; बहुत अच्छा सफेद रंग होगा।

(३) सीसा ३० हिस्सा और रांगा ३३ हिस्सा इन दोनोंको ऊपर लिखी रीतीसे भस्म करे। फिर उस भस्मका ५० हिस्सा और चकमक पत्थर ५० हिस्सा मिलाकर बुकनी करे और इस मिश्रणमें १०० हिस्सा पिष्ठिन लवण (Salt of turtar) मिलाकर गलावे यह मीना बहुत अच्छा होता है।

सफेद मीनेके लिये जो सब मसाले लिये जायं वे शुद्ध और साफ हों। कोई मिलाव उनमें न हो। क्योंकि यदि कोई ऐसा मिलाव हो जो रंग दे तो सफेद मीना खराब हो जायगा। उस पर भी रंग आवेगा। अगर इन क्रियाओंमेंसे कोई क्रिया शुद्ध मसालेको अच्छे तौर पर की जायगी तो बहुत अच्छा सफेद मीना बनेगा।

जर्द मीना।

(१) बढ़िया जर्द मीना बनाना और मीनोंसे कठिन है। इस मीनेमें पुट बहुत ही कम पड़ता है। और जो पड़ता भी है तो वह सब धातुय अवस्थाका होता है। नीचे हम कई रीतियां जर्द मीना बनानेकी देते हैं।

(१) पुट, अम्लाइय सीसक और थोड़ा सा रक्ताम्लाइय लौह मिलाकर गलावे।

(२) सीसक और रांगकी राख, मुर्दासङ्ग, कङ्कुलिन और साफ बालू—सब अढ़ाई अढ़ाई भरी और शोरा १० भरी मिलाकर गलावे और बुकनी करे। इस बुकनीको पुटके साथ मिलाकर गलावे और बुकनी करे।

(३) श्वेताम्लाह्व कज्जलिन (White oxide of antimony) फिटकरी और नौसादर एक एक हिस्सा, शुद्ध सफेदा (Carbonate of lead) १ से ३ हिस्सा, सबको पीसकर मिलावे और इतनी आंच दे कि नौसादर फट जाय। फिर चूर कर ले। खूब सफेद और चमकदार रङ्ग होगा।

(४) रक्त सीसक यानी भकरा सेन्दुर ८ भरी, अम्लाह्व कज्जलिन और रांगा (Oxide of antimony & tin) दोनोंको मिला कर भस्म करके १ भरी और इन दोनोंके साथ पुट १५ भरी मिलाकर गलावे।

(५) शुद्ध अम्लाह्व रजत वा और किसी रजतका नोन (Pure Oxide of silver or other salt of silver)पुटके साथ मिलाकर गलावे। अम्लाह्व रजतके बलाया और नोन रजतका मिलाया जा सकता है पर गलाते वक्त ठीक ठीक धान उतारना बड़ा कठिन हो जाता है। अम्लाह्व रजतका पतला गाफ गले मीने पर फैला देनेसे ही जर्द रंग हो जाता है। मीने पर नयक या चूर फैला कर थोड़ी आंच देकर निकाल ले और ऊपर जो परदा चांदीका हो अलग करके भीतरका मीना जर्द रंगका काममें लावे। यह रंग अच्छा जर्द होगा।

मीना साधारणतः दो प्रकारका होता है; अलङ्कारिय और उपकरणिय। अलङ्कारिय मीना जड़ाऊ तथा और और सोनेके गहनों पर किया जाता है और उपकरणिय मीना रसोईके तथा और सब बर्तनोंमें किया जाता है। अलङ्कारिय मीना काच सा स्वच्छ और आबदार होता है और उपकरणिय मीना अस्वच्छ और कम आबका होता है। अलङ्कारिय मीनेमें स्वच्छता और आब लाने और जल्दी गलानेके लिये अम्लाह्व सीसक बेशी डालते हैं पर उपकरणिय मीनेमें अम्लाह्व सीसक या सीसकके और नोन रङ्ग कम देना चाहिये। अगर दे भी तो बहुत थोड़ा; क्योंकि जिस बर्तनमें सीसकके नोन मिले मीनेका प्रलेप होता है उसमें खट्टी चीज रखनेसे खटाई उस मीनेको जल्दी खा जाती है।

अलङ्कारिय मीना। यह प्रायः इसी क्रमसे बनाया जाता है

सब्ज आभाका आमेज रहता है। ऐसे काचके साथ थोड़ा सा कृष्ण अम्लाइद धूसरिन मिलाकर गलानेसे यह ऐब जाता रहता है। इसका कारण और कुछ नहीं है यह मसाला चुम्बकिय अम्लाइद लोहको (Magnetic oxide of iron) अम्लजन देकर सम-लाइद धूसरिन हो जाता है। इस समाम्लाइदका कोई असर काचके रंग पर नहीं पड़ता। कभी कभी थोड़ा थोरा वा संखोयम नोषित ऊपर लिखे मसालेके बदले डाल देते हैं इससे भी यही असर होता है और लोहेको पलटकर सिम्मलाइद लोह (Sesqui oxide of iron) बना देता है, इन तीनों मसालोंमेंसे धूसरिन ज्यादा असर करता है। इसका कारण यह है कि लोहे और धूसरिनसे (manganes) जो अलग अलग रंग पैदा होते हैं उनके एक दूसरे पर प्रत्युभूति रखनेके सबब काचका रंग उड़ जाता है। क्रोमिय अम्लाइद (Chromic oxide)—काच वा मीनेपर बढ़िया सुर प्यारा सब्ज रंग लाता है। नीलक अम्लाइद काच वा मीने पर नीला रंग लाता है और अम्लाइद नीलकम और धूसरिन (Oxide of cobalt & manganes) दोनों मिलाकर काच वा मीना रंगनेसे काला रंग देगा। ताम्रिक अम्लाइद [Cuperic Oxide] (ता २ अ) सब्ज रङ्ग और ताम्र अरुलाइदसे एकसा सुहावना लाल रंग लाता है और नगोंमें तथा मीनेमें जो रेसे चमकते दिखाई देते हैं वह और कुछ नहीं तांबेके परमाणु: अलग अलग होनेके सबब धातुकी चमक है, यशदिय अम्लाइद (Uranic oxide) नगोंमें तथा मीनोंमें एक प्रकारका धुंधला रंग लाता है। बहुत प्रकारकी आभायुक्त जरद रंग अम्लाइद रजत (oxide of silver), और अम्लाइद कज्जलिन (oxide of antimony) के मिलावसे होता है। इसके अलावे जर्द रंग महीन अंगारसे (कोयला Charcoal) तथा स्वर्ण अमाख और सुहाग, रांगके मिलावसे सुन्दर माणिक्य का रंग होता है।

हम पहले कह आये हैं कि उपकरणिय मीना उतना अच्छा नहीं जितना अलङ्कारिय मीना होता है। इसके अलावा इस मीनेको उतनी भानताकी (स्वच्छता transparency की) जरूरत नहीं

यथिक धुंधला काच हो तो अच्छा है। मीनां उसी कांचको कहते हैं जो जल्दीसे गल जाता है और जिसमें एक प्रकारका सफेद पदार्थ मिला रहता है। जितनी तापिमामें (temperature) या काच गलेगा उस तापिमामें उसके न गलनेसे सब कांचमें धुंधलापन जाता है; जैसे रङ्गाम्लजाइद (Stannic oxide) का धातुर इस प्रकार बनाये; १ भाग रांग या रांग और १ से ६ भाग सीसा मिलाकर हल्की आंच पर गलावे। इन मसालोंको लोहेके पैसे पर गलावे तो क्रमसे ऊपर जो मलाई पड़े उसे उतार ले इसी प्रकार धातु मलाई होकर भस्म रूपमें हो जायगी। इस भस्मके साथ बालू और खार (soda या potash सज्जीका या सुहागा) मिलाकर गलावे। इन दोनों मसालोंके मिलानेका वजन बहुत प्रकारका है, कुछ नीचे लिखते हैं। साधारणतः ४ हिस्सा रङ्ग भस्म और १७ हिस्सा सीसा भस्म लेकर चकमक पत्थर या बिल्लौरकी बुकनी १७ हिस्सा और २ भाग शुद्ध सज्जीका मिला कर पुट बनावे। रङ्गाम्लजाइद (Stannic oxide) के बदले और कोई पदार्थ पुटमें धुंधलापन लानेके लिये व्यवहार किया जा सकता है। जैसे हड्डीका भस्म (Bone ash) कज्जलम अम्लाइद (Antimonous oxide) व संखियाम्लोषिद (Arsenious anhydride) भी कभी कभी मीनोंमें धुंधलापन लानेके लिये पुटमें व्यवहार करते हैं। इन पुटोंको रंगानेके लिये उक्त धातुज अम्लाइद (Metalic oxide) मिला कर रंगा जाता है। रंगे हुए इन पक्के पुटको मीना कहते हैं। धातुओं पर जिस रंगका मीना करना हो उसी मीनेकी बुकनीको कूचीसे भांति बर्तन पर लगावे या हाथसे बुरक दे, पर ऐसा लगाना चाहिये कि सब स्थान पर एक समान और एक ही अन्दाजसे मोटाई सी पड़ जाय। फिर सूखनेके बाद भट्ठा सुखावे ले।

१ कल की मीनेकी बनावटका कोईके पुतली पर मीना किया उतना अच्छा नहीं होता। इसके बनानेकी तरकीब यह है पत्थर या बिल्लौरकी बुकनी और सुहागा बुकनी मिला रख कोई नहीं [c.s) मैं सीसा नहीं] और कांच

स्पार (felspar) मिला कर खूब महीन करे। इस मिश्रको जलमें घोल कर गाढ़ा गाढ़ा कूचीसे बर्तनों पर एक समान पोतस लगावे, पर लगानेके पहले बर्तनोंमें गान्धिक द्रावकके घोलमें (diluted sulphuric oxide) धोले; फिर साफ जलमें धोकर द्रावकका अंश दूर कर दे जिससे बर्तनों पर अम्लाइयका लेवा साफ होकर लोहा सफेद हो जाय। तब यह मसाला लगावे।

मसाला। उक्त मसालेके साथ सज्जी भस्म, सुहागा और पोटाश्च यद्धाम्लाइद मिला कर बर्तन तर रहते ही तूलीसे या ब्रुश कर पोतस लगावे और सुखावे; जब सूख जाय तो चूल्हेमें सीसा गलावे। बर्तन पर रंग करनेके सीसेके साथ सीसाम्लाइद नहीं देना चाहिये। क्योंकि इसके मिलावसे यह सीसा खट्टा लगनेसे खराब हो जाता है। सीसाम्लाइदके मेलसे कांचमें चमक जवाहरात-की सी आती है। और कांच जल्दी गलता भी है पर यही ऐब है कि खटाई सीसे पर असर कर जाती है। सीसाम्लाइद नकली जवाहरात बनानेके काममें तथा अलङ्कारिय सीसेमें व्यवहार किया जाता है।

कांच पर रंगीन नक्काशी करना।

—:o:—

प्रायः कांचके बर्तन पर उसी रंगदार कांचसे बेल बूटे काढ़े जाते हैं जो जल्दीसे गल जाते हैं। इस बेल बूटे काढ़नेका सिद्धान्त ठीक वैसा ही है जैसा कि पीतलके बर्तनों पर पक्की झाल देनेका। जिस पानसे झालना होता है वह पान ऐसा बनना चाहिये कि बर्तनसे कम आंच पर गल जाय और गलानेके बाद ऐसा हो कि साधारण आंच पर फिर न गले। अब यह पान थोड़े जलमें घोलकर कूंचीसे शीशे पर लगा दिया जाता है और आंच पर

रख कर यह पात्र गलाया जाता है तो गलकर जोड़के सन्दोंमें भ जाता है तथा ठण्डा होने पर ऐसा थाम लेता है कि फिर उ जगहसे नहीं हटता, वैसे ही कांचसे रंगदार नक्काशी काढ़ी जात है। जिस रंगके फूल पत्ते इत्यादि बनाने हों उक्त मीनोंमेंसे उस रंगका मीना लेकर बुकनी करे; फिर इस बुकनीको जैसा पा जलमें गाढ़ा गाढ़ा घोलकर लगाते हैं वैसे ही इसे गाढ़ा घोलक रंगाये रंगके फूल इत्यादि कांचके बर्तनों पर बनावे। फर्क इतन ही है कि पात्र जलमें घोलकर लगाते हैं। इसे तारपीनके तेलमें घोलकर कांचके बर्तन या तख्ती पर तूली या कूचीसे नक्काशी काढ़े। बाद नक्काशीकी चीजोंको इतनी आंच दे कि मीना गल जाय पर कांचका बर्तन न गले। जब मीना ठीक गल जाय तो और आंच न दे। इन बर्तनोंको वा तख्तोंको या तो उसीसे धीरे धीरे ठण्डा होने दे या दूसरे कमरेदार चूल्हेमें रखता जाय जिसमें धीरे धीरे ठण्डा हो, नहीं तो जल्दी ठण्डा करनेसे कांच फूटक जाता है। दूसरे दिन सबको निकाल ले और काममें लावे।

ऊपर जितनी रीतियां मीना इत्यादि बनानेकी लिखी गयी हैं उन सबका ठीक ठीक उतरना बहुदर्शिता पर निर्भर करता है। बिना १० । २० बार बिगाड़े नवीन मनुष्य एकाएक सिद्ध काम नहीं हो सकता।

नग बनानेकी शैली।

इस कांचको बनानेके लिये सज्जीका (Soda) के बदले बलुका इसलिये मिलाया जाता है कि कांचमें नीली आभा न आ जाय; क्योंकि सज्जीकाके मेलसे कांचमें नीली आभा आ जाती है। बलुका (Potash) सिकासित (Silicates] बिल्लौर) और अम्लाइव थीन (Oxide of lead अम्लजनसे मिला सीसा) मिलाकर नगका कांच बनता है। अम्लाइव थीनके मिलनेसे कांचमें गाढ़ता और प्रतिफलित और विकीरण शक्ति बहुत बढ़ जाती है। इसके साथ ही साथ कांच जल्दीसे गलने लगता है। ऐसा कांच जिसपर चमक और उक्त लक्षणोंका समावेश हो वह नग बनानेके उपयोगी है। उक्त कांच नरम होनेके सबब इसके नगों पर जल्दी

पहल काटा जा सकता है। सीसेके मिलावके काचमें यह ऐब होता है कि जल्दीसे घिस जानेके सबब यह रूखा पड़ जाता है और प्रायः रंग बदलता है। इन उपसर्गोंका समावेश प्रायः उसी काचमे होता है, जिसमें क्षार का (Alkali) हिस्सा बेशी मिला रहता है। क्षार काचमें मिले रंगदार मसालोंको खा जाता है और जो ऐसा काच किसी गन्धाद्रवसे लगाकर रखा जाय तो रंग काला पड़ जाता है। Tagadry के मतसे मसालोंका अन्दाज इस तौर पर होना चाहिये ;—"स २ म ७ सिक्र, ६ सिक्र २" अर्थात् वसुका एक भरी धोनाम्लाइद एक भरी और सिकता ६ भरी। इस परिमाणसे सब मसाला मिलाकर घड़ियामें काच बनाकर नग बनावे। इस काचमें जो रंग देना हो उसी रंगका सीसा मिला कर रंग दें।

भूल सुधार।

पृष्ठ	पंक्ति	अशुद्ध	शुद्ध
२	२८	सबकी यही वस्तु मा है	सब इसीसे बनाये जाते हैं।
५	१	स्प्रि	स्प्रिंग
५	२१	घुली हुई	घुलनेवाली
८	३	नीचो	ऊंची
८	५	ढाई	कढ़ाई
९	१	वासो रस	रस
११	१६	फुटकी	फुटकी ऊंची
१२	१०	इंच	फुट
१२	२६	जलाने	गलाने
१३	१५	३८ B	२८ B
२१	५	वस्तुक	वसुक
३२	२३	बीचमें	तले
३६	१४	आवर्तव	आवर्त्तन